तमसो माँ ज्योतिर्गमय

या कुन्देन्दु तुषारहार धवला या शुभ्र वस्त्रावृता।
या वीणा वर दण्ड मण्डितकरा या श्वेत पद्मासना।।
या ब्रह्माच्युत शङ्कर प्रभृतिभिः देवैः सदा वन्दिता।
सा मां पातु सरस्वती भगवती निःशेष जाड्यापहा।।

Scanned with OKEN Scanner

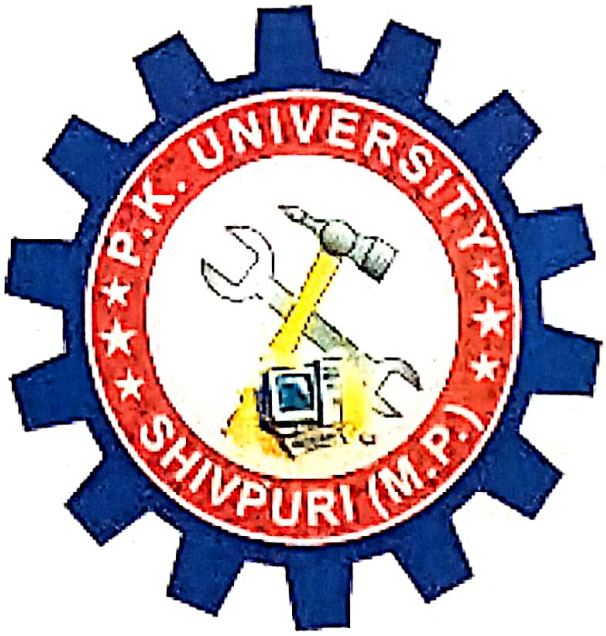

पी0के0 विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म0प्र0)

गृह विज्ञान विषय में पी-एच0डी0

उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध

Scanned with OKEN Scanner

किशोरावस्था में आक्रमकता : कारक एवं प्रभाव

पी0के0 विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म0प्र0)
गृह विज्ञान विषय में पी–एच0डी0
उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध–प्रबन्ध

द्वारा

प्रियंका
नामांकन सं0–161590404570

शोध निर्देशिका

डॉ० निधि अवस्थी
सहायक प्रोफेसर
गृहविज्ञान विभाग
आर्य कन्या महिला महाविद्यालय, झांसी

सहायक शोध निर्देशक

डॉ० विक्रांत शर्मा
विभागाध्यक्ष (कला संकाय)
पी0 के0 विश्वविद्यालय, शिवपुरी

पी0के0 विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म0 प्र0) पिनकोड–473665
वर्ष– 2021

Scanned with OKEN Scanner

Certificate of the Supervisor

This is to certify that work entitled **"किशोरावस्था में आक्रामकता : कारक एवं प्रभाव"** is a place of research work done by **Mrs. Priyanka** under our supervision of the degree of Doctor of Philosophy (Home Science) of P.K. University (M.P.) India.

I certify that the candidate has put an attendance of more than 240 days with me. To the best of my knowledge and belief the thesis:

I- Embodies the work of candidate herself.

II. Has duly been completed.

III- Fulfill the requirement of the ordinance relating to the Ph.D. degree (Home Science) of the University.

Signature of Co. Supervisor

HOD
Department of A
P.K. University
Shivpuri (M.P.)

Date:-

Signature of Supervisor

Date:- 24.12.2021

Scanned with OKEN Scanner

Declaration by the Candidate

I declare that the thesis entitled **"किशोरावस्था में आक्रामकता : कारक एवं प्रभाव"** is my own work conducted under supervision of Dr. Nidhi Awasthi Assistant Profession (Home Science) and Co-supervisor Dr. Vikrant Sharma, Head of Department (Arts) at P.K. University, Shivpuri (M.P.) Approved by research degree committee. I have put more than 240 days of attendance with supervisor at the center.

I further declare that to the best of my knowledge the thesis does not contain my part of any work has been submitted for the award of any degree either in the University of any other Univsersity without proper citation.

Date:- 24.12.2021
Place: - P.K. University
Shivpuri (M.P.)

Mrs. Priyanka
Priyanka
Signature of Candidate

Scanned with OKEN Scanner

Forwarding Letter of Head Institution

The Ph.D. thesis entitled **"किशोरावस्था में आक्रामकता : कारक एवं प्रभाव"** submitted by **Mrs. Priyanka** is forwarded to the university in six copies. The candidate paid the necessary fees and there are no dues outstanding against her.

Name Dr. Vikrant Sharma Seal HOD Department of Art P.K. University Shivpuri (M.P.)

Date 24/12/2021

Place P.K. University Shivpuri (M.P.)

(Signature of Head of Instituion where the)
Candidate was registered for Ph.D degree)

Signature of Co- Supervisor HOD Department of Art P.K. University Shivpuri (M.P.)

Date:-
Place:-

Signature of Supervisor

Date:- 24/12/2021
Place : -

Scanned with OKEN Scanner

आभार

शोध कार्य को सफल करने के लिए विभिन्न विद्वत्जनों के सहयोग व मार्गदर्शन की आवश्यकता होती है। बिना किसी सहयोग के कोई भी शोध कार्य पूर्ण नहीं हो सकता है। मैं उन सभी वांग्देवी के वरद् संतानों का आभार प्रकट करती हूँ कि जिनके ज्ञानचक्षु व महत्वपूर्ण सुझाव में यह कार्य सम्पन्न हुआ है। यह शोध मौलिक गवेषणापूर्ण है।

सर्वप्रथम मैं विद्या की देवी माँ सरस्वती के चरणों में अपना श्रद्धा सुमन समर्पित करती हूँ।

"या कुन्देन्तु तुषार हार धवला या शुभवस्त्रावृत्ता।

या वीणा वर दण्डमण्डित करा या श्वेतपद्मासना।।"

सरलता, उदारता एवं कर्त्तव्यपरायणता, विद्यावनत, विनेता एवं जीवन में सदाचार के प्रेरण स्रोत परम पूज्य चाचा जी श्री महिमा दयाल श्रीवास्तव को सादर समर्पित! सम्पूर्ण संसार को प्रकाश देने वाले परम् पिता परमेश्वर को भी मैं इस पावन अवसर पर नमन करती हूँ। इसके उपरान्त मैं अपने माता–पिता जी **स्व0 श्री परमानन्द श्रीवास्तव, स्व0 श्रीमती अन्नपूर्णा श्रीवास्तव** जो कि मुझे हमेशा प्रेरणा देते रहे, जबकि मेरे शोध कार्य पूर्ण होने के समय वो मेरे साथ नहीं हैं, उनका मैं हृदय से नमन करती हूँ।

शोध प्रक्रिया के दौरान कई प्रबुद्धजनों का सहयोग मुझे प्राप्त हुआ, उनमें से सबसे पहले मैं अपनी निर्देशिका, अपार स्नेही, ज्ञान की प्रतिमूर्ति, **डॉ0 निधि अवस्थी (सहायक प्रोफेसर)** गृह विज्ञान विभाग की हृदय से आभारी हूँ, जिन्होंने अपने बहुमूल्य क्षणों में से सभी जिम्मेदारियों को निभाते हुए वात्सल्य पूर्ण परिवेश में एक नूतन प्रेरणायुक्त दिशा–निर्देशन प्रदान किया। मैं पी0 के0 विश्वविद्यालय के माननीय कुलाधिपति **श्री जगदीश प्रसाद शर्मा,** कुलपति **प्रो० (डॉ०) रंजीत सिंह,** कुलसचिव **श्री हिमांशु पालीवाल,** प्रशासनिक निर्देशक **श्री जितेन्द्र कुमार**

Scanned with OKEN Scanner

मिश्रा, शोधपीठ अध्यक्ष **प्रो० (डॉ०) दिनेश बाबू**, शोधपीठ उपाध्यक्ष **डॉ० विक्रांत शर्मा** विभागाध्यक्ष (कला संकाय) पुस्तकालय अध्यक्ष **निशा यादव** एवं पी० के० विश्वविद्यालय के समस्त कर्मचारीगण को आभार व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से सहृदय से मदद की। मैं उनकी इस कार्य हेतु ऋणी रहूँगी। मैं सहायक शोधार्थी आदि का धन्यवाद करती हूँ। तत्पश्चात् **डॉ० वन्दना कुमारी**, (एसोसिएट प्रोफेसर) राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजीपुर ने मेरे शोध कार्य को बड़ी तन्मयता के साथ पूर्ण करने में सहयोग किया, इसके लिए मैं उनकी ऋणी रहूँगी।

मैं अपने बड़े भाई अतुल श्रीवास्तव, पत्नी श्रीमती प्रतिमा श्रीवास्तव, आशीष श्रीवास्तव पत्नी श्रीमती अर्चना श्रीवास्तव, आशुतोष कुमार श्रीवास्तव पत्नी श्रीमती कंचन श्रीवास्तव, बहन श्रीमती प्रीति श्रीवास्तव व पिता ससुर श्री नन्द किशोर लाल श्रीवास्तव एवं माता स्व० श्रीमती राधिका देवी की आभारी हूँ।

मैं अपने जीवन साथी **इंजीनियर श्री रविन्द्र कुमार श्रीवास्तव** की मन और वचन से आभारी हूँ कि आपने मेरे साथ इस शोध कार्य के लिए कठिन परिश्रम किया है। मैं अपने परिवार के सभी सदस्यों की भी आभारी हूँ जिन्होंने मेरा समय–समय पर सहयोग प्रदान किया।

सांख्यिकीय तथ्यों को हल करने के लिए मैं **डॉ० रमेश कुमार सिंह** पत्रकारिता एवं जन संचार विभाग (काशी विद्यापीठ, वाराणसी) एवं **प्रो० सुभाष कुमार यादव (विभागाध्यक्ष)** कम्प्यूटर विभाग, केन्द्रीय विश्वविद्यालय झारखण्ड के सहयोग को भी भुला नहीं सकती। मैं अपने भाई–बहनों व दोनों पुत्र **सजल, संयम** का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से भी इस शाोध कार्य को पूर्ण करने में सहयोग रहा है।

मैं इसके अतिरिक्त उन व्यक्तियों की भी कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने मेरे इस शोध कार्य में प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग किया, जिनका नाम सम्मिलित कर पाना सम्भव नहीं है। मैं **डॉ० कौशल कुमार श्रीवास्तव,** विभागाध्यक्ष,

Scanned with OKEN Scanner

अर्थशास्त्र, राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजीपुर को भी सदैव अपने शोध कार्य के लिए स्मरण करती रहूँगी। मैं केन्द्रीय शोध ग्रन्थालय काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी व केन्द्रीय शोध ग्रन्थालय, स्नातकोत्तर महाविद्यालय गाजीपुर के अधिकारी व कर्मचारीगण को भी धन्यवाद देती हूँ, जिन्होंने इस शोध कार्य हेतु मुझे अमूल्य पुस्तकों को उपलब्ध कराने में मदद की है। मैं अपने कम्प्यूटर टाइपिस्ट **पवन कुमार मिश्र** को भी धन्यवाद देना चाहती हूँ, जिन्होंने मुझे समय–समय पर अपना सहयोग प्रदान किया।

अन्त में शोध छात्रा स्वयं अपने पति की कृतज्ञता ज्ञापित करती है, जिसने कठिन परिश्रम व लगन से इस कठिन कार्य को साफल्य मण्डित किया तथा कठिन परिस्थितियों में भी धैर्य नहीं खोया।

Priyanka

शोधार्थी

प्रियंका

Scanned with OKEN Scanner

P.K.University

Ref. No. PKU/2017/06/30/RO-STUD/14. Dated 30-06-17

To,

Priyanka

Course Work Certificate

Dear Student,

This is to certify that **Priyanka** , (Reg.No. PH16ART001HS) son / daughter of Mr. /Ms. **Parmanand Srivastava** student of Ph.D. (HOME SCIENCE) has successfully passed the course work examination with 'A' grade from P.K.University, Karera, Shivpuri.

Registrar

Village - Thanara, Distt. Shivpuri (M.P.)
Conatct : 7241115081, 7241115082, 7241115083, www.pkuniversity.org / www.pkuniversity.edu.in

Scanned with OKEN Scanner

P. K. UNIVERSITY

SHIVPURI (M.P.)

University Established Under section 2(F) of UGC ACT 1956 Vide MP Government Act No 17 of 2015

Ref. No. PKU/2021/12/LIB-SCH/003-2017 Date 15.12.2021

TO WHOM IT MAY CONCERN

This is to certify that **Mrs Priyanka** Research Scholar in Faculty of Art at P.K. University, Shivpuri (M.P.) came and visited the Central Library of P.K.University for collecting the literature reviews for his research work. Her Research topic is "किशोरावस्था में आक्रामकता : कारक एवं प्रभाव"

I wish her all the best for all future endeavors.

Librarian
Central Library
P.K.University

CAMPUS : VILLAGE - THANRA, TEHSIL - KARERA, NH-27, DIST. - SHIVPURI (M.P.) -473665
Mob.: 7241115088, Email: registrar.pkuniversity@gmail.com

Scanned with OKEN Scanner

दूरभाष : 0548-2220252
फैक्स : 0548-2222087

स्नातकोत्तर महाविद्यालय गाजीपुर

रा.मू.प्र.प. (यू.जी.सी.) द्वारा B श्रेणी प्रदत्त
रवीन्द्रपुरी, गाजीपुर-233 001

पत्रांक .... दिनांक : 10-4-2021

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है की श्रीमती प्रियंका पुत्री श्री परमानन्द महाविद्यालय के केन्द्रीय शोध ग्रन्थालय में दिनांक 10/03/2021 से 10/04/2021 तक अध्ययन किया |

मैं इनके उज्जवल भविष्य की कामना करता हूँ |

डॉ(समर बहादुर सिंह)

प्राचार्य

10.4.2021

Scanned with OKEN Scanner

फोन : 2623473

अमीरुद्दौला पब्लिक लाइब्रेरी

कैसरबाग, लखनऊ (उत्तर प्रदेश)

पत्रांक : अ०प०ली०/ए०पी०एल०/2018 दिनांक : 1-10-2018

अध्ययन प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि श्रीमती प्रियंका पुत्री स्व० परमानन्द श्रीवास्तव ने अपने पी० एच० डी० डिग्री हेतु निर्धारित विषय "किशोरावस्था में आक्रामकता: कारक एवं प्रभाव" से सम्बन्धित पुस्तकों का इस पुस्तकालय में दिनांक 1-9-2018 से 30-9-2018 तक नियमित रूप से बैठ कर अध्ययन किया।

प्रियंका (गृह विज्ञान शोधकार्य)
पी० के० विश्वविद्यालय
मध्य प्रदेश
नामांकन नं०- PH16ART001HS
पंजीकृत सं० - 161590404570

Shashi
पुस्तकालयाध्यक्ष

अमीरुद्दौला पब्लिक लाइब्रेरी कैसरबाग

Document Information

Analyzed document	Thesis.pdf (D158853030)
Submitted	2023-02-17 05:47:00
Submitted by	Priyanka
Submitter email	bejjuban@rediffmail.com
Similarity	3%
Analysis address	library.pku.pkuni@analysis.urkund.com

Sources included in the report

W	URL: https://educationportal.org.in/wp-content/uploads/2020/08/handout9.pdf Fetched: 2021-04-23 17:56:42	8
SA	**Pratibha Dwivedi, Education, Full thesis corrected file.pdf** Document Pratibha Dwivedi, Education, Full thesis corrected file.pdf (D94742297)	17
SA	**Uma Chourasia.pdf** Document Uma Chourasia.pdf (D143141651)	10
SA	**Mahabir.pdf** Document Mahabir.pdf (D111597320)	3
SA	**2016_2073_Monika Aamare.pdf** Document 2016_2073_Monika Aamare.pdf (D100383633)	1
SA	**Satya Narain Prasad Deptt of Sociology Faculty of Social Science PU.pdf** Document Satya Narain Prasad Deptt of Sociology Faculty of Social Science PU.pdf (D150795511)	5
SA	**Geeta Ph.D Thesis Pol Science (173100347).pdf** Document Geeta Ph.D Thesis Pol Science (173100347).pdf (D140479175)	2
SA	**Anupam ,final thesis.pdf** Document Anupam ,final thesis.pdf (D65355898)	97
SA	**Sapna_Thesis_Sociology.pdf** Document Sapna_Thesis_Sociology.pdf (D155504504)	3
SA	**Sandhya Singh.pdf** Document Sandhya Singh.pdf (D78753092)	3
SA	**ch01.pdf** Document ch01.pdf (D93893073)	2

Scanned with OKEN Scanner

SA	**Dipak Ph.D Thesis Political Science (173100379).pdf** Document Dipak Ph.D Thesis Political Science (173100379).pdf (D117506386)	3
SA	**Madhvi Ganveer Ph.D Hindi Thesis.pdf** Document Madhvi Ganveer Ph.D Hindi Thesis.pdf (D114723098)	1
SA	**जवाहरलाल नेहरु.pdf** Document जवाहरलाल नेहरु.pdf (D126825427)	1
SA	**08 PSRCHAPTER__5.pdf** Document 08 PSRCHAPTER__5.pdf (D100186071)	3
SA	**Kunti Dissertation - Social anxiety.pdf** Document Kunti Dissertation - Social anxiety.pdf (D60231078)	8
W	URL: https://www.granthaalayahpublication.org/journals/granthaalayah/article/download/50_IJRG19_ART... Fetched: 2023-02-16 11:14:43	1
SA	**2013_2943_Prem_shankar_avasti.pdf** Document 2013_2943_Prem_shankar_avasti.pdf (D133512493)	1

Scanned with OKEN Scanner

Copyright Transfer Certificate

Title of thesis **"किशोरावस्था में आक्रामकता : कारक एवं प्रभाव"** (गृह विज्ञान)

Candidate's Name :- Mrs. Priyanka

COPYRIGHT TRANSFER

The undersigned hereby assigns to the P.K. University, Shivpuri all copyrights that exist in and for the above thesis submitted for the award of the Ph.D. degree.

Priyanka

Date 21.12.2021

Mrs. Priyanka

Name of Scholar

Note:- Howerver, the author may reproduce/publish or authorize others to reproduce, material extracted verbatim from the thesis or derivative of the thesis for author's personal use provided that the source and the University's copyright notice are indicated.

Scanned with OKEN Scanner

P.K.UNIVERSITY
SHIVPURI (M.P.)
University Established Under section 2f of UGC ACT 1956 Vide MP Government Act No 17 of 2015

Ref.No. RC/ PKU/21/09 Date: 15-12-2021

Certificate of Pre- Ph.D Submission

This is to certify that **Ms. Priyanka** is a Research Scholar, in P.K. University. The title of her thesis Work "किशोरावस्था में आक्रामकता: कारक एवं प्रभाव ". Her Pre Submission Defense Committee (PSDC) was held on 04-10-2021. She has successfully cleared the PSDC.

15/12/21

Dean Research
Research Cell
P.K. University

Dean Reserch
P.K. University
Shivpuri (M.P.)

ADD: VIL: THANARA, TAHSILKARERA, NH-27, DIST: SHIVPURI, M.P.-473665,
MOB: 7241115081 to 90, Email:registrar.pkuniversity @gmail.com

Scanned with OKEN Scanner

प्राक्कथन

किशोरावस्था विकास के क्रम की अति महत्वपूर्ण अवस्था है। यह अवस्था बालकों में क्रांतिकारी परिवर्तनों की अवस्था मानी जाती है। क्योंकि इस अवस्था में परिवर्तनों का स्वरूप इस प्रकार का होता है कि बालक को न तो बालक कहा जा सकता है और ना ही प्रौढ़। परिवर्तनों की प्रक्रिया के फलस्वरुप बाल्यावस्था के सभी शारीरिक व मानसिक गुण समाप्त हो जाते हैं और उनका स्थान नए गुण ले लेते हैं। यह परिवर्तन ही बालकों को किशारावस्था की ओर अग्रसर करते हैं। WHO(विश्व स्वास्थ्य संगठन) के अनुसार 10 से 19 वर्ष के आयु वर्ग में आने वाले व्यक्तियों को किशोर अथवा किशोरी कहा जाता है तथा 15 से 24 वष के आयु वर्ग को युवा कहते हैं। लेकिन भारत सरकार ने अपनी युवा नीति 15 से 35 आयु वर्ग को युवा तथा 13 से 19 वर्ष को किशोर माना है। किशोरावस्था वह अवस्था है जो बाल्यावस्था और प्रौढ़ावस्था के बीच में आती है यह वह अवस्था होती है जो बाल्यावस्था को प्रौढ़ावस्था से अलग करती है। किशोर सीधा प्रौढ़ावस्था में नहीं पहुंचता परंतु ऐसी अवस्था में पदार्पण करता है जब वह ना तो बच्चों में और ना ही प्रौढ़व्यक्तियों में गिना जाता हैद्य निश्चित ही ऐसी अवस्थाएं समस्याएं उत्पन्न करती हैंद्ययह काल भी सभी प्रकार की मानसिक शक्तियों के विकास का समय है। वैज्ञानिक अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि किशोरावस्था में बहुत सी समस्याएं देखी जाती हैं जिनका समाधान आवश्यक है जिससे किशोर तथा उसका सामाजिक समूह संतोष प्राप्त कर सके। साधारणतया किशोर अपने माता–पिता शिक्षक एवं समाज के लिए भी समस्या हो सकते हैं। बाल्यावस्था की अपेक्षा इस अवस्था की समस्याएं अधिक गंभीर होती हैं। किशोर स्वयं के लिए एवं द्सरों के लिए समस्या हो सकता है। वह अपने को नई भूमिका के साथ समायोजित नहीं कर पाता है और परिणाम स्वरूप भ्रांति अनिश्चित और चिंतित हो जाती है। इस स्टेनली हॉल के अनुसार किशोरावस्था एक नया जन्म है क्योंकि इसी के उच्चतर श्रेष्ठतर मानवीय विशेषताओं के दर्शन होते हैं। किशोरावस्था मे शारीरिक परिपक्वता ही नहीं बल्कि समस्त प्रकार की परिपक्वता पाई जाती है। किशोरावस्था को संक्रमण की अवस्था भी माना जाता है जिसमें व्यक्ति की गणना न तो बालक में के रूप में और न प्रौढ़। इस शोध में शोधकर्ता ने बालक के प्रारम्भिक अवस्था एवं उनकी दशा दिशा को अपनी शोध का विषय वस्तु बनाया है। बाल्यावस्था में बालक के आक्रमकता एवं उससे उत्पन्न समस्याओं एवं समाधानों का अध्ययन किया गया है जो आज समयाचिन है।

Scanned with OKEN Scanner

विषय सुची

क्र. सं.	विषय	पृष्ठ संख्या
	प्रथम अध्याय	
	प्रस्तावना खण्ड-क	1-113 1-51
1.	• भूमिका	1-3
2.	• अनुकरण	4
3.	• प्रतिस्पर्धा	4-5
4.	• नकारात्मक प्रवृति	5-6
5.	• आक्रमकता	6-7
6.	• स्वार्थपरता	7
7.	• कलह	7-8
8.	• सहयोग	8
9.	• प्रभुत्वशाली व्यवहार	8-9
10.	• सहानुभुति	9
11.	• सामाजिक अनुमोदन	9-10
12.	• साथी या मित्रमंडली	10-11
13.	• खेल	11
14.	• जीवनवाद	11
15.	• नेतृत्व	12
16.	• अध्ययन	12
17.	• संचार के साधनों के प्रति रूचि	12-13
18.	• आक्रमकता	13
19.	• आक्रमकता की परिभाषा	13
20.	• आक्रमकता के प्रकार	13
21.	• आक्रमकता के सिद्धान्त	14
22.	• आक्रमकता सहज प्रवृति के रूप में	14-15
23.	• बाह्य रूप उत्तेजित आक्रामकता	15-17
24.	• सीखी हुई आक्रमकता	17-18
25.	• आक्रमकता का आधार	19-21

Scanned with OKEN Scanner

26.	• एग्रेसिव का मनोवैज्ञानिक आधार	22-25
27.	• हताशा	25-27
28.	• आक्रामकता के रूप	27-29
29.	• आक्रामकता का विकास	29-30
30.	• आक्रमकता के स्त्रोत	30-37
31.	• किशोरावस्था की आक्रमकता	37-42
32.	• घरेलू हिंसा	42-43
33.	• टेलीविजन/इंटरनेट/सिनेमा की भूमिका	43-46
34.	• स्कूल का प्रभाव कारक	46-51
35.	• मीडिया की भूमिका	
	खण्ड – ख	**52-113**
1.	**विकास की अवस्थाएँ :-**	
2.	• गर्भकालीन अवस्थाएँ	52
3.	• शैशवावस्था	52-53
4.	• बचपनावस्था	53-54
5.	• बाल्यावस्था	54-55
6.	• यौवनारंभ	55-56
7.	• किशोरावस्था	56
8.	• प्रारम्भिक प्रौढ़ावस्था	56-57
9.	• मध्यावस्था	57-58
10.	• वृद्धावस्था	58-59
11.	• भाषा विकास के प्रारम्भिक रूप	59-60
12.	• विस्फोटक ध्वनियाँ	60-61
13.	• हाव-भाव	61
14.	• संवेगात्मक अभिव्यक्ति	61-62
15.	• भाषा विकास के उच्च रूप	62
16.	• बोध या समझ	62
17.	• शब्द- भण्डार का निर्माण	62
18.	1. सामान्य शब्द- भण्डार	62-63
19.	2. विशेष शब्द -भण्डार	63-65
20.	• वाक्य निर्माण	65-66

Scanned with OKEN Scanner

21.	• वाणी-विकृतियाँ	66-69
22.	• मानसिक विरचनाओं के प्रकार	69
23.	• दमन	69-70
24.	• उदात्तीकरण	70
25.	• क्षतिपूर्ति	70
26.	• तादात्मीकरण	70-71
27.	• युक्तकीरण	71
28.	• प्रक्षेपण	71-72
29.	• बौद्धिकरण	72
30.	• अकृतन	72-73
31.	• प्रतिक्रिया संसचना	73
32.	• विस्थापन	73-74
33.	**किशोरावस्था में होने वाले परिवर्तन :-**	
34.	• शारीरिक परिवर्तन	74-75
35.	• वाह्य परिवर्तन	75
36.	• आन्तरिक परिवर्तन	75-76
37.	**तुफान एवं प्रतिबल :-**	**76**
38.	• संवेगो का स्परूप	77
39.	• संवेगो की अभिव्यक्ति	77
40.	• संवेगात्मक परिपक्वता	77-78
41.	**सामाजिक परिवर्तन :-**	**78**
42.	• समकक्ष समूहो का प्रभाव	78-79
43.	• सामाजिक व्यवहार में परिवर्तन	79
44.	• नवीन सामाजिक समूह	79
45.	• मित्रों के चयन में नवीन मूल्य	79-80
46.	• सामाजिक स्वीकृति के नवीन मूल्य	80
47.	• नेताओं के चयन में नवीन मूल्य	80-81
48.	**रूचियो में पदिवर्तन :-**	**81**
49.	• मनोरंजन रूचियाँ	81
50.	• सामाजिक रूचियाँ	81
51.	• व्यक्तिगत रूचियाँ	81
52.	• शैक्षिक रूचियाँ	82

Scanned with OKEN Scanner

53.	• व्यवसायिक रूचियाँ	82
54.	• धार्मिक रूचियाँ	82
55.	**नैतिकता में परिवर्तन :-**	**82**
56.	• नैतिक संप्रत्ययों में परिवर्तन	82-83
57.	• नैतिक संहिता का निर्माण	83
58.	• व्यवहार का आन्तरिक नियन्त्रण	83
59.	**लैंगिक रूचियाँ तथा लैंगिक व्यवार :-**	**83-84**
60.	**आक्रमकता के प्रकार :-**	**85**
61.	• उकसाना	85
62.	• आक्रामक	85
63.	• सुरक्षात्मक	85
64.	• प्रतिक्रिया	85
65.	• उत्तेजना	85
66.	• प्रोत्साहन	85
67.	• स्वीकृत	85-86
68.	**किशोरावस्था की समस्याएँ :-**	**86**
69.	पूर्व किशोरावस्था की समस्याएँ	86-87
70.	प्रारंभिक किशोरावस्था की समस्याएँ	87
71.	उत्तर किशेरावस्था की समस्याएँ-	87-88
72.	• स्वावलम्बन की समस्याएँ	88
73.	• समकक्ष मित्रों के साथ सम्बंध की समस्या	88
74.	• विपरित लिंग	88
75.	• व्यवसाय	89
76.	• नैतिक एवं धार्मिक	89
77.	• संवेगात्मक परिपक्वता	89
78.	• सामाजिक अनुरूपता	89
79.	• विद्यालयी समस्यएँ	89
80.	• स्वास्थ्य समस्याएँ	90
81.	• मनोरंजनात्मक समस्या	90
82.	• पारिवारिक समस्याएँ	90
83.	**बालकों का स्वरूप :-**	**90-91**
84.	• शारीरिक विकलांग बालक	92

Scanned with OKEN Scanner

85.	• शारीरिक विकलांगता	92-93
86.	• प्रतिभाशाली बालक	93-94
87.	• सृजनात्मक बालक	94-104
88.	• मन्तिमना बालक	104-107
89.	• वंचित बालक	107-109
90.	• समस्यात्मक बालक	109-110
91.	• कुसमायोजित बालक	111-112
92.	• अपराधी बालक	112-113
	द्वितीय अध्याय **साहित्य का पुनरावलोकन**	**114-129**
	तृतीय अध्याय **शोध प्रारूप**	**130-139**
	चतुर्थ अध्याय **प्रदत आंकड़ो का तथ्य विश्लेषण**	**140-220**
	पंचम अध्याय **निष्कर्ष एवं सुझाव**	**221-230**
	प्रश्नावली	

Scanned with OKEN Scanner

प्रथम अध्याय

प्रस्तावना

Scanned with OKEN Scanner

प्रथम अध्याय

किशोरावस्था में आक्रामकता: कारक एवं प्रभाव

प्रस्तावना:-

किसी प्राणी के विकास के क्रम में किशोरावस्था अतिमहत्वपूर्ण अवस्था है। यह अवस्था प्राणी के भावी जीवन का आधार बनाती है और उसके प्रौढ़ जीवन की रुपरेखा निर्धारित करती है। विकास की दृष्टि से भी यह अवस्था क्रांतिकारी परिवर्तनों की अवस्था मानी जाती है, क्योंकि इस अवस्था में परिवर्तनों का स्वरुप इस प्रकार का होता है कि बालक को न तो बालक ही कहा जा सकता है और न ही प्रौढ़। परिवर्तनों की प्रक्रिया के फलस्वरुप बाल्यावस्था के सभी शरीरिक व मानसिक गुण समाप्त हो जाते हैं और उनका स्थान नए गुण ले लेते हैं। ये परिवर्तन ही बालकों को किशोरावस्था की ओर अग्रसर करते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार 10 से 19 वर्ष के आयु वर्ग में आने वाले व्यक्तियों को किशोर अथवा किशोरी कहा जाता है तथा 15 से 24 वर्ष के आयु वर्ग को युवा कहते हैं। लेकिन भारत सरकार ने अपनी राष्ट्रीय युवा नीति 15 से 35 आयु वर्ग को युवा तथा 13 से 19 वर्ष को किशोर माना है।

किशोरावस्था विकास की वह अवस्था है, जो बाल्यावस्था और प्रौढ़ावस्था के बीच में आती है। साधारणतया इसे 13 से 19 वर्ष तक का समय माना जाता हैं इसे क्रांतिक अवस्था कहा जाता है। यह वह अवस्था होती है जो बाल्यावस्था को प्रौढ़ावस्था से अलग करती है। किशोर सीधा प्रौढ़ावस्था में नहीं पहुँचता, परंतु ऐसी अवस्था में पदार्पण करता है, जब वह न तो बच्चों में और न ही प्रौढ़ व्यक्तियों में गिना जाता है। निश्चित ही ऐसी अवस्थाएं समस्याएं उत्पन्न करती हैं। यह काल भी सभी प्रकार की मानसिक शक्तियों के विकास का समय है। भावों के विकास के साथ-साथ बालक की कल्पना का विकास होता है। उसमें सभी प्रकार के सौंदर्य की रुचि उत्पन्न होता है और बालक इसी समय नए-नए और ऊँचे-ऊँचे आदर्शों को अपनाता है। किशोर भविष्य में जो कुछ होता है, इसकी पूरी रुपरेखा उसकी किशोरावस्था में बन जाती है। मानव जीवन में किशोरावस्था अत्यंत

महत्वपूर्ण होती है। यह वह समय होता है जब मानव विकास, सभी विकासात्मक क्षेत्रों में चरम सीमा प्राप्त करता है, जैसे शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक, सामाजिक आदि। इन विकासात्मक परिवर्तनों को पहले भी बहुत महत्व दिया जाता था। वैदिक काल में जब किशोरावस्था में पहुँचता था, उस समय विशेष समारोह आयोजित किये जाते थे। परिवर्तन की इस अवस्था में व्यक्ति व्यवहार की बचकानी आदतों को छोड़कर परिपक्व व्यवहार का प्रदर्शन करते हैं। इस समय उसे अपने पैरों पर खड़े होना पड़ता है अर्थात् बिना अभिभावक व शिक्षक के व्यक्तिगत रुप से दुनिया का सामना करने की योग्यता का विकास करना होता है। इसमें उसकी सफलता इस पर निर्भर करती है कि उसे किस प्रकार मानसिक रुप से तैयार किया गया है। किशोरावास्था शारीरिक परिपक्वता की अवस्था है। इस अवस्था में बच्चे की हड्डियों में दृढ़ता आती है, भूख काफी लगती है। कामुकता की अनुभूति बालक को 13 वर्ष से ही होने लगती है। इसका कारण उसके शरीर में स्थित ग्रंथियों का स्राव होता है। अतएव बहुत से किशोरबालक अनेक प्रकार की कामुक क्रियाएं अनायास ही करने लगते हैं। जब पहले पहल बड़े लोगों को इसकी जानकारी होती है, तो वे चैंक से जाते हैं। आधुनिक मनोविश्लेषण विज्ञान ने बालक की किशोरावस्था की कामचेष्टा को स्वाभाविक बताकर, अभिभावकों को अकारण भय का निराकरण किया है। ये चेष्टाएं बालक के शारीरिक विकास के सहज परिणाम हैं।

किशोरावस्था को समस्यात्मक आयु (Problem Age) स्वीकार किया जाता है। वैज्ञानिक अध्ययनों से ज्ञात हुआ कि किशोरावस्था में बहुत सी समस्याएं देखी जाती हैं, जिनका समाधान आवश्यक है। जिससे किशोर तथा उसका सामाजिक समूह संतोश प्राप्त कर सके। साधारणतया किशोर अपने माता-पिता, शिक्षक एवं समाज के लिये भी समस्या हो सकते हैं। बाल्यावस्था की अपेक्षा इस अवस्था की समस्याएं अधिक गम्भीर होती हैं। किशोर स्वयं के लिए एवं दूसरों के लिए समस्या हो सकता है। वह अपने को नई भूमिका के साथ समायोजित नहीं कर पाता है और परिणामस्वरुप विभ्रांति, अनिश्चित और चिंतित देखे जाते हैं।

पूर्व बाल्यावस्था में सामाजिक व्यवहार के कुछ रूप तो शैशवावस्था में सीखे गए व्यवहार के अवशेष होते हैं परन्तु वे व्यवहार, जो सफल समायोजन के लिए सर्वाधिक

महत्वपूर्ण होते हैं इसी समय प्रकट होते हैं, और विकसित होने लगते हैंय बाल्यावस्था के आरंभिक वर्षों में वे इतनी अच्छी तरह तो विकसित नहीं होते हैं तथापि या समय इन व्यवहारों के विकास का निर्णायक काल होता है, क्योंकि इस काल में आधारभूत समाजिक व्यवहारों के रूप व्रिधारित होते हैं (फ्रीमैन, 1953) तीन वर्ष से कम के बच्चों की सामाजिक अंतः क्रिया निम्न स्तर की होती है, तत्पश्चात सामाजिक अंतः क्रिया में तीव्रता से वृद्धि होती है। बालक में विकसित सामाजिक व्यवहार का स्वरुप और परिणाम (जैसे बालक में प्रभुत्व का विकास, नेतृत्व के गुण, अधीनता, आज्ञापालन का गुण या अनुपालन की संस्थिति एवं मात्रा), बहुत कुछ इस पर निर्भर करता है कि उसका परिवेश कैसा है? और बालक का लोगों से साथ सम्बन्ध कैसा है? रेयान (1949) ने विकाशील सामाजिक व्यवहारों का अन्वेषणात्मक अध्ययन किया तथा परिणामों में पाया कि 'स्कूल पूर्व आयु' में जो सामाजिक अभिवृत्तियां निर्मित हो चुकी होती हैं वे थोड़े से सुधार और परिवर्तन के साथ आगे भी बनी रहती है।

इस आयु में प्रकट होने वाले कुछ सामाजिक व्यवहार हैं, अनुकरण, प्रतिस्पर्धा, नकारवृति, आक्रामकता, कलह, सहयोग, प्रभुता, स्वार्थपरता, सहानुभूति तथा सामाजिक अनुमोदन की इच्छा, बालक में सामाजिक के साथ-साथ अनेक सामाजिक व्यवहार भी विकसित होते हैं, विकास मनोवैज्ञानिकों ने कुछ प्रमुख सामाजिक व्यवहारों को रेखांकित किया है जिनका उदभव या विकास पूर्व बाल्यावस्था में होता है।

अनुकरण:-

बच्चे माता-पिता को आदर्श मानते हैं, अतः बच्चे उनका अनुकरण करके अनेक सामाजिक व्यवहारों को सीखते हैं, माता-पिता के अतिरिक्त जब बालकों की रूचि दूसरे बालकों में पैदा होने लगती है, तब वे उनकी बोली, क्रियाओं और संवेगों का अनुकरण करने लगते हैं, इस तरह से आगे चलकर वे समूह के साथ तादात्म्य स्थापित करते हैं, अल्बर्ट बैन्डूरा ने सामाजिक अधिगम सिद्धांत के अतर्गत प्रतिरूप के व्यवहारों के अनुकरण द्वारा सामाजिक विकास के प्रक्रम को पुष्ट किया है, एक अध्ययन में बैन्डूरा, राँस एवं राँस (1961) ने बतया कि बालक का सामाजिक विकास अनुकरण प्राविधि द्वारा होता हैय इसमें इन्होंने बच्चों में आक्रामकता के अध्ययन के लिए एक 'बोबो गुड्डा (खिलौना)'

बच्चों के सामने प्रस्तुत किया तथा उनके सामने दो प्रकार के आक्रामक व्यवहार प्रस्तुत कियेद्य पहली दशा में प्रतिरूप ने गुड्डे के प्रति केवल वाचिक आक्रामकता जैसे-मारो, पीटो, फेंको इत्यादि की ध्वनि प्रस्तुत की तथा दूसरी दशा में शारीरिक आक्रामकता प्रदर्शित कियाद्य बच्चों ने प्रतिरूप के व्यवहारों का अवलोकन किया तत्पश्चात इन बच्चों को स्वतंत्र रूप से खिलौनों से खेलने के लिए छोड़ दिया गया। इन खिलौनों में बोबो गुड्डा भी था। परिणामों में पाया गया कि यद्यपि दोनों दशाओं में बालकों ने अनुकरण द्वारा आक्रामकता प्रदर्शित परन्तु शारीरिक आक्रामकता की दशा में अधिक आक्रामकता प्रदर्शित की, इन प्रयोगों के आधार पर निष्कर्ष निकाला गया कि बच्चे अनुकरण द्वारा अधिकांश सामाजिक व्यवहारों को सीखते हैं।

प्रतिस्पर्धा:-

दूसरों से आगे बढ़ जाने की इच्छा चैथे वर्ष (4 वर्ष) की आयु में दिखाई देने लगती हैद्य छोटे बालकों का अपनी चीजों की तारीफ करना प्रतिस्पर्धा का ही एक रूप है। ऐसा प्रायः दूसरे की उपस्थिति में होता है, समान्यताः ऐसे वयस्क या वृद्ध की उपस्थिति में जिसका ध्यान बालक आकर्षित करना चाहता है। गेविट्ज (1954) का मानना है कि छोटा बालक अपने समवयस्कों के बजाय किसी प्रौढ़ का ध्यान आकर्षित करने के लिए अधिक व्यग्र होता है तथा उनके ध्यान केन्द्र को पाने के लिए कोई भी तरीका अपना सकता है, प्रतिस्पर्धा परिवार के अन्दर बहुत होती है, विशेष रूप से जब सहोदरों में ईष्या होती है, ऐसे घरों में प्रतिस्पर्धा अधिक पायी जाती है जहाँ बालक, और बालिकाएं दोनों होने हैं या जहाँ माँ किसी बालक के प्रति अधिक अनुराग प्रकट करती अहि (बोसार्ड, 1953)।

नकारात्मक प्रवृत्ति:-

नकारात्मक प्रवृत्ति अर्थात बड़ों की आज्ञा का प्रतिरोध करना शैशवावस्था के अंत में होता है, इसका कारण घर के अन्दर अभिभावकों द्वारा बच्चें को अनुशासित करने के लिए दवाव बनाना या दवाब पूर्वक अनुशासन को लागू किया जाना, शामिल है। दो या तीन वर्ष की आयु में नकारवृत्ति अंह के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। शुरू के

अंह सम्प्रत्यय को त्यागने की आवश्यकता के प्रति यह एक अतिरंजित प्रतिक्रिया होती है। माता-पिता की आज्ञा का प्रतिरोध तीसरे और चैथे वर्ष के बीच पराकाष्ठ पर पहुँच जाता है और उसके बाद या प्रवृत्ति अधिकतर अन्य बालकों या दूसरे व्यक्तियों की आज्ञा न मानने का रूप ले लेता है। मास्टेक्स (1955) के अनुसार समायोजित बालक भी नकारवृत्ति प्रकट करते हैं, लेकिन उनकी नकारवृत्ति कुसमायोजित बालकों की अपेक्षा कम अवसरों पर तथा कम तीव्रता के साथ प्रकट होती है।

नकारवृत्ति का रूप विभिन्न आयु में, अलग-अलग बालकों में भिन्न-भिन्न होती है, प्रायः इसके जो रूप देखने में आते हैं उनमें कुछ शाब्दिक अनुक्रियाएँ तथा गति सम्बन्धी अनुक्रियाएँ होती है। बालक जब बड़े हो जाते हैं, तब वे बातों को न सुनने या समझने का प्रायः बहाना करते हैं, दिनचर्या में समय नष्ट करते हैं या उसकी बिलकुल उपेक्षा कर देते हैं। सुमायोजित बालक नकारवृति को प्रायः सीधे तरीके से व्यक्त करते हैं जबकि कुसमायोजित बालक व्यापक, सामान्यीकृत तरीके अपनाते हैं। चार और छह वर्ष के बीच में प्रायः शारीरिक प्रतिरोध घट जाता है और प्रतिरोध का शाब्दिक रूप बढ़ जाता है।

आक्रामकता:-

आक्रामकता कुण्ठा के प्रति एक सामान्य प्रतिक्रिया है, जिसे डोलार्ड एवं मिल्लर ने एक परिकल्पना के रूप में स्थापित किया। अत्यधिक आक्रामकता प्रदर्शित करने वाला बालक वह होता है जिसे बहुत ही कुण्ठा हो या जिसको आक्रामकता के कारण बहुत दण्डित किया जाता है। लेविन (1956) ने अपने प्रयोगों के आधार पर स्पष्ट किया है कि ऐसे बालकों में आक्रामकता विशेष रूप से प्रबल होती है जो शक्ति और प्रभाव चाहते हैं या किसी आक्रामक प्रौढ़ से अपना तादात्म्य स्थापित किये होते हैं। बल्टर्स (1957) ने प्रदर्शित किया है कि बालक, बालिकाओं की अपेक्षा सामान्यतः अधिक आक्रामक होते हैं।

लोकप्रिय बालक अपने आक्रामकता को खेल के सन्दर्भ में प्रकट करते हैं और उनका लक्ष्य कोई निश्चित व्यक्ति नहीं होता है, लेकिन अलोकप्रिय बालक किसी भी व्यक्ति पर जो भौतिक रूप से पास होता है, आक्रामक कर देता है। चाहे उस व्यक्ति ने उनका अहित किया हो या न किया हो बालक की आक्रामकता दिन के समय, खेल के समय

और अन्य बालकों से उसके परिचय के स्तर के अनुसार बदलती है। बालक का, अन्य बालकों से जितना परिचय होगा बालक में उसी के अनुरूप आक्रामकता होगी। यद्यपि थोड़ी बहुत आक्रामकता सभी प्रकट करते हैं, तथापि बालक और बालिकाएँ दोनों ही आक्रामक व्यवहार के बजाय स्नेहपूर्ण व्यवहार से सामाजिक सम्पर्क अधिक बनाते हैं। बच्चों में आक्रामकता दूसरे वर्ष से चैथे वर्ष तक बढ़ती है और फिर घटने लगती है।

आक्रामकता के रूप आयु के साथ परिवर्तित होते हैं। पहले बालक आक्रामकता होने पर रोता है और अन्य बालकों पर हमला करता है जबकि बाद में आक्रामकता का रूप परिवर्तित होकर गाली गलौज करना, दूर हट जाना तथा वयस्कों से शिकायत करना इत्यादि के रूप में परिलक्षित हो जाता हैं। पांच वर्ष के बालक की आक्रामकता का प्रदर्शन शारीरिक न होकर मौखिक हो जाती है। बालक जितना छोटा होगा उतना ही अधिक सीधे तौर पर अपने आक्रामक भावों को व्यक्त करेगा और रोएगा, बालक अन्य बालकों के द्वारा पसंद किये जाते हैं, वे नापसंद किये जाने वाले बालकों की अपेक्षा प्रौढ़ का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के लिए शाब्दिक आक्रामकता का प्रयोग कम करते हैं। वहीं अलोकप्रिय बालक शारीरिक या शाब्दिक आक्रमण के द्वारा माता-पिता या वयस्कों का ध्यान अपनी ओर उतना ही अधिक आकर्षित करने का प्रयत्न करते हैं।

स्वार्थपरता:-

छोटे बच्चे आत्मकेंद्रित होते हैं तथा स्वार्थपरता 4 वर्ष से 6 वर्ष के बीच अपनी चरमोत्कर्ष पर होती है। जीवन के प्रारम्भिक वर्षों में ही सबके ध्यान का केंद्र होने से छोटा बालक आत्मकेंद्रित हो जाता है और प्रत्येक बात को अपने ही ढंग से करना या मनवाना चाहता है, दूसरे बालकों के साथ खेलते हुए यदि बालक सीख जाता है कि स्वार्थपरता उसके रास्ते की रुकावट है, तभी वह अपने स्वार्थों को समूह के स्वार्थों के साथ एकाकार करने के कोशिश करता है। जब वह अपनी चीजों के बारे में अधिक उदार बनने लगता है तो अपने खेल के साथियों को भी उनका उपयोग करने देने के लिए तैयार रहता है फिर भी, उदारता प्रारम्भिक बाल्यावस्था में अविकसित होती है।

कलह:-

पूर्व बाल्यावस्था में कलह सहयोगी खेल के अनुभव के आभाव में उत्पन्न होता है। जब बालक झगड़ता है तब वह दूसरे बालकों के खेल खिलौने को छीनना, हाथ पैर चलाना, दांतों से काटना इत्यादि व्यवहार प्रदर्शित करता है, यद्यपि इस समय बालक अत्यधिक उद्वेलित होता है तथापि उद्वेलन की यह अवस्था बच्चे में प्रायः थोड़ी देर तक ही रहती है। शांत होने के पश्चात् बालक अपने समूह के बालकों (जिसके साथ वह खेल रहा है) से मित्रवत व्यवहार करने लगता है। बालक जितना ही छोटा होगा अन्य बालकों से होने वाले झगड़े की संभावना उतनी ही कम होगी, तीन वर्ष की आयु में यह कलह अपनी पराकाष्ठ पर पहुँच जाता है, कालान्तर में सामाजिक समायोजन में सुधार के कारण झगड़ों की तीव्रता और आवृति में कमी आ जाती है। सियर्स (1972) ने स्पष्ट किया है कि लड़के, लड़कियों की अपेक्षा अधिक झगड़ालू होते हैं। चार वर्ष के बालक, दो वर्ष के बालकों की अपेक्षा अधिक लड़ते हैं तथा वे झगड़े में डराना या भयभीत करने का प्रयास करते हैं, किन्तु जैसे-जैसे वे बड़े होते जाते हैं उनके झगड़े की आवृति कम होती जाती हैं। (सीगल एंव लावेन, 1884) अन्य बालकों से सामाजिक सम्पर्क जितना ही अधिक होगा झगड़े की संभावना उतनी ही अधिक होगी। इसके बावजूद सामाजिकीकरण में झगड़े का विशेष महत्व होता है क्योंकि उससे बालक सीखता है कि अन्य बालक किस बात को सहन करेंगे और किस बात को नहीं सहन करेंगे।

सहयोग:-

छोटे बालक आत्मकेंद्रित होते हैं अतः दूसरे बालकों के साथ खेलने में वह कम ही सहयोग करने वाले होते हैं। बड़ों के साथ भी वे कम सहयोग करते हैं। तीसरे वर्ष के अन्त तक सहयोगी खेल और सामूहिक कार्य, सख्यां और अवधि की दृष्टि से बढ़ जाते हैं। अभ्यास से बालक अन्य बालकों से सहयोग करना और अधिकाधिक शांत तरीके से खेलना सीख लेता है। बॉल (1954) के अनुसार छोटे बालकों में दोस्ती जितनी पक्की होती है उनका खेल उतना ही सहयोगपूर्ण होता है।

प्रभुत्वशाली व्यवहार:-

प्रायः सभी बालकों में अपना प्रभुत्व दिखाने की जबर्दस्त प्रवृत्ति पायी जाती है। तीन वर्ष के बाद सामाजिक सम्पर्क बढ़ने से बालक के अंदर प्रभाविता भी बढ़ती है। पांचवें वर्ष के आस-पास बालक का प्रभावी व्यवहार अपने चरमोत्कर्ष पर होता है। जैसे-जैसे बालक का प्रभावी व्यवहार बढ़ता है वैसे-वैसे उसके एकाकी व्यवहार में घतोत्तरी होती जाती है किन्तु अधीनता के व्यवहार में होने वाला परिवर्तन नाम मात्र ही होता है।

प्रभुत्वशाली व्यवहार जैसे-रौब दिखाना, नेतृत्व या प्रभुत्व का प्रदर्शन आदि का विकसित होना या न होना बालक के पर्यावरण पर निर्भर करता है। मन्मरी (1950) ने प्रयोगों के आधार पर या स्पष्ट किया है कि 'स्कूल पूर्व आयु में, दूसरों के साथ खेलते समय लड़कियाँ लड़कों से अधिक प्रभावी व्यवहार व्यक्त करती हैं।

सहानुभूति:-

दो से तीन वर्ष का बालक दूसरों की पीड़ा, दुःख, दुखांत कहानियों, दुर्घटनाओं आदि के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करने की योग्यता नहीं रखता। तीन वर्ष के बाद बालक व्यक्ति की वेदना को पहचाने लगता है। बालक अपनी सहानुभूति दूसरों की सहायता करने की कोशिश करके, कष्ट के कारण को हटाने की कोशिश करके, दूसरों को यह खबर देकर कि अमुक व्यक्ति विपत्ति में पड़ा हुआ है तथा उपाय का सुझाव देकर प्रकट करता है। लेकिन, कभी-कभी बालक असहानुभुतिपूर्ण अनुक्रियाएँ भी करता है, जैसे विपत्ति में पड़े हुए व्यक्ति को देखकर हंसना (ग्युरेल एवं सेमिन, 1952)

सामाजिक अनुमोदन:-

शिशु की तरह छोटा बालक भी दूसरों से अनुमोदन-स्वीकृति प्राप्त करना चाहता है। शुरू में उसके लिए वयस्कों के अनुमोदन का अन्य बालकों के अनुमोदन से अधिक महत्व होता है। छोटा बालक प्रश्न पूछकर, टिप्पणी देकर और तत्काल अनुक्रिया करके बड़ों का ध्यान खींचकर उनका अनुमोदन प्राप्त करने का प्रयत्न करता है। लड़के पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों का ध्यान अधिक चाहते हैं।

छोटे बच्चे विभिन्न क्रियाओं में ध्यान आकर्षण द्वारा प्रश्न पूछकर टिप्पणी देकर और तत्काल अनुक्रिया करके वयस्कों का ध्यान खींचकर उनका अनुमोदन प्राप्त करने का प्रयास करते है, लड़के पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों का ध्यान अधिक चाहते हैं।

आयु वृद्धि के साथ, ज्यों दृज्यों समूह के साथ रहने में रूचि बढती जाती है त्यों-त्यों बालक के लिए साथियों का अनुमोदन बड़ों के अनुमोदन से अधिक महत्वपूर्ण होता जाता है। इसका परिणाम यह हो सकता है कि बालक शरारती और उपद्रवी हो जाता है। प्रायः बड़ों के अनुमोदन के बजाय अपने साथियों के अनुमोदन को पसंद करना बालक के समाज द्वारा स्वीकृति व्यवहार को अभिप्रेरित करता है।

साथी या मित्रमंडली:-

छोटे बालकों के साथियों की संख्या और विविधता सिमित होती है। उसके साथियों में अधिकतर परिवार के बड़े लोग, सहोदर और निकट पड़ोस के बच्चे शामिल होते हैं, बालक जब विद्यालयीय वातावरण में प्रविष्ट करता है तो उसके साथियों की संख्या में वृद्धि होती है। विद्यालयीय वातावरण में होने वाली मित्रता तथा उनसे समायोजन में घर परिवार में होने वाली मित्रता का बहुत प्रभाव पड़ता है, जब बालक के सहोदर समलिंगी होते हैं तब बालक को विपरीत लिंग के साथियों से हिलने-मिलने में कठिनाई अधिक होती है। यदि बालक अपने साथियों से आयु में छोटा होता है तो वह उनसे दबा रहता है तथा यदि वह अपने साथियों या सहोदरों से बड़ा होता है तो वह प्रायः प्रभावी होता है। चार वर्ष की आयु तक बालक लड़के या लड़की किसी के साथ खेलना पसंद करता है लेकिन जैसे-जैसे वह बड़ा होता जाता है अपने ही लिंग को पसंद करने की उसकी प्रवृत्ति बढ़ती जाती है। बालकों के मित्र सच्चे मित्र नहीं बल्कि खेल के मित्र होते हैं अतः इनकी मित्रता में स्थायित्व नहीं होता है। अध्ययनों के परिणाम दर्शाते हैं कि दस सप्ताह की अवधि के भीतर बालकों ने बालिकाओं की अपेक्षा अधिक दोस्त तथा सबसे ज्यादा परिवर्तन चैथे और छठे सप्ताह के बीच हुए, इसमें समलिंगी पसंद की शुरुआत दिखाई दी।

खेल:-

पूर्व बाल्यावस्था की आयु 'खिलौनों की आयु' है, इसका कारण यह है कि इस आयु में बालक के खेलने का सबसे प्रमुख साधन खिलौना होता है। बालक खिलौनों को सजीव मानता है तथा उनके साथ सजीवों जैसा व्यवहार करता है। सात वर्ष तक ही बच्चा खिलौनों के साथ खेलना पसंद करता है उसके बाद खिलौनों के साथ खेलने की प्रवृति घटने लगती है। मायर (1955) तथा विल्सन (1956) ने यह सिद्ध किया है कि जब खिलौनों का चुनाव आयु के और विकास के स्तर के अनुसार किया जाता है तब बालक खेल के मुश्किल होने पर भी अधिक समय तक खेल में लीन रहता है। खेल पर बुद्धि और लिंग का प्रभाव पड़ता है यथा-उत्कृष्ट बुद्धि के बालक रचनात्मक खेल या कार्य करना और ज्ञानवर्धक पुस्तकें न कि मनोरंजक पुस्तकों को पढ़ना अधिक पसंद करते हैं। रेनवाटर (1956) ने पूर्व बाल्यावस्था में लड़कों की खेल सम्बन्धी रुचियों को लड़कियों की अपेक्षा अधिक विस्तृत बताया है।

जीवनवाद:-

तीन वर्ष के बालकों में जीवनवाद का उदभव होता है। खेल के दौरान बालक अपने खिलौनों को सजीव मानते हुए उनके साथ वास्तविक जीवन की चीजों की छोटे पैमाने पर नकल कर, नाटकीकरण का प्रदर्शन करते हैं। तीन वर्ष के बालक गुड़िया या जानवरों से बातें करने का स्वांग या खाली कप से झूठमूठ में चाय पीना, चार वर्षीय बालक के नाटकीय खेल में परिस्तिथियों की झूठी नकल होती है जिसमें साथी तथा चीजें शामिल होती हैं, यथा, पुस्तकों से सुने हुए अंशों के दृश्यों का नाटक करना, अति बुद्धिमान बालक निम्न स्तर की बुद्धि के बालकों की अपेक्षा नाटकीय खेल अधिक करते हैं, (एमेन एवं रेनिसन, 1954)

नेतृत्व:-

पूर्व बाल्यावस्था में नेता अपने समूह में बौद्धिक एवं आयु की दृष्टि से बड़ा होता है। बड़ी आयु और श्रेष्ठ बुद्धि के कारण वह खेल के बारे में सुझाव देने में समर्थ होता है जिन्हें अन्य बालक आसानी से मान लेते हैं। पूर्व बाल्यावस्था में अधिकतर नेता दूसरों

की इच्छा का ध्यान न रखते हुए उनको धमकी देकर उनके व्यवहार पर काबू पाने की कोशिश करते हैं, जब नेता अधिक सख्ती करने लगता है तो उसका पद छिन जाता है और उसकी जगह पर दूसरे नेता का चयन किया जाता है। पूर्व बाल्यावस्था में लड़कियाँ प्रायः ऐसे समूह का न नेतृत्व करती हैं जिनमें लड़के भी होते हैं तथा लड़कियाँ अपने इस समूह में प्रभुत्वपूर्ण व्यवहार प्रदर्शित करती हाँ (सीगल तथा बैरेली, 1985)।

अध्ययन:-

बच्चे पढ़ने योग्य होने से पहले अपनी कहानी की पुस्तकों में तस्वीरें देखना और किसी से पढ़वाकर कहानियाँ सुनना पसंद करने लगते हैं। आयु में वह परियों, प्राकृतिक चीजों यथा पेड़, पक्षी, पशु आदि से सम्बन्धित कहानियों में अधिक रूचि लेता है। बालक काल्पनिक कहानियों को वास्तविक कहानियों की अपेक्षा अधिक पसंद करता है साथ ही वह भविष्य की घटनाओं से सम्बन्ध कहानियों को भी सुनना पसंद करता है। छोटे बालक कॉमिक्स की तस्वीरें देखना तथा उसे पढ़कर सुनना पसंद करते हैं। ये क्रियाएँ अध्ययन व्यवहार के उदभव की सूचक होती हैं।

संचार के साधनों में रूचि:-

पूर्व बाल्यावस्था में बालक टेलीविजन में मात्र वही कार्यक्रम देखते हैं जो विशेष रूप से बच्चों के लिए ही बनाये गए होते हैं। बच्चे जो कार्यक्रम पसदं करते हैं वे उन कहानियों से मिलते जुलते हैं जिन्हें पढ़ना वे पसंद करते हैं अर्थात् ऐसी कहानियों में जिसमें आदमियों और जानवरों से सम्बन्धित कपोल कल्पनाएँ होती हैं, उन्हें पसंद करते हैं। वे बालक जिन्हें खेलने में कम अवसर मिलते हैं तथा जिन्हें खेलने में आनन्द नहीं आता वे अपना खेलने से सम्बन्धित समय टेलीविजन देखने में देते हैं। अत्यधिक रेडियो सुनने या टेलीविजन देखने के दुष्परिणाम बालकों के दुःस्वप्नों और मानसिक तनावों के रूप में प्रकट होते हैं।

आक्रामकता:-

आक्रामकता हमारे दैनिक जीवन का एक हिस्सा है, लेकिन मनोवैज्ञानिक आक्रामकता को सिर्फ एक अर्थ से बाँधना मुश्किल है। आक्रामकता विविध रूप ले सकती

हैं, और हो सकता है यह दोनों शारीरिक रूप और ध्या मौखिक रूप से या गैर मौखिक रूप से व्यक्त की जा सकती हैं।

आक्रामकता लैटिन शब्द ऐग्ग्रैसियो (हमले) से आता है।

शास्त्रीयों द्वारा आक्रामकता का अध्ययन इस लिये किया जाता है क्योंकि इसका संबंध जानवरों पारस्परिक मेल तथा प्राकृतिक पर्यावरण में विकास

संबंधित है।

आक्रामकता की परिभाषा:- संज्ञा 1. बल द्वारा विशेष रूप से उसके क्षेत्रीय अधिकारय दूसरे राज्य, के अधिकारों का उल्लंघन करने में एक राज्य की कार्रवाई एक अकारण आक्रामक, हमला, आक्रमण सेना किसी भी विदेशी आक्रमण को रोकने के लिए तैयार है। किसी भी आक्रामक कार्रवाई, हमले, या प्रक्रियाय एक अतिक्रमण, किसी के अधिकारों पर कोई आक्रमण।

आक्रामकता के प्रकार:-

प्रभावशाली आक्रामकतारू कुछ प्राप्त करने के लिए आदेश से हानि पहुचाँना। भावनात्मक आक्रामकतारू अपने लिए हानि पहुचाँना।

आक्रामकता का सिद्धान्त:-

आक्रामकता शारीरिक रूप से एवं मनोवैज्ञानिक कारणों से हो सकती हैं। शारीरिक आनुवंशिक या सहज इरादों और मनोवैज्ञानिक किसी स्थिति में होने के कारण या लिंग भेद होने के कारण हो।

आक्रामकता सहज प्रवृत्ति के रूप में:-

कई लोगों को लगता है कि आक्रामकता मूल प्रवृत्ति है। भले ही शायद लोगों ने फ्रायड की मौत-वृत्ति के विषय में पढ़ा नहीं है। और अगर पढ़ा भी है तो शायद ही मौत-वृत्ति की धारणा को स्वीकार करें। लोकप्रिय स्तर पर आक्रामकता को एक जन्मजात आंतरिक रूप से निर्देशित विनाशकारी प्रवर्ती का एक बाह्य विस्थापना के रूप में इतना

नहीं देखा जाता है, बल्कि एक सार्वभौमिक बाह्य र्निदेशित प्रवर्ती, संभवतः एक उत्तरजीविता प्रवृत्ति से जुड़ा एक गुण के रूप, में जो जानवरों को मानव जाति के साथ एकजुट करती है। कई लोगों का मानना है कि मानव आक्रामकता को स्पष्ट समझने के लिए गैर मानव पशु दुनिया का अध्ययन लाभदायक हो सकता है। कोर्नाड़ लोरैंज, जिनकी १९६६ में आक्रामकता पर लिखी किताब ने प्रमुख प्रभाव बनाया। लोरैंज का अध्ययन विभिन्न पशु प्रजातियों, विशेष रूप से मछली और पक्षियों और थोड़ा गैर मनुष्य-सदृश जानवर पर आधारित है। लोरैंज ने इन विभिन्न प्रजातियों में एक प्रवृत्ति देखी, की वह अपनी ही प्रजाति के दूसरे समूहों से अतिक्रमण की कोशिश से क्षेत्र की रक्षा करते हैं, अपनी प्रजाति की मादा को पाने के लिए प्रतिद्वंद्वी को हराना और अपनी प्रजाति के नवजात एवं युवा आयू और रक्षाहीन सदस्यों की रक्षा करना। लोरैंज यह पातें हैं कि ऐसी आक्रामकता उस उपलब्ध पर्यावरण पर उसी प्रजाति के जानवरों में श्संतुलित वितरणश् का कार्य करती है। और यह जीन-पूल को लगातार मजबूती प्रदान करती है ओर लगातार सुधारती है, और नवजात एवं युवा सदस्यों के अतिजीवन की संभावना को बढ़ाती है। इन तीन तरीकों से, आक्रामकता प्रजातियों को नियमित रूप से इसे यह पर्यावरण के लिए अधिक अनुकूल एवं सुधारनें में मदद करती है। लोरैंज इस के अलावा आक्रामकता को, सामाजिक संरचना के विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका के लिए भी श्रेय देते हैं। आक्रामकता एक प्रवृत्ति को मानने वाले भेदक प्रभाव को आक्रामकता की अभिव्यक्ति का कारण मानते हैं। अनुभवजन्य अनुसंधान, हालांकि, इस पर शक डालता है। दुर्भाग्य से भेदक प्रभाव के सिद्धांत को मानने वाले गलत सिद्ध हुऐ। वह दम्पति जो आपस में बहस करतें हैं उन में हिंसक बनने की प्रवृत्ति अधिक होने की संभावना होती है। जो पति अपनी पत्नियों को धक्का देते हैं उन में अपनी पत्नियों को थप्पड़ और मुक्का मारने की सबसे अधिक संभावना रहती हैं। आपराधिक हिंसा के एक व्यक्ति की इस साल हिंसा करने की संभावना का सबसे अच्छा भविष्यवक्ता उसके पिछले साल के आपराधिक हिंसा का इतिहास है। हिंसा से हिंसा पैदा हो रही है बजाय इसके की वह कम हो।

बाह्य रूप उत्तेजित आक्रामकता:-

आक्रामकता का दूसरा सिद्धांत जन्मजात पूर्ववृत्ति से हट के बाह्य रूप की उत्तेजनाओं को आक्रामकता के स्रोतों के रूप में मानता है। केंद्रीय कल्पना यह है कि आक्रामकता परिभाषित उत्तेजनाओं, परिभाषित उत्तेजना जिसे हताशा कहते है। शास्त्रीय ग्रंथों में इस विषय में डोलार्ड और उनके सहयोगियों ने शुरू में साहसिक दो भागी अभिकथन की रचना की, जिसमें यह कहा आक्रामक व्यवहार की घटना का कारण हमेशा हताशा का होना माना गया, और यह कि हताशा का होना हमेशा आक्रामकता को किसी न किसी रूप में जन्म देता है। मानव व्यवहार जटिल और बहुआयामी है, कोइ भी उत्तेजना की हमेशा एक विशिष्ट व्यवहारिक प्रतिक्रिया होगी या विशिष्ट व्यवहारिक प्रतिक्रिया से पहले वही खास उत्तेजना घटी यह कल्पना करना असामान्य और साहसी है। और, वास्तव में, डोलार्ड और उनके सहयोगि इस मत पर शुरुआत से आलोचना के लिए तैयार थे। डोलार्ड और उनके सहयोगि हताशा को इस रूप में परिभाषित करतें हैं व्यवहार क्रम में उचित समय पर एक उकसाया लक्ष्य-प्रतिक्रिया की घटना के साथ एक हस्तक्षेप"। संभव है कि हम उकसावे द्वारा लक्ष्य प्रतिक्रिया जैसी भाषा से परिचित नहीं हो। हम आसानी से अपने संघर्षों के अनुभवों से समझ सकते है- थके हारे काम से घर आने के पश्चात भोजने ना मिलना, जिसकी वह हकदार हो वह पदोन्नति नहीं मिलना, वो बच्चा जिसे स्कूल में खेल के मैदान पर खेलने से बाहर रखा गया हो। बरकोविटज दो बदलने वाले व्यवधानों क्रोध और व्याख्या का इस्तेमाल करतें है। वह यह प्रस्ताव रखते है कि हर हताशा आक्रामकता को और उकसावा प्रदान करती है और बढ़ाती है, लेकिन इस उकसावे को यहाँ क्रोध के रूप में परिभाषित किया है, और क्रोध केवल आक्रामकता को जन्म देगा जब उपयुक्त संकेत या कारण मौजूद हों। यहाँ, बरकोविटज इस बात कि अनुमति देता है व्यक्ति यह सीख लेते हैं कि क्रोध को आक्रमकता द्वारा व्यक्त करना अनुचित है और इसलिए जब हताशा का प्रोत्साहन तीव्र हो तब भी आक्रमकता की संभावना कम हो जाती है। मानविय हिंसा करने की क्षमता का प्राथमिक स्रोत कुंठा-आक्रामकता होना जान पड़ता है। जरूरी नहीं की हताशा ही हिंसा का कारण हो, कुछ व्यक्तियों के लिए लाभ की उम्मीदें हिंसा करने को प्रेरित करतीं हैं। हालांकि कारण

ख्ध्याल किए बिना हताशा से, प्रेरित गुस्सा, व्यक्तियों को आक्रामक होने को प्रेरित करता है, यदि कुंठा पर्याप्त रूप से लंबे समय तक रहे या तेजी से महसूस कि जाए, तो यदि निश्चित नहीं तो आक्रामकता घटित होने की काफी संभावना रहेगी। इस मायने में कुंठा-आक्रामकता की क्रियाविधि गुरुत्वाकर्षण के समरूप है, कुंठित व्यक्तियों में हिंसा करने जन्मजात प्रकृति की तीव्रता उनकी हताशा के अनुपात में होती है। कई कारण हैं जो व्यक्तियों के व्यवहार को विभिन्न परिस्थितियों में प्रभावित करतें हैं, व्यक्तियों के लिए उनके विश्वासों, आस्थओं, संकोच और सामाजिक वातावरण। वस्तुओं के लिए गुरुत्वाकर्षण, ऊर्जा और माध्यम के गुण जिसमें वे स्थित हैं। लेकिन उन व्यक्तियों के गुण के सन्दर्भ विचार करना भी कम संभव लगता है जो राजनीतिक हिंसा के लोगों को उत्तेजित करते हैं। ठीक उसी तरह जिस तरह वायुयान के निर्माण के लिए गुरुत्वाकर्षण सिद्धांत की अनदेखी करना।

सीखी हुई आक्रामकता:-

इस स्कूल की दलील को यह स्वीकार नहीं है कि आक्रामकता स्वाभाविक रूप से हताशा की वजह से है, बलकि आक्रामकता मोटे तौर पर एक सीखा हआ व्यवहार है। इस स्कूल के अनुयायि यह मानते हैं कि कई समाजों में आक्रामकता काफी हद तक अनुपस्थित है या आक्रामक व्यवहार नकल से होती है जबकी वहाँ कोई उत्तेजना निराशा नहीं है।

अल्बर्ट बानडुरा आक्रामकता के सामाजिक अधिगम सिद्धांत के एक प्रमुख शोधकर्ता, विचारक और नवोन्मेष है। उदाहरण के लिए उनके प्रयोग ने दिखाया है, कि बच्चों को जो आक्रामक वयस्क मॉडल का देखते हैं वे भी इस व्यवहार की नकल एक बिलकुल नई स्थिति में भी करते हैं। दूसरी तरफ नियंत्रित समूह के बच्चे ऐसा नहीं करते हैं, और पुनः इस ही प्रकार होगा जब मॉडल फिल्म पर होंगे। अल्बर्ट और वाल्टर्स इस ही तरह का अवलोकन एवं अध्ययन सामाजिक और व्यक्तित्व विकास (1963) में रिपोर्ट किया है। इस स्कूल का आक्रामकता पर सोच के निष्कर्ष को इस तरह अभिव्यक्त किया गया है, मानव आक्रामकता एक सीखा आचरण है, जैसे कि, अन्य तरह के सामाजिक व्यवहार, उत्तेजना, सुदृढीकरण, के अंतर्गत है और संज्ञानात्मक नियंत्रण।

लोगों ने कैसे सीखा की आक्रामक नहीं होना चाहिये? पेट्रीसिया ड्रेपर द्वारा प्रस्तुत उनके विचार में एक मॉडल कुंग कालाहारी रेगिस्तान के बच्चे पालन की प्रथाओं के हैं। ड्रेपर उस पर्यावरण में जिसमें बच्चों को आक्रामक प्रतिक्रियाएं से निरुत्साहित करने के कम से कम तीन पहलुओं को इंगित करतीं हैं।

1. जब दो छोटे बच्चे बहस या लड़ना शुरू करते हैं, वयस्क उन्हें सजा या, सीख नहीं देतेय वे बच्चों को अलग कर प्रत्येक बच्चे को एक विपरीत दिशा में ले जाते हैं। वयस्क उनको शांत करने की कोशिश करते हैं और विचलित बच्चे को अन्य चीजों में दिलचस्पी दिखाने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। इसी तरह का हस्तक्षेप युक्ति द्वारा बड़े बच्चों के साथ प्रयोग किया जाता है, गुट का नेता को दूर बुला के या वयस्क बड़े बच्चों समूह में शामिल हो जाते हैं।

2. "बड़े पैमाने में वयस्क शारीरिक दंड, और आक्रमक मुद्रा उपयोग नहीं करते और वयस्क समाज द्वारा आक्रमक मुद्रा के उपयोग से परहेज व उसका अवमूल्यन किया जाए"।

3. वयस्कों के द्वारा बच्चे में गुस्से के विस्फोट की लगातार अनदेखी अगर यह नुकसान नहीं करता है तब। ऐसे समय में एक बच्चे की हताशा तीव्र, होती है, लेकिन वह सीखता है कि क्रोध का प्रदर्शन वयस्क की ध्यान या सहानुभूति प्राप्त करने के लिए नहीं है।

जिस तरह से हताशा-आक्रामकता परिकल्पना का संशोधित संस्करण एक व्यक्ति को आक्रामकता के जवाब में मध्यस्थता करना सीखने में कुछ प्रभाव डालता है। इसलिए सामाजिक शिक्षा सिद्धांतकारों का यह मानना है कि जिस व्यक्ति आक्रामक प्रतिक्रियाओं सीखा है उस ही व्यक्ति का उन्हें इस्तेमाल करेना कि अधिक संभावना है। असल में, वे हताशा को आक्रामक व्यवहार को भड़कानेवाला एक संभवित कारण के रूप में देखते हैं, लेकिन इस बात पर जोर देते हैं कि आक्रामकता सामाजिक व्यवहार से सीखी जाती है बजाय इसके कि आक्रामकता या किसी भी अन्य प्रोत्साहन के लिए एक स्वतरू प्रतिक्रिया है। अंत में, हमने समाज में अक्सर होती आक्रामकता के तीन विशिष्ट रूपों की पहचान

की है। इस सदी के शुरू में आक्रामकता में एक असामान्य वृद्धि हुई है, जिस के परिणाम स्वरूप माना जा रहा है आतंकी गतिविधियों की संख्या में अभूतपूर्व वृद्धि देखी गई है।

स्त्रोतः मानव विकास का मनोविज्ञान, जेवियर समाज सेवा संस्थान

आक्रामकता का आधार:-

उस आक्रामक व्यवहार के मनोवैज्ञानिक कारण हैं जो अवलोकन, अनुभव और अध्ययन से स्पष्ट हैं। लेकिन यह सवाल कि क्या आक्रामकता का जैविक आधार है या यह सहज है, यह लंबे समय से बहस का विषय है। साहित्य का सर्वेक्षण और इस क्षेत्र में मौजूदा अध्ययनों से राय और विवादास्पद विचारों के अंतर दिखाई देते हैं।

लोरेंज (1960) अपनी पुस्तक में आक्रामकता परष् यह देखा है कि आदमी और अन्य जानवर सहज हत्यारे हैं और लड़ने की ललक उनमें पैदा होती है जो उन्हें सक्रिय रूप से लड़ने का मौका तलाशने के लिए मजबूर करता है। यह दृष्टिकोण आक्रामकता के जैविक आधार का समर्थन करता है।

टिम्बरजेन (1960) ने अपने लेखन में ष्ऑन वॉर एंड पीस इन एनिमल एंड मैनष् एक अलग दृष्टिकोण बनाया है। वह उसे बनाए रखता है ष्हालांकि यह विश्वास करना मुश्किल है कि आक्रामकता सीखी गई है और यह एक हद तक जैविक रूप से निर्धारित है, सही दृष्टिकोण आनुवांशिक और पर्यावरणीय कारकों दोनों की बातचीत के परिणामस्वरूप आक्रामकता को देखना होगा। दूसरी ओर मोंटेन्यू (1968) का मानना है कि मनुष्य और निचले जानवरों में बुनियादी प्रवृत्ति आक्रामकता में से एक नहीं है, बल्कि दूसरों के साथ संबद्धता और सहयोग

की है।

कुछ अन्य जांचकर्ता यह देखते हैं कि जानवरों और मनुष्यों में पर्यावरण की उत्तेजनाओं के लिए सकारात्मक और स्वस्थ प्रतिक्रियाएं विकसित करने की अधिक क्षमता होती है। लेकिन पर्यावरण के तनाव और तनाव उन्हें आक्रामक बनाते हैं।

कभी-कभी केवल जीवित रहने के लिए आक्रामक और शत्रुतापूर्ण व्यवहार के साथ आक्रामक उत्तेजना पर प्रतिक्रिया करता है। जब कोई किसी पर हमला करता है, तो यह स्वाभाविक है कि उसे अपनी सुरक्षा, संरक्षण और अस्तित्व के लिए जवाबी कार्रवाई करनी होगी। आक्रामक घटना होने के बाद प्रतिशोध ज्यादातर मनुष्यों द्वारा किया जाता है, जो बताता है कि इस प्रकार की बेल्ड आक्रामकता एक आत्म की रक्षा के लिए है।

इसलिए यह सहज प्रतिक्रिया की तुलना में अधिक सीखा हुआ व्यवहार है। मानव आक्रामक व्यवहार पर आगे के अध्ययन अलग-अलग संस्कृतियाँ इस तथ्य को इंगित करती हैं कि ऐसी संस्कृतियां हैं जिनमें प्रतिशोध बिल्कुल भी नहीं हो सकता है, हालांकि कुछ अन्य संस्कृतियों में प्रतिशोध बहुत जल्दी आ सकता है।

मीड और बेनेडिक्ट के अध्ययन इस दृष्टिकोण के समर्थन में शक्तिशाली सबूत पेश करते हैं। अराफेश जनजाति के लोग शांत और शांत, शांतिप्रिय, सहयोगी और विनम्र होते हैं। उनके लिए शायद जीवन गुजारना आसान है क्योंकि उनकी कुंठाएँ कम होती हैं और उनकी जो भी निराशाएँ होती हैं, वे उन्हें गैर-आक्रामक तरीकों से संभालना सीखते हैं।

दूसरी ओर, मुंडगामेर जनजाति आक्रामक, शत्रुतापूर्ण, भयंकर, युद्ध जैसे और असहयोगी है, क्योंकि वे भोजन और प्रेम की अपनी बुनियादी जरूरत में निराश हो चुके हैं और उन्हें आक्रामक तरीके से अपनी कुंठाओं को संभालने के लिए सिखाया जाता है। ज्ञसनबाीवदद का मानना है कि आक्रामकता सांस्कृतिक भिन्नता पर निर्भर करता है और मुक्त फ्लोटिंग आक्रामकता की प्रकृति इस पर निर्भर करती है।

दिन-प्रतिदिन की टिप्पणियों से यह भी पता चलता है कि विभिन्न संस्कृतियाँ सदस्यों के बीच व्यक्तिगत दूरी बनाए रखती हैं, जब वे एक दूसरे के साथ आमने-सामने की स्थिति में बातचीत करते हैं। कई शोध प्रमाणों से यह भी पता चलता है कि जब जानवर या लोग अंतरिक्ष, भोजन, पानी और अन्य सुख-सुविधाओं के अभाव में रहते हैं, तो वे आक्रामक व्यवहार करते हैं।

इस प्रकार आक्रामकता अत्यधिक पर्यावरणीय दबाव का परिणाम हो सकती है और इसका कोई सहज या जैविक आधार नहीं हो सकता है। इस प्रकार यह निष्कर्ष निकालना गलत होगा कि आक्रामक व्यवहार पूरी तरह से सहज, सहज और इसलिए अपरिहार्य है।

बल्कि यह माना जा सकता है कि मनुष्य और जानवरों को एक विशेष तरीके से व्यवहार करने के लिए जैविक रूप से पूर्वनिर्मित किया जाता है और एक ही स्थिति में उनकी आक्रामकता में व्यक्तिगत अंतर हो सकते हैं। लेकिन आक्रामक प्रतिक्रियाओं को बढ़ाने में पर्यावरणीय कारकों के महत्व को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए।

मनुष्यों के मामले में यह देखा गया है कि हालांकि आक्रामकता हताशा की मूल प्रतिक्रिया है, यह केवल एक ही नहीं है। हताशा के लिए अन्य प्रतिक्रियाएं भी हैं जैसे कि वापसी का व्यवहार, प्रतिगमन, युक्तिकरण आदि। इस प्रकार हताशा के लिए कई प्रतिक्रियाएं दृढ़ता से संस्कृति से निर्धारित होती हैं।

यहाँ तक कि एक निराशाजनक स्थिति को कैसे माना जाता है, इसे कैसे सहन किया जाता है, यह संस्कृति द्वारा निर्धारित किया जाता है। संस्कृति न केवल एक निराशाजनक स्थिति पर प्रतिक्रिया करना सिखाती है, बल्कि यह भी बताती है कि किसी को कितनी आक्रामकता दिखानी पड़ती है और उदाहरण के लिए, यदि कोई अधिकारी, अपने श्रेष्ठ अधिकारी के प्रति अत्यधिक क्रोध महसूस करता है, तो संस्कृति न केवल उसे सिखाती है कि वह कितना क्रोध करेगा। दिखाएँ, लेकिन यह भी कि वह कैसे क्रोध से निपटेगा जब एक स्थिति उसे गुस्सा दिलाती है।

इन सभी बिंदुओं से यह निष्कर्ष निकलता है कि भले ही आक्रामकता के आनुवांशिक और जैविक आधार को पूरी तरह से खारिज नहीं किया जा सकता है, यह एक तथ्य है कि आक्रामक प्रतिक्रियाएं बहुत अधिक सीखी जाती हैं। इस प्रकार, आक्रामकता वंशानुगत और पर्यावरणीय कारकों, आनुवंशिक और सांस्कृतिक कारकों के बीच बातचीत का परिणाम प्रतीत होती है।

एग्रेसिव का मनोवैज्ञानिक आधार:-

फ्रायड (1927) ने संघर्ष और विरोधी ताकतों के माध्यम से मानव व्यवहार को समझाने की कोशिश की। ऐसी ताकतें हैं जो हमें जीवित रखती हैं और ऐसी प्रवृत्तियाँ भी हैं जो हमें मौत की ओर ले जाती हैं। इन्हें जीवन वृत्ति और मृत्यु वृत्ति के रूप में जाना जाता है। मनोविश्लेषणात्मक उपचार के दौरान फ्रायड (1920) को इरोस और थान्टोस जैसे दो मूल आग्रहों और वृत्तियों की उपस्थिति का पता चला।

जबकि पहली वृत्ति का उद्देश्य अधिक से अधिक एकता स्थापित करना और उन पर दबाव डालना है, उन्हें बांधना है, दूसरी वृत्ति का उद्देश्य संबंधों को पूर्ववत करना और चीजों को नष्ट करना है। विनाश की वृत्ति का अंतिम उद्देश्य जैविक अवस्था में जीवित चीजों को कम करना है। इसीलिए इसे मृत्यु वृत्ति भी कहा जाता है।

मृत्यु वृत्ति को अन्यथा आक्रामकता की वृत्ति के रूप में जाना जाता है। ब्राउन ने इस संबंध में टिप्पणी की है ष्फ्रायड ने पाया कि मानव न केवल मूल रूप से रचनात्मक, परिरक्षक और जीवन की वृत्ति से प्रेरित था, बल्कि यह कि कुछ परिस्थितियों में, मनुष्य को नफरत के साथ-साथ प्यार, विनाश और निर्माण के साथ-साथ निर्माण भी किया जाता है।

आक्रामकता की वृत्ति कई ओवरट व्यवहार में व्यक्त की जाती है। जब आक्रामकता को अंदर किया जाता है, तो इसे गुप्त आक्रामकता के रूप में जाना जाता है। उदाहरण के लिए आत्महत्या का मामला। जब आक्रामकता को बाहरी स्थिति और व्यक्तियों के लिए निर्देशित किया जाता है, तो इसे हत्या जैसी अति आक्रामकता कहा जाता है। प्रारंभिक अवस्था में फ्रायड द्वारा आक्रमण की प्रवृत्ति बहुत विकसित नहीं थी।

लेकिन बाद में फ्रायड और उनके संबंधित ने इस पर काम किया और इसे विस्तार से समझाने का प्रयास किया। ब्राउन ने कहा कि शारीरिक रूप से मृत्यु वृत्ति उस बल का प्रतिनिधित्व करती है जो कार्बनिक जीवन को नष्ट करने और कार्बनिक पदार्थों को अकार्बनिक राज्य में वापस लाने के लिए जाता है।

मनोवैज्ञानिक रूप से मृत्यु वृत्ति शत्रुतापूर्ण और आक्रामक व्यवहार को जन्म देती है, स्व और जाति के विनाश के लिए। मृत्यु वृत्ति को विनाशकारी और आक्रामक बौद्धिक गतिविधि जैसे कि आलोचना, व्यंग्य और ताने भी व्यक्त किए जाते हैं।

फ्रायड के अनुसार, जब हम प्यार की इच्छा का विश्लेषण करते हैं, तो हम आक्रामकता की भी इच्छा पाते हैं। इस प्रकार एक सबसे अच्छा दोस्त दोस्त सबसे कड़वा दुश्मन बन जाता है जब दोनों बाहर गिरते हैं। फ्रायड और उनके छात्रों की राय थी कि आक्रामकता बचपन के दौरान अनुभव किए गए बुनियादी आग्रह की निराशा की प्रतिक्रिया के रूप में विकसित होती है।

अलेक्जेंडर के अनुसार, ईष्या के कारण प्यार को खोने के परिणामों का डर आक्रामकता को जन्म देता है। फ्रायड द्वारा उन्नत मौत वृत्ति के लिए जीवविज्ञानी वस्तुओं। उनका तर्क है कि जीवन वृत्ति किसी जीव को जीने के लिए प्रेरित करती है और जीने के लिए जो संभव है वह करती है।

यह इस कारण से है कि हम जीव हैं। यदि हम मृत्यु की कामना करते हैं, तो हमें जीव कैसे कहा जा सकता है? कुछ अन्य मनोवैज्ञानिक भी फ्रायड द्वारा उन्नत आक्रामक प्रवृत्ति के खिलाफ जाते हैं।

वे कहते हैं कि मृत्यु वृत्ति जीवन वृत्ति का एक हिस्सा है और इसलिए इसे अलग वृत्ति के रूप में पेश करना न्यायसंगत नहीं है। ब्राउन की राय है कि विनाशकारी लोगों द्वारा रचनात्मक आग्रह को बेअसर करने के माध्यम से हम इस दुनिया में मौजूद हैं।

मृत्यु तब होती है जब जीवन वृत्ति मृत्यु वृत्ति को बेअसर करने में सक्षम नहीं होती है। आक्रामक आग्रह आम तौर पर कामुक व्यवहार में पाए जाते हैं। सैडिस्टिक हत्याओं को कामुक प्रवृत्ति की विकृतियां कहा जाता है। प्यार और नफरत के सिद्धांत एक पेंडुलम की तरह हैं। इस सिद्धांत में भी कुछ कम प्यार करते हैं और कुछ कम नफरत करते हैं।

प्रेम और घृणा का चरम रूप पेंडुलम के झूलों के रूप में है। व्यक्तित्व का रचनात्मक और विनाशकारी व्यवहार क्रमशः जीवन और मृत्यु की प्रवृत्ति का परिणाम है।

मृत्यु वृत्ति तब तक बनती चली जाती है जब तक कि वह अति या गुप्त रूप से व्यक्त न हो जाए अर्थात बाह्य या आंतरिक रूप से आक्रामकता, आत्म-विनाश, आत्म-विनाश के चरम रूप में आत्महत्या हो।

फ्रायड और उनके अनुयायी आक्रामकता को पूरी तरह से उखाड़ फेंकने में विश्वास नहीं करते थे। उन्होंने हालांकि देखा कि स्थानापन्न आउटलेट की मदद से लोगों में सकारात्मक भावनात्मक लगाव को बढ़ावा देने से आक्रामकता की तीव्रता को कम किया जा सकता है, जैसे कि एडवेंचर्स में सगाई खेल पर्वतारोहण, तैराकी, सीखने केर्ट, जूडो आदि।

फ्रायड और उनके अनुयायियों का मानना है कि आक्रामकता एक वृत्ति है और सहज ड्राइव को बाद के मनोवैज्ञानिकों जैसे मिलर, डॉलार्ड और कई अन्य लोगों द्वारा अस्वीकार कर दिया गया है। उन्होंने प्रस्ताव दिया है कि यह एक हताशा से प्रेरित ड्राइव है।

बुनियादी आग्रह का फ्रॉड सिद्धांत इतना कड़वा और कभी-कभी अनुचित आलोचना था जैसा कि मनोविश्लेषण है। मिलर-डॉलार्ड और अन्य (1939) द्वारा प्रस्तावित हताशा-आक्रामकता परिकल्पना इस दिशा में एक महत्वपूर्ण योगदान है। यह परिकल्पना बताती है कि आक्रामकता हमेशा हताशा का परिणाम होती है।

मिलर ने इस परिकल्पना को श्वेत समूह द्वारा लगाए गए हताशा के परिणामस्वरूप अपनी प्रतिक्रिया का अध्ययन करने के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका के नीग्रोओं पर लागू किया। सीमाओं और इस आलोचना की बहुत आलोचनाओं का सामना करना पड़ा कि यह हताशा और इसके संभावित प्रतिक्रियाओं के क्षेत्र में सभी शोध का प्रारंभिक बिंदु है।

हताशा- आक्रामकता परिकल्पना निम्नलिखित को दर्शाती है-

(1) किसी लक्ष्य तक पहुँचने के लिए किसी व्यक्ति के प्रयासों को विफल करना उसके लिए एक आक्रामक ड्राइव को प्रेरित करता है जो बदले में उस व्यक्ति या वस्तु को घायल या नष्ट करने के लिए एक व्यवहार को ट्रिगर करता है जिससे हताशा पैदा हुई है।

(२) आक्रामकता की अभिव्यक्ति इसके लिए इच्छा को कम करती है।

परिकल्पना का मुख्य पहलू यह है कि आक्रामकता हताशा की प्रमुख प्रतिक्रिया है, हालांकि प्रतिगमन, वापसी, प्रतिक्रिया गठन, युक्तिकरण आदि जैसी अन्य प्रतिक्रियाएं हो सकती हैं। इसके अनुसार परिकल्पना आक्रामकता जन्मजात नहीं है, बल्कि यह एक सीखा हुआ व्यवहार है।

चूंकि निराशा हर समाज में कुछ हद तक कमोबेश सार्वभौमिक रूप से पाई जाती है, इसलिए इसे एक अभियान माना जा सकता है। मार्के और एर्विन (1970) आगे देखते हैं कि भले ही कुछ आनुवंशिक या जैविक कारकों की उपस्थिति, आक्रामकता में मनुष्य के मामले में इंकार नहीं किया जा सकता है, ये तंत्र मनुष्य के संज्ञानात्मक नियंत्रण में हैं।

एक विशेष मस्तिष्क की चोट वाले व्यक्ति उन स्थितियों के लिए आक्रामक रूप से प्रतिक्रिया कर सकते हैं जो सामान्य व्यक्ति के मामले में किसी भी आक्रामक प्रतिक्रिया को जन्म नहीं दे सकते हैं। यह इंगित करता है कि एक सामान्य व्यक्ति में संज्ञानात्मक नियंत्रण क्षमता होती है जबकि मस्तिष्क में घायल व्यक्तियों में इसकी कमी होती है।

सामान्य व्यक्तियों में वह आवृत्ति जिसके साथ आक्रामक व्यवहार व्यक्त किया जाता है, जो रूप लेता है और जिन स्थितियों में इसे प्रदर्शित किया जाता है, उन्हें सीखने और सामाजिक-सांस्कृतिक कारकों द्वारा बहुत अधिक निर्धारित किया जाता है।

निराशा और आक्रामकता के क्षेत्र में बाद के शोध कार्यों ने यह धारणा दी है कि निराशा-आक्रामकता की परिकल्पना को संशोधित किया जाना चाहिए। सामाजिक सीखने के सिद्धांत के समर्थकों, बंडुरा, बर्कोवित्ज और अन्य लोग मानते हैं कि एक उत्तेजना जो निराशा से उत्पन्न होती है, जरूरी नहीं कि आक्रामकता का कारण बनती है, लेकिन केवल एक खतरे की स्थिति से निपटने के लिए तत्परता की स्थिति पैदा करती है।

यह विभिन्न प्रकार की प्रतिक्रियाओं को ग्रहण कर सकता है, एक व्यक्ति ने अपने जीवन के पहले की अवधि में निराशाजनक स्थितियों का सामना करने के लिए सीखी गई प्रतिक्रियाओं के प्रकारों पर निर्भर करता है। इस प्रकार, वह आक्रामक हो सकता है या स्थिति से हट सकता है, चुप रह सकता है या वह दूसरों की मदद ले सकता है।

वह प्रतिक्रिया जो अतीत में उसकी निराशा को दूर करने में सबसे सफल रही है, दोहराई जाएगी। बंडुरा (1965) ने प्रदर्शित किया है कि आक्रामक प्रतिक्रियाओं को सुदृढीकरण या नकल द्वारा या मॉडलिंग द्वारा सीखा जा सकता है।

नर्सरी स्कूल के बच्चों पर एक अध्ययन में यह देखा गया कि जब एक वयस्क ने एक बड़ी गुड़िया के प्रति आक्रामक प्रतिक्रियाओं के विभिन्न रूपों को दिखाया, तो बच्चों ने नकल के माध्यम से समान आक्रामक प्रतिक्रियाएं दिखाईं।

इसके बाद उन्हें गुड़िया और कार्टून का उपयोग करते हुए आक्रामक मॉडलिंग के फिल्म संस्करण दिखाए गए। परिणामों ने कहा कि जिन बच्चों ने जीवन कार्टून चरित्रों का अवलोकन किया था, उन्होंने अधिक आक्रामक व्यवहार का प्रदर्शन किया। अनुवर्ती अध्ययनों से यह भी देखा गया कि बच्चों ने आठ महीने बाद भी इन आक्रामक प्रतिक्रियाओं को याद किया।

यह एक खुला तथ्य है कि अब-एक दिन अपराध और हिंसा बढ़ने का कारण टीवी और सिनेमा है। बड़े और छोटे स्क्रीन में दिखाए गए क्रूर हत्या, बलात्कार, अपराध और हिंसा दूसरों पर पर्याप्त प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। वे नकल द्वारा इस तरह के आक्रामक और हिंसक व्यवहार दिखाना सीखते हैं।

3. आक्रामकता के रूप:-

आक्रामक व्यवहार खुद को विभिन्न रूपों या प्रकारों में प्रकट कर सकता है। समाज द्वारा लगाए गए प्रतिबंधों और संयमों के कारण आक्रामकता को भी दबाया या दबाया या दबाया जा सकता है और कुछ समय बाद इसे स्वयं के प्रति निर्देशित किया जा सकता है, रोसेनजविग (1934) ने हताशा के लिए विभिन्न प्रकार की आक्रामक प्रतिक्रिया का पर्याप्त वर्गीकरण सामने रखा है।

(ए) एक्सट्रपुनिटिव- कुछ प्रतिक्रियाओं और प्रतिक्रियाओं में आक्रामकता को बाहरी वातावरण को निर्देशित किया जाता है जैसे कि दूसरों को दोष देना और इसे 'एक्स्ट्रापुनिटिव' कहा जाता है।

(बी) इंट्रापुनिटिव- जब निराश व्यक्ति अपनी आक्रामक भावनाओं को स्वयं के प्रति बदल देता है, तो उसे आत्मघाती प्रतिक्रिया के रूप में जाना जाता है, जिसे लोकप्रिय रूप से 'आत्म आक्रमण' कहा जाता है। यहाँ पीड़ित केवल हताशा के लिए खुद को दोषी ठहरा सकता है। आत्म-आक्रामकता का सबसे नाटकीय रूप आत्महत्या है।

(ग) अयोग्य- यह रोसेनजिग द्वारा वर्गीकृत आक्रामक प्रतिक्रिया का अंतिम प्रकार है जहां व्यक्ति पूरी तरह से दोष से बचने की कोशिश करता है और समस्या पर स्विच करने का प्रयास करता है। वह तर्क और तर्क द्वारा कुछ हद तक अपने तनाव को जारी कर सकता है। रोसेनजविग के इस वर्गीकरण में हताशा की प्रतिक्रिया के रूप में कम या ज्यादा विभिन्न प्रकार की आक्रामकता शामिल है।

आक्रामक व्यवहार भी दो मूल रूपों में प्रकट हो सकता है- अंतर-व्यक्तिगत और अंतर-समूह रूप। हत्या, हमला दंगे, लूटपाट आदि अंतर-व्यक्तिगत आक्रामकता के उदाहरण हैं। राष्ट्रों के बीच युद्ध, लोगों के समूहों के बीच टकराव अंतर-समूह आक्रामकता के उदाहरण हैं।

आक्रामकता के कुछ रूप भी होते हैं जिन्हें संस्थागत रूप से उन्नत किया जाता है। यह आक्रामकता का एक रूप है जिसे एक समूह या समाज की मंजूरी है। कानून तोड़ने वालों और अपराधियों को दी गई सजा इस श्रेणी में आती है। यह सजा कानून तोड़ने वालों के लिए अनुकरणीय बन जाती है। यह असामाजिक या आपराधिक कृत्यों में शामिल नहीं होने के लिए दूसरों को संकेत या चेतावनी देने के उद्देश्य से सम्मानित किया जाता है।

इस प्रकार के संस्थागत आक्रामकता को समाज की ओर से प्रतिशोध के कार्य के रूप में देखा जाता है। भीड़ की स्थिति के दौरान पुलिस द्वारा फाड़ या गोलीबारी या युद्ध में दुश्मनों को मार डालना, इस तरह के आक्रामक व्यवहार को महिमामंडित किया जाता है और यहां तक कि उन्हें पुरस्कृत किया जाता है क्योंकि उन्हें कानून द्वारा मंजूरी दी जाती है।

उपर्युक्त दो रूपों के बीच, एक रूप, समाज और कानून द्वारा स्वीकृत है, जबकि दूसरे में न केवल समाज का अनुमोदन है, बल्कि घृणा और दंड भी है। पारस्परिक हिंसा अवैध है और यह सजा के लिए फिट है। सामाजिक स्वीकृति के बिना और मानवीय मूल्यों और परंपराओं द्वारा स्वीकार किए बिना दूसरी अंतर-व्यक्तिगत हिंसा आक्रामकता में अपराध की भावना और चिंता पैदा

करती है।

4. आक्रामकता का विकास:-

ऐसा कहा जाता है कि जन्म के रोने में कुछ आक्रामकता है। रोने को कभी भी सकारात्मक और सुखद प्रतिक्रिया नहीं माना जाता है। जन्म के बाद जब ठंड या गर्म वातावरण के कारण नवजात रोता है, भूख की पीड़ा के कारण, यह क्रोध और भय के घटकों को इंगित करता है। लेकिन छह महीने से पहले यह स्पष्ट रूप से विभेदित नहीं किया जा सकता है।

8-9 महीने की उम्र में आमतौर पर बच्चा अजनबियों को डर दिखाना सीख जाता है और इस उम्र में वह खतरे के विभिन्न स्रोतों से अवगत होने लगता है और रोने में, यहां-वहां चीजें फेंकने में, चुटकी में, आंसू बहाने में अपनी आक्रामकता व्यक्त करता है। पसन्द।

जब वे बड़े होते हैं और हिंसा की कहानियां सुनते हैं, तो वे इसका अनुकरण करना भी सीखते हैं। धीरे-धीरे, जब वे पर्यावरण के साथ घुलमिल जाते हैं और पाते हैं कि उनकी कई जरूरतें पूरी नहीं हुई हैं, तो वे आक्रामक व्यवहार के संकेत दिखाते हैं।

उच्च मध्यम वर्ग के बच्चों पर एम्स (1966) के एक अध्ययन में यह प्रदर्शित किया गया था कि हिंसा की काल्पनिक विषयवस्तु उन कहानियों पर हावी थी, जो उन्होंने दो साल की उम्र से सही बताई थीं और पांच साल की उम्र तक ऐसा करती रहीं। उम्र बढ़ने के साथ धीरे-धीरे हिंसा बढ़ती है और यह पाया जाता है कि क्रोध, भावना के रूप में बच्चे को डर के बगल में अनुभव होता है जिसमें सबसे अधिक आवृत्ति होती है।

बच्चा अपने परिवेश में जितनी निराशाजनक स्थितियों का अनुभव करता है, उतनी ही हिंसा की गुंजाइश होती है। बच्चा अपने माता-पिता, संबंधों, पड़ोसियों और साथियों से भी बहुत आक्रामक व्यवहार सीखता है। वह जितना अधिक आक्रामक व्यवहार दिखाता है उतना निराश होता है। इस तरह की आक्रामकता को नियंत्रित करने के लिए, बच्चे को निराशा की स्थितियों में कम और कम उजागर करना पड़ता है।

5. आक्रामकता का स्रोत:-

निराशा की तरह, आक्रामकता शारीरिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक वातावरण का परिणाम हो सकती है। प्यार और स्नेह के नुकसान से उठी भावनात्मक असुरक्षा आक्रामकता का कारण बन सकती है। जिन बच्चों को प्यार नहीं किया गया है और ठीक से देखभाल की जाती है, जिन्हें अकेले छोड़ दिया जाता है, वे लंबे समय तक रोने की अनुमति देते हैं, जिन्हें ठीक से नहीं संभाला जाता है और उन्हें ठीक से खिलाया जाता है, प्रतिशोधी आक्रामकता से सजा पर प्रतिक्रिया करने की अधिक संभावना है।

जब एक बच्चे को होश आता है कि वह परिवार के लिए एक अवांछित अतिरिक्त है, जब उसे अपर्याप्त स्तन दूध मिलता है, जब उसे पर्याप्त पालन-पोषण नहीं मिलता है, जब वह उपेक्षित होता है और एक ऐसे वातावरण में रहता है जो उसके प्रति ठंडा और उदासीन है, तो अनिवार्य रूप से आक्रामकता के साथ प्रतिक्रिया करता है जब वह बड़ा होगा।

असुरक्षा और भावनात्मक अस्थिरता की उनकी भावनाएं बाद की कुंठाओं, छोटी या बड़ी बातों से खतरे में हैं। फ्रायड के अनुसार "असहायता के जैविक कारक खतरे की पहली स्थिति में लाते हैं और प्यार करने की आवश्यकता पैदा करते हैं जब मनुष्य को कभी भी त्याग नहीं करना होता है।

जीवन के पहले पांच साल निराशा के विकास में और इसलिए आक्रामकता पर फ्रायड द्वारा जोर दिया गया है। इस प्रकार इस्साक (1936) कहता है ज्ञान की कमी है,

समझ अभी तक शुरू नहीं हुई है, लेकिन चाहता है और इच्छाएं, भय और एंगर, प्यार और नफरत बहुत शुरुआत से ही हैं।

विकास की प्रक्रिया में, बच्चे पर आक्रामकता के लिए अलग-अलग स्कोप लगाए जाते हैं क्योंकि भारी निराशा के अनुभवों के कारण, खिला और उन्मूलन की प्रक्रिया के द्वारा मौखिक, गुदा और फालिक चरणों में निराशा विशेष रूप से लगाई जाती है।

बचपन में स्वच्छता और शौचालय प्रशिक्षण को एक महत्वपूर्ण कुंठा के रूप में पहचाना जाता है। इस प्रकार बचपन के दौरान असुरक्षा और जैविक असहायता में आक्रामकता का पहला और बुनियादी स्रोत। उत्कंठा भी ईर्ष्या के कारण उत्पन्न होती है।

इसके विपरीत, यदि बच्चा पूरी तरह से सुरक्षित महसूस करता है, तो वह निराशाजनक मुठभेड़ों में न्यूनतम आक्रामकता दिखाएगा। माता-पिता से अत्यधिक प्रेम और आश्रय प्राप्त करने वाले एक अति-उदार और अधिक सुरक्षित बच्चे का व्यवहार जिसका व्यवहार प्रतिबंधित या जाँच नहीं है, बिना किसी रोक-टोक के आक्रामक व्यवहार दिखा सकता है।

ऐसा बच्चा निराशा सहिष्णुता विकसित करने में विफल रहता है और उसकी आक्रामक प्रतिक्रियाएं हिंसक रूप ले लेती हैं। कभी-कभी ऐसा बच्चा अत्यधिक आक्रामक हो जाता है क्योंकि वह सजा प्राप्त करना चाहता है।

अकुशलता और विफलता की आंतरिक भावनाओं से क्रोध और शत्रुता हो सकती है। आक्रामकता इसलिए होती है जब व्यक्ति को अपनी कुंठा, असुरक्षा और हीनता की भावनाओं के साथ एक प्रमुख भूमिका से अलग किया जाता है। और अंत में, एक बच्चा आक्रामक व्यवहार दिखा सकता है क्योंकि यह एकमात्र तकनीक है जिसे उसने निराशाजनक स्थितियों को संभालने के लिए सीखा है।

जैसा कि पहले संकेत दिया गया है कि आक्रामकता का एक अन्य स्रोत संस्कृति और समाज है जिसमें बच्चा बढ़ता है। मीड और बेनेडिक्ट के अध्ययन इस दृष्टिकोण के समर्थन में शक्तिशाली सबूत पेश करते हैं। कुछ संस्कृतियाँ बहुत अधिक शांतिपूर्ण हैं और किसी भी प्रकार की हिंसा की सराहना नहीं करती हैं। बल्कि वे इसे अस्वीकार करते हैं।

कई अमेरिकी विचारकों और सामाजिक वैज्ञानिकों ने यह बात उठाई है कि आक्रामकता और हिंसा अमेरिकी संस्कृति के प्रमुख विषय हैं क्योंकि वे कहते हैं, यह छोटा इतिहास हिंसक घटनाओं से भरा है। कई अध्ययनों से यह भी संकेत मिलता है कि हिंसक और आक्रामक व्यवहार आमतौर पर निम्न वर्ग की संस्कृति का उत्पाद है।

हरलॉक (1975) के अनुसार, किशोरावस्था में विकासोचित क्रियाएँ व कार्य निम्न हैं-

1. बालोचित व्यवहार व आदतों का त्याग कर प्रौढ़ व्यवहार अपनाना,
2. प्राढ़ोचित ढंग से लैंगिक व्यवहारों का निर्वाह करना,
3. विपरीत लिंग के विरोध की भावना का त्याग व आकर्षण में वृद्धि करना,
4. संवेगात्मक अस्थिरता को संवेगात्मक स्थिरता व परिपक्वता में बदलना,
5. स्वतंत्र संवेगात्मक विकास करना,
6. आर्थिक स्वतंत्रता व व्यावसायिक रुचियों का विकास,
7. बौद्धिक योग्यता एवं नागरिक सामथ्र्य को शिक्षा के माध्यम से विकसित करना,
8. सामाजिक तथा नैतिक मूल्यों एवं व्यवहारों का विकास।

किशोरावस्था विकसित सामाजिक सम्बंधों की अवस्था होती है। इस अवस्था में किशोरबालक अत्यधिक क्रियाशील रहता है और उसकी अधिकांश क्रियाएं सामाजिक पृष्ठभूमि में ही होती हैं। किंतु उसके सामाजिक व्यवहारों का जो स्वरुप पूर्व किशोरावस्था में दिखाई पड़ता है, वह उत्तर किशोरावस्था में पहुँच कर परिवर्तित हो जाता है। किशोरावस्था में पदार्पण करने पर बालक व बालिकाएं दोनों के सामाजिक जीवन का क्षेत्र अत्यंत व्यापक हो जाता है। क्रो एवं क्रो के अनुसार, ''जब बालक 13 से 14 वर्ष में प्रवेश करता है, तब दूसरों के प्रति उसके कुछ दृष्टिकोण न केवल अनुभवों में बल्कि उसके सामाजिक सम्बंधों में भी परिवर्तन करने लगते हैं।''

ब्लेयर, जोंस तथा सिम्पसन ने किशोरावस्था को बालक के जीवन का वह काल कहा है जिसका जन्म बाल्यावस्था के अंत में होता है और उसकी समाप्ति प्रौढ़ावस्था के आरम्भ में होती है।

स्टेनली हॉल के अनुसार-किशोरावस्था एक नया जन्म है, क्योंकि इसी में उच्चतर, श्रेष्ठतर मानवीय विशेषताओं के दर्शन होते हैं। किशोरावस्था में शारीरिक परिपक्वता ही नहीं बल्कि समस्त प्रकार की परिपक्वता पायी जाती है। किशोरावस्था को संक्रमण की अवस्था ;।हम व िज्तंदेपजपवदद्ध भी माना जाता है, जिसमें व्यक्ति की गणना न तो बालक के रुप में होती है और न प्रौढ़ के रुप में।

किशोरावस्था को व्यक्ति के जीवन का एक स्थापित काल नहीं, बल्कि एक दौर के रुप में पहचाना जाता है। यह जानना आवश्यक है कि सारे किशोर एवं किशोरियाँ एक ही प्रकार के समूह मंे नहीं आते हैं। उनकी जरुरतें, उनके लिंग, विकास की स्थिति, जीवन की परिस्थितियों तथा उनके वातावरण की सामाजिक-आर्थिक स्थितियों के अनुसार बदलती रहती है। किशोरावस्था को किसी मनुष्य के जीवन का एक परिवर्तन काल माना गया है, जिसमें व्यक्ति बच्चा नहीं रहता, लेकिन बड़ा भी नहीं होता। यह एक ऐसा काल है, जिसमें व्यक्ति में बहुत से शारीरिक तथा मानसिक बदलाव आते हैं। इसके अतिरिक्त किशोरियाँ एवं किशोर अपनी सामाजिक आकांक्षाओं तथा ज्ञान में भी बदलाव महसूस करते हैं। शरीरिक बढ़ोत्तरी तथा विकास के साथ-साथ यौन विकास भी होता है, व्यक्ति के सही व गलत ढंग से सोचने की योग्यता का भी विकास होता है। शारीरिक बदलावों के कारण भावनात्मक तनाव होता है तथा स्वभाव में अचानक शीघ्र परिवर्तन आते हैं। छोटी-छोटी तथा बेवजह बातों पर मानसिक तौर पर परेशानी होना, इस आयु वर्ग की एक सामान्य विशेषता है। हार्मोंस के बदलाव के कारण यौन सम्बंधित विचार, चिड़चिड़ापन, चंचलता, गुस्सा तथा तनाव पैदा होता है। लड़के तथा लड़की को एक-दूसरे की तरफ आकर्षक, एक-दूसरे से घुलने-मिलने की और बातचीत करने की इच्छा होती है। माता-पिता, स्कूल व समाज इस बदलाव को अनदेखा कर देते हैं, जो कि दोनों पीढ़ियों की सोच में फर्क होने का मुख्य कारण है। साथ ही युवाओं द्वारा किए जाने वाले अपराधों का कारण भी काभी हद तक यही है।

जरफील्ड के शब्दों में- ''किशोरावस्था वह काल है, जिसमें विकासशील प्राणी बाल्यावस्था से परिपक्वता की ओर बढ़ता है।''

कारमाईकल के अनुसार ''किशोरावस्था जीवन का वह काल है, जहाँ से किसी अपरिपक्व व्यक्ति का शारीरिक व मानसिक विकास चरम सीमा की ओर बढ़ता है।''

बाल्यावस्था के उपरान्त आने वाली अवस्था को किशोरावस्था कहा जाता है। यह अवस्था बाल्यावस्था तथा युवावस्था के बीच की होती है।

कुल्हन ने स्पष्ट कहा है कि ''किशोरावस्था, बाल्यावस्था और प्रौढ़ावस्था के मध्य का परिवर्तन काल है।'' मानव विकास में किशोरावस्था का विशेष महत्व माना गया है। इस अवस्था में बनाए गए संतुलन पर ही आगामी जीवन की सफलता निर्भर करती है। इस काल में बाल्यावस्था वाली अस्थिरता प्रायः लुप्त होने लगती है। बालक के शारीरिक एवं मानसिक विकास में तीव्र व क्रांतिकारी परिवर्तन होने लगते हैं। इसी संदर्भ में स्टैलनी हाल ने लिखा है कि ''किशोरावस्था महान दबाव तथा तनाव, तूफान तथा विरोध का काल होता है।'' किशोरावस्था की मुख्य विशेषताओं का विवरण निम्नलिखित है-

1. किशोरावस्था के विकास के सिद्धांत
2. तीव्र शारीरिक परिवर्तन (बालकों में आवाज भारी/तेज होना, लड़कियों में मिठास आना आदि)
3. व्यवहार एवं स्वभाव में अस्थिरता
4. निराशा एवं उदासी
5. तीव्र मानसिक परिवर्तन
6. कल्पनाओं तथा भावनाओं की अधिकता
7. स्थायित्व एवं समायोजन की कमी
8. व्यवसाय करने की इच्छा

9. अध्ययन के प्रति लगाव

10. परार्थ भावना

11. विपरीत लिंगी व्यक्ति के प्रति सम्मान

12. अनेक समस्याओं का समाधान

हरलॉक के अनुसार ''किशोर को धीरे-धीरे किशोरावस्था के परिवर्तनों का ज्ञान हो जाता है और इस ज्ञान वृद्धि के साथ-साथ वह वयस्क व्यक्तियों की भाँति इसलिए व्यवहार करना प्रारम्भ कर देता है, क्योंकि वह वयस्क दिखाई देने लगता है। आक्रामतकता हमारे दैनिक जीवन का एक हिस्सा है। लेकिन मनोवैज्ञानिक आक्रामकता विविध रुप ले सकती है और हो सकता है यह दोनों शारीरिक रुप और मौखिक रुप से या गैर मौखिक रुप से व्यक्त की जा सकती है। आक्रामकता लैटिन शब्द ऐग्रैसियो (हमले) से आता है। शास्त्रियों द्वारा ''आक्रामकता का अध्ययन इसलिए किया जाता है क्योंकि इसका सम्बंध जानवरों के पारस्परिक मेल तथा प्राकृतिक पर्यावरण में विकास से सम्बंधित है।''

किशोरावस्था की मनोवैज्ञानिक समस्याएं-किशोरावस्था अनेक मनोवैज्ञानिक समस्याओं से ग्रस्त हो सकता है, जिनके परिणामों को नशे की लत, कम आयु की आक्रामकता, हिंसा, आत्महत्या आदि जैसे उच्च जोखिमपूर्ण व्यवहारों में प्रदर्शित किया जाता है।

किशोरियों में भावनात्मक तथा सामाजिक बदलाव -

1. अपनी सं ुदरता की तरफ ज्यादा ध्यान देना,

2. स्वभाव में तेजी से बदलाव, भावनात्मक अस्थिरता,

3. स्वप्न देखना, दिन में सपने देखना (दिवास्वप्न),

4. ध्यान आकर्षित करने वाला व्यवहार करना,

5. अपनी जगह बनाने की इच्छा,

6. यौन आकर्षण,

7. कौतूहल रहना या जिज्ञासा,

8. शक्ति से भरपूर व बेचैन रहना,

9. पक्की सोच,

10. परिवार द्वारा रोक-टोक पसंद न करना,

11. अस्थिरता का सामना करने के लिए सम्बंधों की चाहत,

12. साथियों द्वारा व्यवहार तय किया जाना,

13. नए सम्बंध बनाना।

किशोरों में मानसिक तथा भावनात्मक परिवर्तन -

1. यौन उत्तेजना की शुरुआत या काम भावनाओं का जागृत होना,

2. शरीरिक परिवर्तनों को लेकर बेचैनी चिंताएं होना और इसके मानसिक तनाव महसूस करना,

3. चिड़चिड़ापन, चंचलता एवं गुस्सा बढ़ जाना,

4. तनाव, झिझक एवं संकोच महसूस करना,

5. उतावलापन और जोखिम उठाने की प्रवृत्ति विकसित होना,

6. विपरित लिंग के प्रति आकर्षण होना,

7. दोस्तों से प्रभावित होना,

8. कल्पना एवं जिज्ञासा बढ़ना,

9. आत्मसम्मान, आत्मछवि एवं आत्मविश्वास का विकास,

10. अपने प्रति सचेत होना,

11. इच्छाओं, नैतिकता, मूल्यों में असमंजस पैदा होना,

12. माता-पिता एवं अन्य बड़ों से सम्बंध में बदलाव,

13. स्वतंत्रता और जिम्मेदारियों में बदलाव।

किशोरावस्था में होने वाले सामाजिक परिवर्तन -

1. पारिवारिक सम्बंधों में घनिष्ठता कम होने लगती है। माता-पिता और किशोर-किशोरियों के बीच दूरी बढ़ जाती है,

2. सभी को रोक-टोक बुरी लगती है,

3. माता-पिता की अपेक्षा हमजोलियों और विपरित लिंग के मित्रों को अधिक महत्व दिया जाता है,

4. किशोर चाहते हैं कि अपनी पसंद व अपने निर्णय पर डटे रहें और अपने जीवन के लक्ष्य स्वयं तय करें,

5. पसंदीदा व्यक्ति और दोस्तों के विचार व जीवन शैली से प्रभावित होना,

6. हमउम्र वाले समूह के साथ अच्छा लगना और गहराई से मिलना-जुलना,

7. व्यस्कों के सामने अपने को आत्मनिर्भर दर्शाने की कोशिश करना,

8. जीवन मूल्यों और आदर्शों के बीच भ्रमित होना।

किशोरावस्था को बिना किसी कारण से संक्रमणकालीन कहा जाता है। जीव में वृद्धि, बच्चे के परिवर्तन की उपस्थिति और व्यवहार बढ़ता है। सामान्य तौर पर किशोरावस्था, युवावस्था की उम्र को दर्शाता है।

किशोरावस्था की आक्रामकता:-

किशोरों में हिंसा, माता-पिता, अध्यापकों और समाज के लिए तेजी से एक चिंता का विषय बन रहा है। किशोरों में आक्रामकता को अनेक रुपों में प्रदर्शित किया जाता है। किशोर हिंसा के अन्य रुप हैं- पशुओं के प्रति क्रूरता, घर पर अनियंत्रित गुस्सा होना, झल्लाहट होना, सताना, लड़ना, गैंग शत्रुता। आत्मघाती बम फटना और युवाओं में आत्महत्या एक भारी घटना है। बलात्कार और छेड़खानी, हिंसात्मक व्यवहार की अन्य अभिव्यक्तियाँ हैं। आक्रामकता को लूटपाट, सम्पत्ति के विनाश और किसी भी प्रकार की गुंडागर्दी द्वारा प्रदर्शित किया जाता सकता है। कारण सामाजिक मनाविज्ञान बताता है कि हिंसा एक अर्जित व्यवहार है, अपराधी जन्मजात नहीं होते हैं। बच्चे हिंसा अपने इर्द-गिर्द देखते हैं और तदनुसार अनुकरण करते हैं।

आक्रामकता एक त्वरित समाधान हो सकती है, पर इसके विनाशकारी परिणाम हो सकते हैं। 'एगेशन रिप्लेसमेंट ट्रेनिंग पाॅइटस आउट' के लेखक अर्नोइड पी गोल्डस्टीन कहते हैं- ''आक्रामकता सिखाने और सीखने की पहली जगह घर होता हैै।'' हमारे बच्चे, हमारा भविष्य हैं। आक्रामकता एक प्राकृतिक भावना है। 200 ईसा पूर्व से 200 ई0 तक के काल के बीच लिखे गए नाट्य शास्त्र में आक्रामकता को एक 'रस' या नैसर्गिक भाव कहा गया है।

डराना-धमकाना आक्रामकता का एक प्रकार है। किशोरावस्था में अक्सर देखा गया है कि अगर किशोर या किशोरियों की बात अगर उसके सहपाठी या मित्र नहीं मानते हैं, तो वे उसने साथ डराने-धमकाने जैसा आक्रामक बर्ताव करने लगते हैं। इसका उद््देश्य नुकसान पहुँचाना, डराना या कष्ट पहुँचाना या किसी अन्य व्यक्ति के लिए स्कूल में नकारात्मक पर्यावरण बनाना होता है। डराना-धमकाना ऐसी स्थिति में होता है, जहाँ कोई वास्तविक या महसूस किया गया शक्ति का असंतुलन हो। डराना-धमकाना कई प्रकार के हो सकते हैं, जैसे-

- शारीरिक- प्रहार, धक्का देना, सम्पत्ति को नुकसान पहुँचाना या चुराना,
- मौखिक- नाम लेकर पुकारना, मजाक उड़ाना या लैंगिक, जाति सम्बंधी घृणित बातें करना,
- सामाजिक- अन्य लोगों को किसी समूह से अलग रखना या उनके बारे में अफवाहें फैलाना,
- लिखित- ऐसी टिप्पणीयाँ या संकेत लिखना, जो तकलीफ पहुँचाने वाले या अपमानजनक हों,
- इलेक्ट्रानिक- (आम तौर पर साईबर बुलिंग के नाम से जानी जाने वाली) ई-मेल, सेलफोन (उदाहरण- टेक्स्ट मैसेजिंग) के प्रयोग के जरिये ओर सामाजिक मीडिया साईट पर अफवाहें फैलाना या तकलीफ पहुँचाने वाली बातें लिखना।

अमेरिकन साइकोलाॅजी एसोसिएशन ने गुस्से को विपरीत परिस्थितियों के प्रति एक सहज अभिव्यक्ति कहा है। इस उग्र प्रदर्शन वाले भाव से हम अपने ऊपर लगे आरोपों से अपनी रक्षा करते हैं। लिहाजा अपनी अस्तित्व रक्षा के लिए आक्रामकता भी जरुरी होता है।

लोग कभी-कभी संघर्ष को डराना-धमकाना समझ लेते हैं, लेकिन ये भिन्न बातें हैं। संघर्ष ऐसे दो या अधिक लोगों के बीच होता है, जिनमें किसी बात पर असहमति, राय की भिन्नता या भिन्न विचार होते हैं। छात्रों के बीच संघर्ष का अर्थ हर बार डराना-धमकाना नहीं होता है। बच्चे छोटी उम्र में सीखते हैं कि अन्य लोगों का दृष्टिकोण उनके अपने दृष्टिकोण से भिन्न हो सकता है, लेकिन दृष्टिकोण पाने की क्षमता का विकास करने में समय लगता है और यह प्रक्रिया किशोरावस्था में जारी रहती है। संघर्ष में, प्रत्येक व्यक्ति को अपने विचार प्रकट करने में आराम महसूस होता है और इसमें शक्ति का कोई असंतुलन नहीं होता है। प्रत्येक व्यक्ति अपने विचार प्रस्तुत करने में सक्षम महसूस करता है। संघर्ष का सकारात्मक या नकारात्मक होना इस पर निर्भर करता है कि लोग संघर्ष से कैसे बचते हैं। संघर्ष तब नकारात्मक हो जाता है, जब कोई व्यक्ति हानिकारक बात या काम करके आक्रामक बर्ताव करता है। तब संघर्ष एक आक्रामक अंतरक्रिया होता है। संघर्ष केवल तभी डराना-धमकाना बनता है, जब इसे बार-बार दोहराया जाता है और शक्ति

का असंतुलन समय के साथ बर्ताव का ढंग विकसित हो सकता है। जहाँ वह व्यक्ति जो संघर्ष में आक्रामक बर्ताव करता है, वह उसे जारी रख सकता है या और बिगाड़ सकता है। जो व्यक्ति आक्रामक संघर्ष का प्रासकत्र्ता होता है, वह अपना दृष्टिकोण प्रकट करने में कम सक्षम महसूस कर सकता है और अधिक से अधिक शक्तिहीन महसूस करता है। यह वह समय है जब नकारात्मक संघर्ष डराने-धमकाने में बदल सकता है। डराना-धमकाना कभी स्वीकार्य नहीं है। इसे केवल ''बड़े होने का हिस्सा नहीं माना जाना चाहिए''।

वे किशोर या किशोरियाँ, जो अन्य लोगों को कष्ट पहुँचाने के लिए शक्ति और आक्रामकता का उपयोग करना सीख जाते हैं, साधारण तौर पर सही और गलत के बीच अंतर का ध्यान देना बंद कर देते हैं। अंततः वे निंदित किशोर/किशोरी बन जाते हैं। इसलिए जितना जल्दी सम्भव हो डराने-धमकाने को रोकने में उनकी सहायता करना महत्वपूर्ण है। किशोर बच्चों का लालन-पालन करना एक आसान कार्य नहीं है और माता-पिता के लिए यह अति तनावपूर्ण हो सकता है। उन्हें अपनी संतान के बचपन से वयस्कता की ओर अग्रसर होना और उनमें परिवर्तन लाना, उसे कैसे नियंत्रित किया जाए, इत्यादि बातों का विशेष ध्यान रखना आवश्यक है। किशोर बच्चों और युवाओं से सम्बंधित कुछ प्रमुख मुद्दों पर चर्चा करना आवश्यक है, जैसे- उनके बीच नशीली दवाओं और मदिरा का सेवन, उनका गैर सामाजिक, अति जोखिमपूर्ण और अवज्ञाकारी बर्ताव, सामान्य मनोवैज्ञानिक विकृतियाँ, समकालीन समाज में माता-पिताओं के लिए चुनौतियाँ हैं।

आधुनिक जीवन शैली किसी भी व्यक्ति को तनाव में धकेल सकती है। अब जबकि हजारों लोगों को अपने रोजगार और घरों से हाथ धोना पड़ रहा है और यहाँ तक कि सेवानिवृत्त लोगों की सुरक्षित राशियाँ भी बाजारी उथल-पुथल के कारण गायब होती जा रही हैं, इस लिहाज से इस काल को 'ऐज आॅफ एनग्जाइटी' या वयग्रता का युग कहा जा सकता है। इसके विपरीत, यह भी सच है कि कुछ लोग चाहे उनकी आर्थिक या पारिवारिक स्थिति कैसी भी हो, हमेशा तनाव में रहते हैं। दरअसल, वह पैदाईशी तनावग्रस्त होते हैं।

आक्रामकता हमारी किसी परिस्थिति में मूलभूत प्रतिक्रिया 'सामना करें या भागें' को शुरु करता है। दिल की धड़कन में तेजी, रक्तचाप में वृद्धि और तनाव में वृद्धि, ये आक्रामकता के प्रारम्भिक परिणाम हैं। साँस की गति भी बढ़ जाती है। जब आक्रामकता जीवन में आवर्ती और अनियंत्रित हो जाता है, जो समय के साथ हमारे उपापचय में परिर्वतन आ जाता है, जो न केवल स्वास्थ्य को प्रभावित करता है, अपितु जीवन की सम्पूर्ण गुणवत्ता को भी प्रभावित करता है। आक्रामक व्यवहार किशोर/किशोरियों में एक दिन के विकास का प्रतिफल नहीं है, अपितु यह लम्बे समय तक पारिवारिक वातावरण, विद्यालय एवं विभिन्न मीडिया जैसे- टी0वी0, इंटरनेट आदि द्वारा सीखा गया व्यवहार है।

अनुसंधानकत्र्ताओं ने एक रिपोर्ट में बताया कि हिंसक विडियो गेम खेलने वालों में आक्रामकता बढ़ जाती है, लेकिन इस बात के पर्याप्त सबूत नहीं हैं कि क्या इसका सम्बंध आपराधिक हिंसा या अपराध बढ़ने से है या नहीं। अमरीकन साइकोलाॅजी एसोसिएशन (एपीए) की नई कार्य बल रिपोर्ट के अनुसार अनुसंधान दर्शाता है कि हिंसक विडियो गेम के इस्तेमाल और आक्रामकता बढ़ने एवं संवेदनशीलता कम होने के बीच सीधा सम्बंध है। कार्य बल के अध्यक्ष मार्क अप्पेलबौम ने कहा, ''वैज्ञानिकों ने पिछले दो दशक से अधिक समय से हिंसक विडियो गेमों के इस्तेमाल पर अनुसंधान किया है, लेकिन इस सम्बंध में बहुत सीमित अनुसंधान किया गया है कि क्या विडियो गेमों के कारण लोगों में आपराधिक हिंसा के कृत्यों को अंजाम की प्रवृत्ति बढ़ती है या नहीं।''

रिपोर्ट में कहा गया है कि किसी भी व्यक्ति में आक्रामकता या हिंसात्मक व्यवहार को बढ़ाने में किसी एक कारक का हाथ नहीं होता, बल्कि ऐसा कई कारकों के कारण होता है। यह अनुसंधान दर्शाता है कि हिंसक विडियो गेम का इस्तेमाल इनमें से एक कारक है।

घरेलू हिंसा:- घरेलू हिंसा देखने वाले बच्चों में अपनी किशोर या युवावस्था में हिंसात्मक व्यवहार को अपनाने और इसे उचित ठहराने की अधिक सम्भावना है। दैहिक दण्ड को भी शारीरिक दुव्र्यवहार के बारे में जाना जाता है और अध्ययन दर्शाते हैं कि यह प्रतिउत्पादक है। घर, विद्यालय या अपने सामाजिक परिवेश में शारीरिक या यौन सम्बंधी दुव्र्यवहार का शिकार होने के कारण किशोरों में हिंसा भड़क सकती है।

भारतीय नेशनल ब्यूरो के अनुसार पिछले 5-6 वर्षों में स्त्रियों के खिलाफ अपराधों में 35 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी हुई है, इनमें सर्वाधिक मामले घरेलू हिंसा के हैं। जबकि आंकड़े बताते हैं कि महिलाए अब चुप नहीं हैं, वे हिंसा के खिलाफ खड़ी हैं।

किशोरावस्था नासमझी की अवस्था होती है, जिसमें यह समझ पाना कि क्या उचित है और क्या अनुचित, मुश्किल हो जाता है, जबकि हिंसक व्यवहार समझना और भी मुश्किल होता है। समाजशास्त्री डा0 ऋतु सारावत ''पितृसत्तात्मक समाजों में हिंसा को एक सीमा तक स्वीकृति प्राप्त है। भारतीय परिवारों में पुरुष मुखिया है, इसलिए वह ज्यादा कंट्रोलिंग पावर रखता है। दूसरा पक्ष विरोध तब करता है, जब पानी सर से ऊपर गुजरने लगता है। ज्यादातर स्त्रियाँ इसलिए झेलती हैं, क्योंकि उनका आर्थिक पक्ष मजबूत नहीं होता है।

1. शारीरिक हिंसा में मारना, दाँत काटना, चोट पहुँचाना, लात मारना, पटकना, सामान उठा कर फेंकना आता है।

2. भावनात्मक हिंसा में दूसरे को कंट्रोल करना, रोकना, टोकना, डराना-धमकाना, मर्जी का सम्मान न करना, आपमानित करना, चरित्र हनन और धमकी देना शामिल है।

3. सेक्सुअल हिंसा में इच्छा के विरुद्ध सेक्स सम्बंध बनाने या कोई असहज डिमांड करना, चोट पहुँचाना जैसी बातें हैं।

4. आर्थिक हिंसा में घर खर्च के लिए पैसे न देना, नौकरी न करने देना, बच्चों की परवरिश में योगदान न देना या जीवन साथी की कमाई पर निपमंशा जैसी बात शामिल है।

सुप्रीम कोर्ट के अधिवक्ता कमलेश जैन कहती हैं- ''घरेलू हिंसा कानून 2005 के अनुसार दहेज प्रताड़ना, भूखा रखना, ताने देना, रोक-टोक, शक्ल-सूरत पर कमेंट करना व उंगली उठाना, जरुरत न पूर्ण करना जैसी बातें भी हिंसा में आती हैं और इनकी शिकायत आई.पी.सी. की धारा- 498ए के तहत की जा सकती है।

1. लड़ना होगा हिंसा के खिलाफ

2. भावनात्मक हिंसा ज्यादा खराब

3. जागरुकता बढ़ी है

4. स्त्रियों को नहीं पुरुषों को सिखाएं

5. बेटियों ने दी लड़के की

6. रिश्तों पर आधार सिर्फ प्यार

7. रिलेशनशिप को समझे।

किशोरावस्था के व्यवहार पर परिवार की घरेलू हिंसा के अतिरिक्त मीडिया का भी प्रभाव होता है-

टेलीविजन/इंटरनेट/सिनेमा की भूमिका -

मीडिया में हिंसा किशोर आक्रामकता को पर्याप्त उत्प्रेरण और साहस प्रदान करती है। मीडिया के द्वारा बैरपूर्ण विचार भी एकत्र कर सकते हैं। रैप और राॅक गीतों में विनाशकारी बोल, फिल्मों में दिखाई जाने वाली उच्च हिंसा, हत्या के खेल, हिंसा की विषयवस्तु वाली पुस्तकें और अन्य चीजें युवाओं के दिमागों में विचार और हिंसा के औचित्य को भर रहे हैं। आजकल हिंसात्मक कम्प्यूटर और विडियो खेल, युवाओं में बहुत ही लोकप्रिय बन गए हैं।

इसके अतिरिक्त नशे की लत, धूम्रपान, मदिरा सेवन यह सब युवाओं के हिंसात्मक बर्ताव को जन्म देते हैं, जैसा कि अनेक अनुसंधान अध्ययनों से सिद्ध हुआ है। अंततः गरीबी, वस्तुओं की भारी कमी, अस्थिर परिवार, एकल माता-पिता परिवार, बेरोजगारी, पारिवारिक सहायता की कमी इत्यादि जैसे सामाजिक-आर्थिक घटक किशोरावस्था की आक्रामकता को भड़काने में योगदान कर सकते हैं।

भारत में पिछले 10 वर्शों से टैलीविजन का बहुत अधिक प्रसार हो गया है। इसके फलस्वरुप प्रत्येक पारिवारिक सदस्य के जीवन की दिनचर्या का आवश्यक अंग बन गया

है। इस कारण टेलीविजन, इंटरनेट, मोबाईल फोन, सिनेमा आदि प्रत्यक्ष/अप्रत्यक्ष रुप से परिवार, स्कूल, शिक्षण संस्थान को प्रभावित कर रहे हैं। टेलीविजन, इंटरनेट के माध्यम से किशोर उस समाज एवं समुदाय तक पहुँच जाता है, जिससे उसका प्रत्यक्ष सम्बंध सम्भव नहीं है। किशोरावस्था में व्यक्तिगत आकर्षण अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। श्राम, लायल तथा पार्कर ने एक अध्ययन में पाया है कि यद्यपि दूरदर्शन के माध्यम से बालकों में रुचि जागृत होती है तथा सीखने की प्रेरणा प्राप्त होती है। परंतु वास्तविक व्यक्तियों के व्यवहार का प्रभाव बालकों पर अधिक पड़ता है।''

स्पष्ट है कि बच्चों में आक्रामकता का प्रभाव अधिक परिलक्षित होता है। यह टी0वी0 देखने की अवधि पसंदीदा कार्यक्रम, पसंदीदा अभिनय पात्र बच्चे के मस्तिष्क पर पड़ने वाले प्रभाव को परिभाषित करता है। आक्रामक व्यवहार के पीछे कार्टून और मीडिया में दिखाए जाने वाले आक्रामक कार्यक्रम को केवल 3 मिनट देखने से ही हिंसक हो जाते हैं। छोटा भीम कार्टून, जिसमें मेन हीरो दूसरों से हमेशा जीतता है, उसमें जबकि अच्छा, बुरे से जीतता है, तब भी काफी हिंसात्मक होता है। आधे घंटे की अहिंसा की अनुमति दी जा सकती है। जब आपका बच्चा उदास या अकेला होता है, तब टी0वी0 आपका विकल्प नहीं हो सकती। यह उसका ध्यान हटा सकती है, पर समाधान नहीं हो सकती। समाधान केवल आप ही हैं। ज्यादा टी0वी0 देखना, हिंसक प्रोग्राम देखना, क्राईम शो आदि बच्चों के मन-मस्तिष्क को पूरी तरह से प्रभावित करते हैं। मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि कई बार युवा हिंसा के प्रति संवेदनशील नहीं रहते और उन्हें किसी कार्य का प्रतिरोध करने के लिए गुस्सा नाजायज नहीं लगता है।

पारिवारिक वातावरण में किसी नई जगह पर अकेले रहना गुस्से का एक कारण होता है। मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि जिन लोगों के दोस्त कम होते हैं, सामान्यतः उन्हें गुस्सा जल्दी आता है। ऐसे बच्चे जो कि न्यूक्लियर फैमिली में पैदा होते हैं और उनके माता या पिता मानसिक रुप से पीड़ित होते हैं। मानसिक अनियमितता की वजह से वे गुस्सैल हो जाते हैं। वे गाली देने लगते हैं। भाई-बहन मार-पीट करने लगते हैं, चीजों को तोड़ते हैं। मनोचिकित्सकों का कहना है कि अगर बच्चा गुस्सा ज्यादा करता है, तो मतलब वह कहीं न कहीं हताश है।

किशोर/किशोरियों में इस समय क्रांतिकारी परिवर्तन देखने को मिलता है। जैसे-जैसे बच्चा बढ़ता है, उसके हिसाब से उसको शिक्षा दी जाती है। किशोर/किशोरियों को स्कूल में स्वास्थ्य, भोजन, पौष्टिक आहार एवं शारीरिक व्यायाम तथा खेलकूद सम्बंधित शिक्षा प्रदान की जाती है, जिससे बच्चों का सर्वांगीण विकास हो सके तथा बच्चों की रुचि का भी पता चल पाता है कि उसकी रुचि किन कार्यों में है। स्कूल व कालेजों में उचित पुस्तकालय, वाचनालय, प्रयोगशाला, संग्राहलय आदि से भी वह समय पर मार्ग दर्शन ले सकते हैं। कभी-कभी बालकों का सही संगत न हो पाने से उनके अंदर आक्रामकता दिखाई देने लगती है, जिसका दुःखद परिणाम परिवारवालों को देखने को मिलता है।

उपयोगी प्रतिक्रियाः- समाचार पत्र और न्यूज चैनल नियमित रुप से किशोर आक्रामकता की घटनाओं, बाल अपराधों और नशे की लत में पड़ना, मदिरा सेवन, सेक्स सम्बंधी हिंसा, आत्महत्याएं, आतंकवाद और अन्य सामाजिक गतिविधियों को प्रकाशित करते हैं। युवाओं की असीमित ऊर्जा का उपयोग राष्ट्र की प्रगति, विकास और मर्यादा में वृद्धि करने के लिए किया जा सकता है, पर यह विनाश में उपयोग किया जा रहा है। किशोरों की समस्याओं को हल करने, नकारात्मक व्यवहार तथा दुर्घटनाओं को रोकने तथा किशोरों और युवाओं की ऊर्जा को सृजनात्मक गतिविधियों की ओर मोड़ने में परिवार, विद्यालय और समाज की महत्वपूर्ण भूमिका है।

स्कूल का प्रभाव-कारकः- एक निश्चित आयु में आकर बच्चों को स्कूल में प्रवेश करवाया जाता है। स्कूल जाने के कारण बच्चे ज्यादा समय तक स्कूल में रहते हैं। यहीं पर बच्चे स्कूल में अन्य बच्चों तथा शिक्षकों के सम्पर्क में निकट आते हैं। यही सम्पर्क इनके आदान-प्रदान की कड़ी बनती है। शोध और अनुभव सतत रुप से दर्शाते हैं कि डराना-धमकाना एक गम्भीर मुद्दा है, जिसके परिणाम सम्बद्ध छात्रों, उनके परिवारों और साथियों तथा उनके इर्द-गिर्द के समुदाय के लिए दूरगामी होते हैं। जो बच्चे पीड़ित होते है, अन्य बच्चों को डराते-धमकाते हैं या दोनों। उन्हें कई भावनात्मक बर्ताव सम्बंधी और रिश्तेदारी की समस्याओं के होने का जोखिम होता है और उन्हें न केवल स्कूल बल्कि उनके सारे जीवन में स्वस्थ सम्बंध स्थापित करने के लिए वयस्कों के समर्थन की

आवश्यकता पड़ती है। जिन बच्चों को डराया-धमकाया जाता है, वे अक्सर सामाजिक चिंता, अकेलेपन, सम्बंध-विच्छेद, शारीरिक बीमारियाँ और आत्मसम्मान की कमी का अनुभव करते हैं। वे भय से ग्रस्त भी हो सकते हैं, आक्रामक बर्ताव अपना सकते हैं या अवसाद में जा सकते हैं। कुछ छात्र स्कूल में अनुपस्थित हो सकते हैं, उनके अंक कम हो सकते हैं या वे पूरी तरह से स्कूल ही छोड़ सकते हैं, क्योंकि उन्हें डराया-धमकाया गया है।

सताना ;ठनससपदहद्ध या दूसरे को बेवकूफ बनाना-किशोर जीवन की यह एक कड़ी सच्चाई है। एक आंकलन के अनुसार देश में 30 प्रतिशत किशोर विद्यालय में सताए जाने की प्रक्रिया में जकड़े होते हैं। या तो वह दबंग के रुप में या सताए जाने के लक्ष्य के रुप में या दोनों। सताए जाने से किशोर तनावपूर्ण, चिंतित और भयभीत महसूस करते हैं। यदि सताए जाने की प्रक्रिया लम्बे समय तक चलती है, तो यह सताए गए बच्चे की स्वधारणा, आत्मसम्मान को प्रभावित करना शुरु कर देती है और उसके विश्वास को भी हिला सकती है। परिणामस्वरुप बच्चा चिंता, विशाद और व्यक्तिपूर्ण लक्षण दिखा सकता है और सामाजिक अलगाव पसंद कर सकता है। सताए जाने के अनुभव के नकारात्मक परिणाम वयस्कता में भी जारी रह सकते हैं।

विद्यालय आधारित कार्यक्रम- इसमें शारीरिक, भावनात्मक और सामाजिक स्तरों पर किशोरों की सुभेद्यताओं के बारे में छात्रों को पढ़ाने के लिए पाठ्यक्रम घटक शामिल किए जा सकते हैं। विषय-वस्तु में शामिल होना चाहिए- हार्मोन परिवर्तन तथा शरीर और मस्तिष्क पर उनका प्रभाव, समस्या सुलझाने की गलत प्रक्रियाएं एवं उनका असर, जिसके कारण नशे की लत, धूम्रपान, मदिरापान को बढ़ावा मिल सकता है, किशोर आक्रामकता, हिंसा, सेक्स सम्बंधी समस्याएं, आत्महत्या, हत्या तथा अन्य विनाशकारी परिणाम आदि। सभी प्रासंगिक मुद्दों को पूर्णतया शामिल कियाय जाना चाहिए जो सामान्यतया किशोरों के जीवन में आते हैं। विद्यालय आधारित कार्यक्रमों का लक्ष्य सजगता बढ़ाने, उच्च जोखिम व्यवहार में लिप्त छात्रों की पहचान कर पाना, उन व्यावहारिक लक्षणों के बारे में जानकारी प्रदान करना, जिनके कारण किशोर हिंसा, नशे की लत, आत्महत्या आदि के प्रति जोखिम में पड़ सकते हैं और छात्रों, अध्यापकों और अभिभावकों को मानसिक

स्वास्थ्य संसाधनों की उपलब्धता पर जानकारी प्रदान करना तथा किशोरों की सहन करने वाली सकारात्मक योग्यताओं में वृृद्धि करने पर आधारित होना चाहिए।

विद्यालयी समाज कार्यकत्र्ताओं की भूमिका -

वे विभिन्न व्यक्तियों-अभिभावकों और विद्यालय, अध्यापकों और मानसिक स्वास्थ्य पेशेवरों के बीच तथा उच्च जोखिमपूर्ण किशोरों, साथियों और अभिभावकों के बीच सम्पर्क सूत्र के रुप में कार्य कर सकते हैं। वे मद्ृदे की गम्भीरता के बारे में विद्यालय के अधिकारियों को सतर्क भी कर सकते हैं, किशोरों को तनाव प्रबंधन कार्यशालाएं प्रदान कर सकते हैं, साथी सलाहकारों को प्रशिक्षित कर सकते हैं, किशोरों के लिए सहायता समूह स्थापित कर सकते हैं, चेतावनी संकेतों का पता लगाने में अध्यापकों, अभिभावकों को प्रशिक्षित कर सकते हैं, गैर सरकारी संस्थाओं, मीडिया, हेल्पलाईन जैसी विद्यालय से बाहर की सेवाओं के लिए नेटवर्क विकसित कर सकते हैं और समस्याग्रस्त छात्रों के साथ वैयक्तिक कर सकते हैं।

अध्यापकों की भूमिका- निवारण में अध्यापक बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं तथा पारस्परिक रुप से वे उनके लिए एक अधिकारी व्यक्ति और रोल मा ॅडल होते हैं। अभिभावक शिक्षण बैठकों में उन्हें चेतावनी संकेतों पर चर्चा करनी चाहिए, यदि कोई हो तो अभिभावकों का अपने बच्चों के बारे में और मानसिक स्वास्थ्य पेशेवरों के साथ एक रेफरल नेटवर्क बना सकते हैं। अपनी कक्षाओं में विशय लागू करके वे छात्रों में जागरुकता बढ़ा सकते हैं। उन्हें छात्रों के बीच में अच्छा दृष्टिकोण और सपना विकसित करने के लिए भरसक प्रयास करने चाहिए और सृजनात्मक कार्या ेंं में उनकी ऊर्जा को लगाना चाहिए।

साथियों की भूमिका- साथी शायद सबसे महत्वपूर्ण समूह होते हैं, क्योंकि उनके दृष्टिकोण और अवधारणा के अनुसार 93 प्रतिशत छात्रों ने बताया कि संकट की घड़ी में किसी अध्यापक, अभिभावक या आध्यात्मिक गुरु से पूर्व वे अपने मित्र के पास जाएंगे। साथ ही छात्र समूह बना सकते हैं और एक बार जब वे प्रासंगिक ज्ञान और कौशल से सुसज्जित हो जाते हैं तो वे अन्य लोगों को साथी सलाहकार बनने के लिए प्रशिक्षित कर सकते हैं।

अभिभावकों की भूमिका- अभिभावकों को अपने किशोर बच्चों की परेशानियों पर यथासम्भव खुला और सावधान होने की आवश्यकता है। प्रभावी अभिभावक बच्चों में संवाद, उचित अनुशासन, किशोरों की लगभग सभी समस्याओं का हल करने के लिए सम्भावी घटक हैं, लेकिन इसमें अभिभावक और बच्चों के बीच ऐसे स्वास्थ्यप्रद सम्बंध स्थापित करने के लिए कई वर्ष लगते हैं। कभी-कभी किशोर अपने प्रियजनों पर बोझ न डालने के लिए अपनी समस्याओं को छुपाते हैं। किशोरों को यह सुनिश्चित करना अतिमहत्वपूर्ण है किवे अपनी कठिनाईयाँ बता सकते हैं तथा इस प्रक्रिया में मदद ले सकते हैं। अभिभावकों को मदद लेने के लिए वाह्य एजेंसियों के बारे में सजग होना चाहिए और उनके किशोर बच्चे की समस्या का हल करने के लिए किसी की सहायता लेने के लिए झिझकना नहीं चाहिए। इसके अतिरिक्त अभिभावकों के लिए अति महत्वपूर्ण है कि घर पर कोई बंदूक या ऐसे हथियार न रखें, यदि घोर आवश्यकता है तो सभी प्रकार से इसे बच्चों की पहुँच से दूर रखना चाहिए, क्योंकि अध्ययनों ने दर्शाया है कि यदि किशोरों के घर में बंदूक या हथियार है, तो उनके द्वारा आत्महत्या करने की सम्भावना पाँच गुना अधिक हो जाती है।

विद्यालय की भूमिका- हॉट लाईंस, गैर सरकारी संस्थाओं, किशोर क्लब, स्वं सहायता समूह और अन्य सहायता सेवाएं, संकट को कम करने के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। सेवाओं की उपलब्धता के सम्बंध में जागरुकता का उचित ढंग से विज्ञापन किया जाए और लोकप्रिय बनाया जाए। विद्यालय अधिकारियों को यदि छात्रों के समूह के भीतर पाए जाने वाली रैगिंग, सताए जाने और अन्य गतिविधियों का पता चलता है तो उसे समाप्त करने के लिए कड़ी अनुशासनात्मक कार्यवाही की जानी चाहिए।

राज्य की भूमिका- नशीली दवाओं, मदिरा, जहर, बंदूकों और सामान्य हथियारों तथा अन्य घातक उपायों तक पहुँच को प्रतिबंधित करना राज्य के लिए आवश्यक है। पुनर्वास की समुचित प्रणालियों सहित बाल अपराध न्याय अधिनियम के उचित कार्यान्वयन को सुनिश्चित करना सरकार की संवैधानिक और नैतिक जिम्मेदारी है।

मीडिया की भूमिका- किशोरों के व्यक्तित्व को ढालने के लिए मीडिया सशक्त भूमिका अदा कर रहा है। एकमात्र समस्या की भूमिका में अगर देखें तो उचित ध्यान

केंद्रित करने में मीडिया संतोषजनक तरीके से दूरस्थ क्षेत्रों में पहुँचने की भारी सम्भावना रहती है। आवश्यकता की घड़ी में किशोरों को प्रासंगिक जानकारी प्रदान करने में सकारात्मक भूमिका अदा करने में मीडिया की अहम भूमिका रहती है।

बालकों के व्यक्तित्व पर स्कूल में दो प्रकार के प्रभाव पड़ते हैं- (1) शिक्षक का प्रभाव, (2) सहपाठियों का प्रभाव।

1. शिक्षक का प्रभाव- प्रायः सभी बच्चे अपने शिक्षक को एक आदर्श व्यक्ति मानते हैं। इसी क्रम में अधिकांश बच्चे जानबूझ कर या अनजाने में ही शिक्षक का अनुसरण करने लगते हैं। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि स्कूल में पढ़ने वाले बच्चों के व्यक्तित्व पर स्कूल के शिक्षक का बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है।

2. सहपाठी का प्रभाव- बच्चों के व्यवहार पर उनके सहपाठी का प्रभाव गहरा पड़ता है। सामान्य जीवन के समय रखने वाली अनेक आदतें अपने सहपाठी से सीखते हैं। इसके अतिरिक्त सहयोग, मित्रता, सहानुभूति आदि सद्गुण भी सहपाठियों के सम्पर्क द्वारा ग्रहण करते हैं। बच्चों के व्यक्तित्व पर स्कूल का विशेष प्रभाव पड़ता है।

प्रश्न यह है कि किशोर/किशोरियों में आक्रामकता पनपता कैसे है? क्या यह अपूर्ण आवश्यकताओं, सम्बद्ध कुंठाओं और परिवार से सीखे गये गुणों को कम झेल पाने के कारण होता है? विगत कई दशकों से अनुसंधानकत्ताओं ने किशोरों द्वारा अपराध और अति जोखिमपूर्ण व्यवहारों में लिप्त होने की उनकी प्रवणता पर पारिवारिक जीवन का प्रभाव खोजने का प्रयास किया है। निष्कर्षों से पता चला है कि शुरुआती आक्रामक बर्ताव जैसे कि एक सामान्य सीमा से परे क्रोध तथा विद्यालय में अस्वीकार्य बर्ताव से यदि उचित रुपसे नहीं निपटा गया तो इसकी बाद में आपराधिक बर्ताव के महत्वपूर्ण सूचकों के रुप में पहचान की गई है। यदि किशोरावस्था के दौरान बच्चा अपने अवज्ञाकारी, अपराधी साथी की संगति में होता है तो इस बात से अधिक अवसर बन जाते है कि वह (लड़कों के मामले में यह अधिक लागू होता है) अस्वीकार्य सामाजिक व्यवहार ही दर्शाता है। आदर्शवाद और गैर संगतता, भावनात्मक, क्रोध तथा भोलापन किशोरावस्था के लक्षण हैं। इससे यह अवधि इन भावनाओं के कारण अधिक पराधीन हो जाती है। अधिकांश किशोरों

के अनुसार आदर्श रुप से मित्रता के सबसे अधिक गुण हैं, मित्रता को हर हाल में बरकरार रखने की आवश्यकता है, चाहे अपने साथियों के अवगुणों की अनदेखी की जाए, इसके अतिरिक्त साथियोंकी प्रशंसा और स्वीकार्यता प्राप्त करना, समूह में अपनी बात सिद्ध करना, किशोरों के लिए एक बहुत ही बड़ा मुद्दा बन जाता है। जब साथी की बुद्धि और सिद्धांत का विश्वास और मूल्य प्रत्यक्ष रुप से बढ़ जाता है तो इससे समस्याएं उत्पन्न होती हैं, क्योंकि उच्च जोखिम में लिप्त होने से बच्चों की रक्षा करने के लिए माता-पिताओं की भूमिका और अधिक मुश्किल और जटिल हो जाती है।

पिछले दशक में किशोर के अधिकारों तथा कत्र्तव्यों में पर्याप्त परिवर्तन हो गया है। नागरिक अधिकार आंदोलन, प्रदर्शन, मुढभेड़, बहिष्कार आदि में सक्रिय भाग लेकर किशोरों में राजनैतिक चेतना अधिक जागृत हो गई है। इसके फलस्वरुप स्कूलों में भी किशोर अपने संवैधानिक अधिकारों की सक्रिय माँग करने लगे हैं। इसी कारण बालक/किशोर कभी-कभी अपने पथ से बहक जाते हैं। सामाजिक/आर्थिक स्तर के आधार पर यह निर्धारित होता है कि किशोर अपने वातावरण से कितना लाभ उठा सकता है।

सम आयु होने के कारण तथा पारिवारिक बंधनों से मुक्त होने पर किशोर स्वतंत्रता का अनुभव करते हैं। ये अनुभव भविष्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

खण्ड-ख

विकास की अवस्थाएँ **(Stages of Development)**

विषय को सुग्राह्य बनाने हेतु विकास की सम्पूर्ण प्रक्रिया को विभिन्न अवस्थाओं में विभक्त कर सकते हैं। विभिन्न अवस्थाओं में अलग-अलग प्रकार के विकासात्मक संकृत्य (Developmental Tasks) भी सीखने पड़ते हैं।

1. गर्भकालीन अवस्थाएँ **(Prenatal Stages)**– गर्भाधान से शिशु के जन्म लेने के पहले तक की अवधि गर्भकालीन अवस्था कही जाती है। यह अवधि 280 दिन की होती है। इसे क्रमशः अण्डाणु (Ovum), भ्रूणावस्था (Embryonic) एवं गर्भस्थ शिशु (Fetus) की अवस्थाओं में विभक्त करते हैं। एक-प्रथम अवधि गर्भाधान से दो सप्ताह की मानी गयी है। इसमें शुक्राणु एवं अण्डाणु के मेल से (Zygote) बनता है। दो-द्वितीय सप्ता के अन्त तक भ्रूण का निर्माण हो जाता है। भ्रूण अवधि दो माह तक मानी गयी है। इसमें द्रुत गति से शारीरिक विकास होता है। इस अवधि में भ्रूण का वजन लगभग दो ग्राम एवं लम्बाई दो इंच हो जाती है और शारीरिक अंगों की रचना प्रारम्भ होती है। भ्रूण की संरचना में तीन परतें होती हैं, जिन्हें क्रमशः बाहरी (Ectoderm), मध्य (Mesoderm) एवं अन्तःपरत (Endoderm)कहते हैं। इनके क्रमशः बाहरी अंगों (जैसे, आँख), आंतरिक पेशियो और आन्तरिक अंगों (जैसे- यकृत, फेफड़ा आदि का निर्माण होता है। तीन-गर्भकालीन अवस्था (गर्भस्थ शिशु), द्वितीय माह से जन्म के समय तक मानी गयी है। इसी में विभिन्न शारीरिक अंगों का विकास होता है। सामान्यतः शिशु का जन्म 280 दिन की अवधि पूरी होने पर ही होता है।

2. शैशवावस्था **(Infancy)**- यह अवस्था जन्मोंपरान्त द्वितीय सप्ताह तक चलती है। बच्चे को नवजात शिशु भी कहते हैं। इसे पूर्व नवजात शिशु (Portunate) एवं नवजात शिशु की अवस्था में विभक्त करते हैं। जन्म के बाद नवीन पर्यावरण के साथ वह द्वितीय अवधि में ही समायोजन प्रारम्भ कर पाता है। इस अवस्था को समायोजन की अवस्था कहते हैं

(Miller, 1950)। इसमें विकास की गति रुक जाती है। स्ट्रैटन (1982) के अनुसार, विभिन्न परिस्थितियों तथा वस्तुओं के साथ समायोजन स्थापित करना ही इस अवस्था का मुख्य कार्य होता है। जैसे, तापमान, श्वसन, चूसना, निगलना एवं उत्सर्जन जैसी क्रियाएँ करनी पड़ती हैं। संक्षेप में, इसकी विशेषताएँ निम्नांकित हैं-

i. शिशु के अत्यधिक समायोजन करना पड़ता है।
ii. जन्मोपरान्त कुछ सप्ताह तक शिशु के वजन में ह्रास होता है।
iii. बाद के विकास का इससे संकेत मिलता है।
iv. यह संकट की अवस्था है।

3. बचपनावस्था **(Babyhood)**– जन्मोपरान्त द्वितीय सप्ताह से द्वितीय वर्ष तक की अवधि बचपनावस्था कही जाती है। इस अवस्था में उसकी पराश्रितता समाप्त होती जाती है और वह अनेक कार्य स्वयं करने लगता है। उसमें प्रात्यक्षिक एवं स्मृति क्षमता भी प्रदर्शित होने लगती है (Mckenzie, etc. 1984; Bushnell, etc. 1984)। वे खेलना, हँसना, बोलना तथा सामानों पर आधिपत्य करना प्रारम्भ कर देते हैं। उनमें नैतिक विकास नहीं हुआ रहता है। उनमें संवेगों की स्पष्ट झलक मिलने लगती है। इस अवधि में विकास गति तीव्र होती है और वे स्थान, वजन, समय, स्व, सामाजिक सौन्दर्य एवं हँसी आदि का सम्प्रत्यय विकसित करना प्रारम्भ कर देते हैं।

i. इसकी प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं-
ii. इसमें तीव्र गति से परिवर्तन होता है।
iii. आश्रितता में कमी आती है।
iv. यह जीवन की आधारशिला है।
v. इसमें बीमारियाँ एवं दुर्घटनाएँ अधिक होती हैं।
vi. इसमें बच्चे अधिक आकर्षक लगते हैं।

4. बाल्यावस्था **(Childhood)**– यह अवधि दो से बारहवें वर्ष तक व्याप्त होती है। इसे प्रारम्भिक बाल्यावस्था ;मंतसल ब्ीपसकीववकद्ध और उत्तर बाल्यावस्था (Early Childhood) में विभक्त कर सकते हैं। इनका प्रसार क्रमशः 2 से 6 वर्ष एवं 6 से 12

वर्ष तक माना जाता है। प्रारम्भिक बाल्यावस्था के अन्त तक बच्चों की ऊँचाई 46.6 इंच और वजन लगभग 48 पौण्ड हो जाता है। प्रथम अवधि के समापन तक वह घर से बाहर निकलकर व्यापक सामाजिक परिवेश में प्रवेश करता है। वह एक छात्रा बन चुका रहता है। उसका सामाजिक दायरा बढ़ जाता है तथा उसके समक्ष समायोजन की समस्या नये रूपों में खड़ी होती है। इसे समस्या की आयु एवं खिलौनों की उम्र भी कहा जाता है। वैसे इस अवधि में शारीरिक वृद्धि मन्द होती है। इसके अतिरिक्त बच्चों में अन्वेषण, जिज्ञासा एवं अनुकरण की प्रवृत्ति भी बढ़ती है।

इस अवस्था की मुख्य विशेषताएँ निम्नांकित हैं-

i. बच्चों की यह अवस्था माता-पिता के लिए समस्यात्मक आयु होती है।
ii. इसमें नकारात्मक व्यवहार बढ़ता है।
iii. खिलौनों में बच्चों की रुचि बढ़ती है।
iv. इसे 'पूर्व विद्यालयीय आयु' भी कहते हैं।
v. बच्चों में जिज्ञासा तथा अन्वेषण की प्रवृत्ति बढ़ जाती है।
vi. बच्चों में प्रश्न करने की आदत बढ़ जाती है।
vii. इसे पूर्व टोली (Pregang) की आयु भी कहते हैं।
viii. इसमें अनुकरण तथा सृजनशीलता भी प्रदर्शित होती है।

उत्तर बाल्यावस्था 6 से 12 वर्ष (लैंगिक परिपक्वता) तक मानी गयी है। उत्तर बाल्यावस्था की समाप्ति के बारे में लोगों में मतभेद हैं। आमतौर पर बालकों के लिए 6 से 12 वर्ष एवं बालिकाओ के लिए 6 से 13 वर्ष मानी गयी है। इस अवस्था में शारीरिक परिवर्तनों की गति तीव्र होती है और सामाजिक विस्तार भी काफी बढ़ जाता है (चर्च एवं स्टेन, 1960)। इस अवधि में शारीरिक विकास गति धीमी होती है। ऊँचाई से 2-3'' तथा वजन में 2-3 पौण्ड तक वार्षिक वृद्धि होती है। दाँत भी निकल आते हैं तथा बालक एवं बालिकाओ में यौन भिन्नताएँ स्पष्ट होने लगती हैं। कौशल अर्जन, भाषा, ज्ञान, सांवेगिक स्थितरता तथा सुखद व्यवहार प्रवृत्ति इस अवधि की प्रमुख विशेषताएँ हैं।

संक्षेप में उत्तर बाल्यावस्था की विशेषताएँ इस प्रकार हैं।

i. इसे प्राथमिक विद्यालय की आयु का नाम दिया जाता है।
ii. बच्चों को इस अवस्था में कुछ कौशलों का अर्जन करना पड़ता है।
iii. इसे टोली की आयु (Gang age) कहा जाता है।
iv. बच्चों में अपनी टोली या समूह के विचारों के प्रति आस्था बढ़ती है।
v. इस अवधि में खेल की प्रवृत्ति बढ़ती है।

5. यौवनारंभ **(Puberty)–**इसे पूर्व किशोरावस्था भी कहते हैं। इसका प्रसार 12 से 13-14 वर्ष तक माना जाता है। इस अवधि में बालक तथा बालिकाओं में लैंगिक लक्षण स्पष्ट हो जाते हैं तथा परिवर्तन तीव्र गति से होता है। व्यक्ति के जीवन में चपलता, कौतूहल तथा अस्थिरता बढ़ जाती है। बच्चों में नकारात्मक प्रवृत्ति बढ़ जाती है तथा गौण लैंगिक लक्षण भी प्रदर्शित होने लगते हैं।

इस अवधि की प्रमुख विशेषताएँ निम्नांकित हैं-

i. यह विशिष्ट परिवर्तनों की अवधि है।
ii. यह आच्छादक (Overlapping) अवधि है। क्योंकि इसमें बाल्यावस्था के अन्त के कुछ वर्ष और किशोरावस्था के प्रारम्भ के कुछ वर्ष सम्मिलित हैं।
iii. यह एक लघु अवधि है।
iv. इसमें तीव्र गति से परिवर्तन होता है।
v. इसमें नकारात्मक अभिवृत्तियों में वृद्धि होती है।
vi. यह अवस्था विचरणशील होती है। इसके लक्षण 3 वर्ष से 19 वर्ष के बीच किसी भी समय प्रदर्शित हो सकते हैं।

6. किशोरावस्था **(Adolescence)–** किशोरावस्था का आशय परिपक्वता की ओर अग्रसर होना है। इसका प्रसार 13-14 वर्ष से 18 वर्ष तक होता है। इसमें व्यक्ति सन्तानोत्पत्ति के योग्य हो जाता है। व्यक्ति मानसिक, सामाजिक, सांवेगिक एवं शारीरिक आदि विकासों के दृष्टिकोण से परिपक्व हो जाता है। व्यक्ति में लैंगिक भावनाओं का जागरण चरम सीमा पर होता है और विपरीत यौन के सदस्यों के प्रति आकर्षण बढ़ जाता है। व्यक्ति भावावेश में रहता है, स्वच्छन्दता बढ़ जाती है, आन्तरिक परिवर्तन बढ़ जाते हैं, स्वभाव अवास्तविक हो

जाता है। यह प्रौढ़ावस्था की देहली ;ज्ीतमौीवसकद्ध है। इसके बारे में आगे विस्तार से वर्णन किया जायेगा।

7. प्रारम्भिक प्रौढ़ावस्था **(Early Adulthood)–**हरलाक (1975) के अनुसार, प्रौढ़ावस्था से तात्पर्य उस अवस्था से है जिसमें व्यक्ति का विकास पूर्ण आकार या शक्ति तक हो जाता है। इसका प्रसार 18 से 40 वर्ष तक माना गया है। इस अवस्था में शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक विकास उच्च स्तर तक हो जाता है और उत्तरदायित्वों का भार बढ़ जाता है। नवीन मूल्यों को सीखना, रचनात्मक कार्य करना, जीविकोपार्जन, पारिवारिक उत्तरदायित्वों का निर्वाह, सन्तानोत्पत्ति और सामाजिक प्रत्याशायों को पूरा करना इस अवस्था के प्रमुख संकृत्य (Task) हैं। इसी कारण इसे समस्याओं की उम्र भी कहते हैं। इस अवस्था में भूमिका निर्वाह वे लोग अधिक सफलतापूर्वक करते हैं जो पूर्व की अवस्थाओ में अति संरक्षण (Over protection) में नहीं रहे हैं। एरिक्सन (1960) ने इसे पार्थक्य-संकट का समय माना है क्योंकि इसमें व्यक्ति नये सिरे से जीवन प्रारंभ करता है।

i. इस अवस्था की मुख्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं-
ii. यह पुनरूत्पादक (Reproductive) अवधि है।
iii. इस अवस्था में व्यवहार-प्रतिमानों में स्थायित्व आ जाता है।
iv. इसे 'समस्या-आयु' (Problem age) कहा जाता है। क्योंकि इसमें समायोजन की समस्या बढ़ जाती है।
v. इसमें संवेगात्मक तनाव बढ़ता है।
vi. इस अवस्था में सामाजिक एकाकीपन (Isolation) बढ़ता है। क्योंकि पूर्व की अवस्था के मित्रों से सम्बन्ध धीरे-धीरे समाप्त होने लगता है।
vii. इसमें सृजनशीलता में वृद्धि होती है।

8. मध्यावस्था **(Middle Age)–** इस अवधि का प्रसार 40 से 60 वर्ष माना गया है। इस अवस्था में शारीरिक तथा मानसिक क्षमताएँ घटने लगती हैं। इसी अवधि के अन्त तक न©करी पेशावाले सेवानिवृत्त होते हैं। इससे स्पष्ट है कि इस अवधि में ह्रासात्मक परिवर्तनों की गति बढ़ जाती है। इसे प्रारम्भिक (Early) एवं अग्रवर्ती (Advanced)

अवस्थाओं में विभक्त कर सकते हैं। इनका प्रसार क्रमशः 40 से 50 वर्ष एवं 50 से 60 वर्ष है। इस अवस्था में क्षमताओं का ह्रास बढ़ चुका रहता है। अतः समायोजन बनाए रखने के लिए सक्रिय रहना चाहिए (फ्रेन्केल-ब्रुन्सविक, 1968; पारकर, 1960)। लोगों में धार्मिक एवं पारिवारिक प्रवृत्तियाँ बढ़ जाती हैं तथा उन्हें किशोरों के साथ समायोजन स्थापित करने में कठिनाई होती है और बूढ़ेपन का भय सताने लगता है। निराशा, एकाकीपन, बाधाएँ एवं स्वतन्त्रता की कमी जीवन को बोझिल बना देती है। (Archer, 1968; Muelder, 1958; Hurlock, 1975)। अतः इसमें बोरियल की अनुभूति होने लगती है तथा लोग आगे के बारे में सोचकर चिन्तित होने लगते हैं।

इस अवस्था की मुख्य विशेषताएँ निम्नांकित हैं-

- इस आयु में शक्ति हा ह्रास प्रारंभ हो जाता है।
- व्यक्ति अपनी आयु के प्रति वास्तविकता को स्वीकार नहीं करना चाहता है।
- व्यक्ति के प्रति लोगों का दृष्टिकोण बदलने लगता है, जैसे यह कि व्यक्ति में ह्रास बढ़ रहा है।
- यह संक्रमण काल कहा जाता है।
- यह ''खतरनाक'' अवधि है। क्योंकि शक्ति घटती है, चिन्ता और समस्याएँ बढ़ती हैं।
- व्यक्ति के आभास में (Appearance) में भद्दगी बढ़ती है।
- जीवन की उपलब्धियों में वृद्धि होती है।
- यह अपनी उपलब्धियों के मूल्यांकन की अवधि है।
- इस अवधि के अन्तिम दशकों में बेरियल बढ़ने लगती है।

9. वृद्धावस्था **(Old Age)–** वृद्धावस्था का प्रसार 60 वर्ष से जीवन के अन्त तक होता है। इस अवस्था में शारीरिक एवं मानसिक, दोनों क्षमताएँ कमजोर पड़ जाती हैं। व्यक्ति धीरे-धीरे अन्य लोगों पर आश्रित होने लगता है। जीवन के आकर्षण जाते रहते हैं एवं समायोजन की समस्या बढ़ती जाती है (हेनरी एवं क्युमिंग, 1953)। वृद्धावस्था को भी प्रारम्भिक एवं अग्रवर्ती अवस्थाओ में विभक्त कर सकते हैं। इनका प्रसार क्रमशः 60 से 70 वर्ष एवं 70 वर्ष से मृत्यु तक माना जाता है। कार्यविहीनता, निष्क्रियता एवं बुढापा

बढ़ जाने से चिन्ता बढ़ जाती है और विभिन्न प्रकार की समस्याएँ जीवन को बोझ बना देती हैं (Tenny, 1984)। इसकी विस्तृत चर्चा आगे की गई है।

वृद्धावस्था के विकासात्मक संकृत्य

1. घट रही शारीरिक शक्ति तथा स्वास्थ्य के प्रति समयोजन।

2. सेवानिवृत्ति ग्रहण तथा घटती आय के प्रति समायोजन।

3. पति-पत्नी की मृत्यु के प्रति समायोजन।

4. अपनी आयु-वर्ग के सदस्यों के साथ स्पष्ट सम्बन्ध की स्थापना।

5. सामाजिक एवं नागरिक कर्तव्यों एवं दायित्वों को पूरा करना।

6. रहने के लिए संतोषजनक स्थान की व्यवस्था करना।

भाषा विकास के प्रारम्भिक रूप (**Preliminary Forms of Language**)

बच्चों में शब्दों के स्पष्ट उच्चारण तथा उनके महत्व को समझने की योग्यता के प्रदर्शित होने के पहलो उनमें कुछ ऐसे व्यवहार देखने को मिलते हैं जिन्हें भाषा विकास का प्रारम्भिक रूप माना जाता है। इनमें क्रन्दन, विस्फोटक ध्वनियाँ एवं बलबलाना और हाव-भाव प्रमुख हैं। प्रारम्भ में बच्चों में बच्चों में इन्हीं विशेषताओं का प्रदर्शन होता है एवं उनमें भाषा विकास की नींव पड़ती है।

(i) क्रन्दन **(Crying)–** भाषा विकास के दृष्टिकोण से बच्चों में जन्म के समय तथा उसके बाद भी रोने वाला व्यवहार, क्रन्दन, काफी महत्वपूर्ण है। जन्मोपरान्त के प्रारम्भिक महीनों में क्रन्दन अधिक होता है। बच्चों में जन्मोपरान्त तीसरे सप्ताह में प्रदर्शित होने वाला क्रन्दन व्यवहार प्रथम सप्ताह के क्रन्दन से भिन्न मालूम होने लगता है। इसके बाद आयु बढ़ने के साथ-साथ क्रन्दन के स्वरूप में अन्तर आने लगता है और क्रन्दन के साथ हाव-भाव तथा शारीरिक गतियाँ भी प्रदर्शित होने लगती हैं। बच्चों में सम्प्रेषण का यह एक प्रारम्भिक रूप है (Ostwald & Peltzman, 1974)।

बच्चों में क्रन्दन (रोने) व्यवहार अनेक कारणों से उत्पन्न हो सकता है। बुलहर (1930) के अनुसार बच्चों में रोने का व्यवहार शारीरिक कष्ट, तीव्र, उत्तेजना, असुविधाजनक शारीरिक स्थिति (Body position)., निद्रा-व्यवधान, थकान, गति में बाधा, खेल सामग्री को हटाने (5 माह से), भय (8वें माह से) एवं अन्य व्यक्तियों से सम्पर्क समाप्त होने के कारण प्रदर्शित होता है। लगभग तीसरे माह के पूरा होने के पहले बच्चे अपनी तरफ ध्यान आकर्षित करने के लिए रोने लगते हैं। विभिन्न कारणों से उत्पन्न क्रन्दन की तीव्रता में अन्तर भी होता है (Kelting, 1934)।

(2) विस्फोटक ध्वनियाँ एवं बलबलाना **(Exposive Sound & Babbling)**– जन्मोपरान्त प्रथम महीने में ही क्रन्दन के अतिरिक्त बच्चों में अनेक प्रकार की साधारण ध्वनियाँ उत्पन्न होने लगती हैं। ब्लेन्ट (1917) इस अवधि में उत्पन्न होने वाली ध्वनियों को रिकार्ड करके इस निष्कर्ष पर पहुंची हैं कि प्रारम्भ में बच्चे माँ के साथ आ दा के साथ आ चा के साथ आ च इत्यादि ध्वनियाँ अधिक प्रदर्शित करते हैं। बाद में इन्हीं से अनेक शब्दों का निर्माण प्रारम्भ होता है। प्रायः 3-4 महीने की आयु में बच्चे, आ, अ, अः, अं, इ, ई, उ, ऊ इत्यादि ध्वनियाँ उच्चारित करते हैं। यदि ध्यान से सुना जाय तो उनकी ध्वनियाँ बहुत रोचक लगती हैं। इन्हें विस्फोटक ध्वनियाँ कहते हैं। इनकी उत्पत्ति स्वर प्रणाली में संयोगवश होने वाली गतियों के कारण होती है। बहरे (Deaf) बच्चों में भी इस प्रकार की ध्वनियाँ प्राप्त होती है। उपर्युक्त ध्वनियाँ अधिगम से प्रभावित नहीं होती है। इस प्रकार धीरे-धीरे ध्वनियों की संख्या बढ़ती है और बच्चों में वाणी विकास की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है। बच्चे 3-4 महीने में इच्छानुसार बोलना प्रारम्भ करते हैं एवं छठवें माह तक वे स्वर तथा व्यंजनों को मिलाकर कुछ कहने की योग्यता प्रदर्शित करने लगते हैं। इसे ही बलबलाने की अवस्था कहते हैं जिसमें बच्चे स्वर-व्यायाम (Vocal Exercise) करते हैं परन्तु वे इसका अर्थ समझने में असमर्थ होते हैं (Macnamara, 1972)।

बलबलाने की अवस्था तीसरे महीने से आठवें महीने तक मानी जाती है। इसमें बच्चों को स्वयं द्वारा उच्चारित ध्वनियों को सुनने में बहुत आनन्द आता है (Lennenberg & Lennenberg, 1975; Zelazo, 1972)। जब वे अकेले होते हैं तो ऐसा व्यवहार प्रायः करते हैं। सामान्य बच्चों में बलबलाना अधिक एवं गूंगे बच्चों में कम

प्रदर्शित होता है (Latif, 1934)। इस अवस्था में बच्चे प्रायः ऐसी ध्वनियाँ करते हैं जो उन्हें ज्यादा अच्छी लगती हैं, इस प्रकार वे आत्म-अनुकरण (Self-imitation) करते हैं। कुछ बच्चों में यह अवस्था द्वितीय वर्ष के प्रारम्भ में भी जारी रहती है (Bar-Adon & Lcopold 1971; Kaplan & Kaplan, 1971)।

(3) हाव-भाव **(Gestures)**––भाषा विकास के प्रारम्भिक रूपों में हाव-भाव का भी विशेष महत्व है। बच्चे शीघ्र ही हीन-भाव करना सीख लेते हैं और उनके माध्यम से दूसरों को अपने विचारों से अवगत कराना चाहते हैं। उदाहरण के लिए, यदि उन्हें भूख नहीं है तो वे दूध पिलाते समय सिर टेढ़ा कर लेते हैं, मुंह में से चम्मच बाहर कर देते हैं, ये पिलाया हुआ दूध बाहर कर देते हैं, पिलाते-खिलाते समय मँुह फेर लेते हैं या मुस्कुरा कर अपना हाथ ऊपर उठाते हैं ताकि उन्हें उठा लिया जाय, स्नान के समय भागते हैं, अकड़ते हैं ; (Squirming) या आगे-पीछे भागते (Wiggling) हैं और इस प्रकार अपना प्रतिरोध व्यक्त करते हैं। शब्दों के हाव-भाव तथा वयस्कों के हाव-भाव में केवल यह अन्तर होता है कि बच्चे शब्दों का उपयोग नहीं कर पाते और वयस्क अपने विचारों को व्यक्त करने के लिए शब्दों का उपयोग करने के साथ-साथ इन्हें पूरक संकेतों के रूप में प्रयुक्त करते हैं। क्रन्दन की भाँति हाव-भाव का भी सम्प्रेषण में महत्वपूर्ण योगदान होता है (Duncan, 1968; Kaplan & Kaplan, 1971; Michacl & Willis, 1968)।

(4) संवेगात्मक अभिव्यक्ति **(Emotional Expression)–** - बच्चों में सम्प्रेषण का पूर्ववाणी (Prespeech) अवस्था में एक और भी रूप दिखाई पड़ता है। इसमें वे अपने संवेगों को अपने चेहरे एवं शारीरिक परिवर्तनों द्वारा व्यक्त करते हैं। सुखद संवेगों की दशा में विशेष ध्वनि कूंजन (Cooing) तथा हँसी आदि प्रदर्शित होती है। जबकि दुखद संवेगों की दशा में क्रन्दन एवं पिनपिनाहट (Whimpering) आदि का प्रदर्शन होता है (Buck, 1975; Lewis, etc : 1971)। संवेगात्मक अभिव्यक्ति, जो कि माता-पिता द्वारा की जाती है, उससे भी बच्चों को संवेगात्मक भावों को समझने तथा सम्प्रेषण करने में सहायता मिलती है (Buck, 1973)। बच्चों में वाक क्षमता आ जाने के बाद भी संवेगात्मक अभिव्यक्ति सम्प्रेषण के एक प्रभावी रूप में जारी रहती है।

भाषा विकास के उच्च रूप **(Advanced Forms of Language Development)**

(1) बोध या समझ **(Comprehension) –** अन्य व्यक्तियों के कथन या निर्देशों को समझने की योग्यता बच्चों में शब्द-प्रयोग की क्षमता के पहले ही प्रदर्शित होने लगती है। ऐसे शब्द जिनका बोध बच्चों या किसी को भी होता है, उनकी संख्या अधिक तथा अपने शब्दकोष में ज्ञात शब्दों की संख्या कम होती है एवं इस तरह की विशेषता हर आयु के लोगों में पायी जाती है। उदाहरण के लिए, अपने देश में अंग्रेजी भाषा कुछ न कुछ सभी शिक्षित व्यक्ति जानते हैं। यदि वार्तालाप हो रहा है तो हम दूसरे व्यक्ति की बातों को समझ लेते हैं परन्तु उतना स्वयं नहीं बोल पाते हैं। इससे स्पष्ट है कि भाषा या शब्दों की समझ पहले ही विकसित हो जाती है जबकि शब्दों के उच्चारण या विचारों की वाचिक अभिव्यक्ति की क्षमता बाद में प्रदर्शित होती है। बोध के दृष्टिकोण से विभिन्न शारीरिक अभिव्यक्तियों (Bodily expressions) का विशेष महत्व है। इस अवस्था (13 से 18 माह) में बच्चों को निर्देश के साथ-साथ हाव-भाव भी उपलब्ध करना चाहिए ताकि बच्चे निर्देश एवं हाव-भाव में साहचर्य के आधार पर समझ की योग्यता विकसित कर लें (Kuhlman, 1922; Holmes, 1932)। टरमन एवं मेरिल के अनुसार बच्चों में दो वर्ष में दो और साढ़े तीन वर्ष में तीन निर्देशों की समझ आ जाती है। इस काल में अधिगम विशेष महत्व रखता है।

(2) शब्द-भण्डार का निर्माण **(Building a Vocabulary)**– आयु में वृद्धि तथा अधिगम परिस्थितियों का लाभ मिलने के कारण बच्चे धीरे-धीरे शब्दों को सीखना, बोलना प्रारम्भ करते हैं। इस प्रकार वे अपने लिए शब्द भण्डार का निर्माण करते हैं तथा उनका उपयोग भी करते हैं। शब्द भण्डार दो प्रकार का होता है।

(i) सामान्य शब्द-भण्डार **(General Vocabulary)**–इस अवधि में बच्चे वाणी या कथन के सभी भागों का अधिगम नहीं करते हैं बल्कि अपने उपयोग के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण शब्दों का अधिगम नहीं करते हैं बल्कि अपने उपयोग के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण शब्दों का ही अर्जन करते हैं। इस प्रकार शब्द-भण्डार में संज्ञा (Bodily expressions) शब्दों की अधिकता होती है। सर्वप्रथम बच्चे संक्षिप्त संज्ञा पदों का ही अधिगम करते हैं, जैसे, पापा, मामा इत्यादि। इन शब्दों के अधिगम पर घर के अन्य

सदस्यों के द्वारा बोले जाने वाले कथनों का भी प्रभाव पड़ता है। संज्ञा पदों के बाद बच्चों के शब्द-कोश में क्रिया, विशेषण, क्रियाविशेषण (Adverbs)., सम्बन्धसूचक शब्द या उपसर्ग इत्यादि का क्रमशः विकास होता है। सर्वनामों (Pronouns) का विकास सबसे बाद में होता है। विशेषणों के रूप पहले अच्छा, बुरा, शरारती इत्यादि का अधिगम होता है और क्रियाविशेषण के रूप में 'यहाँ' एवं 'वहाँ' इत्यादि का अर्जन होता है। प्रारम्भ में बच्चों को अपने लिए प्रयुक्त होने वाले शब्दों, में, मुझे मेरा का अधिगम करने में काफी कठिनाई अनुभव होती है इसलिए वे ऐसे शब्दों के अधिगम पर ध्यान नहीं देते हैं।

बच्चों के सामान्य शब्द-भण्डार में अनेक प्रकार के शब्द होते हैं। (गैसेल एवं थामसन, 1930: स्मिथ; 1926; मैकार्थी; 1930, कैराल; 1939 यंग; 1941;1942) गैसेल एवं थामसन (1930) ने 52 सप्ताह की आयु के बच्चों के शब्द भण्डार का विश्ल्ाोषण करके निष्कर्ष दिया है कि उनके शब्द भण्डार में भोज्य पदाथर्ो, वस्तुओं के गुण, क्रियाएँ या सम्बन्ध, निर्जीव वस्तु, व्यक्ति, ध्यानाकर्षण के लिए तेज आवाज, स्व, पशु, विस्मयादिबोधक एवं सामाजिक व्यवहार से सम्बन्धित मिलते हैं।

(ii) विशेष शब्द-भण्डार **(Special Vocabulary)–** बच्चों की आयु तथा सामाजिक सम्बन्धों में वृद्धि होने के कारण विचारों को संप्रेषित करने के दृष्टिकोण से सामान्य शब्द-भण्डार से कार्य नहीं हो पाता है और वे विशिष्ट शब्द भण्डार का निर्माण करते हैं। प्रारंभिक दो वर्षों में उनमें इस योग्यता का अभाव होता है परन्तु तीसरे वर्ष में विशिष्ट शब्द भण्डार का निर्माण प्रारम्भ हो जाता है। प्रारम्भ में उसे कठिन एवं विस्तृत शब्दों को सीखने में काफी कठिनाई होती है परन्तु मानसिक योग्यता में वृद्धि, स्वरयंत्र की परिपक्वता तथा अधिगम के परिणामस्वरूप विशिष्ट शब्दों का सीखना सरल होता रहता है। विशिष्ट शब्द-भण्डार के निर्माण की प्रक्रिया तथा उसके पक्षों का अध्ययन अनेक लोगों ने किया है। यह योग्यता तीसरे वर्ष से प्रदर्शित होने लगती है।

विशिष्ट शब्द भण्डार के निर्माण पर सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं वैयक्तिक कारकों का भी प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए, गन्दे पर्यावरण के बच्चों में गन्दे शब्दों का निर्माण शीघ्रता से होता है। कोनराडी शब्दों का निर्माण शीघ्रता से होता है। कोनराडी (Conradi, 1903) के अनुसार, लड़कियों की अपेक्षा लड़के गन्दे शब्दों का प्रयोग ज्यादा

करते हैं। इसी प्रकार गुप्त भाषा का प्रयोग लड़कियाँ अपेक्षाकृत अधिक करती हैं। उच्च आर्थिक एवं शैक्षिक पर्यावरण के बच्चों में रंग, मुद्रा तथा शिष्टाचार के शब्दों का विकास शीघ्र होता है।

बच्चों की आयु तथा अधिगम के अवसरों में वृद्धि के परिणामस्वरूप शब्द भण्डार का आकार भी बढ़ता है (Rezinick & Goldfield 1992)। स्मिथ (1926) एवं टरमन (1922) ने विभिन्न आयु स्तरों पर शब्द-भण्डार के आकार का अध्ययन किया है। मैक्कार्थी (1930) के अनुसार- शब्द-भण्डार के आकार पर लैंगिक भिन्नता तथा अन्य कारकों का भी प्रभाव पड़ता है। इन अध्ययनों से यह पता चला है कि प्रथम वर्ष में शब्द-भण्डार का आकार 2-3 शब्द तक, दो वर्षों में 272; तीन वर्षों में 896; चार वर्षों से 1,540; पाँच वर्षों में 2,072; छः वर्षों में 2,562, आठ वर्षों में 3,600; दस वर्षों में 5,400; बारह वर्षों में 7,200 एवं 18 वर्षों में 15,000 से 19,000 शब्दों तक पहँुच जाता है। स्कूल में प्रवेश लेने के बाद भण्डार में तीव्र गति से वृद्धि होती है। प्रथम ग्रेड का बालक 20-25 हजार शब्द, छठवें ग्रेड का बालक 50,000 और हाई-स्कूल का औसत बालक 80,000 तक शब्द सीख लेता है (Ferguson. 1973; Palermo, 1972; Storck & looft, 1973 Suppes, 1974; Hurlock 1978; 1984)। स्पष्ट है कि शब्द भण्डार का आकार प्रारम्भ में कम तथा बाद में तीव्र गति से बढ़ता है (Dehhirsch, 1970; Wehrabian, 1970)।

3. वाक्य निर्माण **(Forming Sentences)–** भाषा विकास के रूपों में तीसरी महत्वपूर्ण अवस्था वाक्यों के निर्माण की योग्यता का उत्पन्न होना है। प्रारम्भ में बच्चे प्रायः एक ही शब्द से अपनी विचाराधारा व्यक्त करते हैं। उदाहरण के लिए, यदि कोई बच्चा 'दीजिए' कहता है तो इसका तात्पर्य यह हुआ कि 'मुझे यह वस्तु दीजिए'। इस प्रकार के शब्दों के साथ वह संकेत या हाव-भाव भी व्यक्त करता है। यह योग्यता (शब्दों को जोड़कर वाक्य बनना) द्वितीय वर्ष के प्रारम्भ में उत्पन्न होती है और धीरे-धीरे इसकी क्षमता बढ़ती ही रहती है। बारह से अट्ठारह माह तक उनमें एक ही शब्द के वाक्य प्रदर्शित होते हैं परन्तु इसके बाद वे दो या इससे अधिक शब्दों को जोड़कर वाक्य बना लेते हैं। इस प्रकार उनमें भाषा विकास की प्रक्रिया पूर्णता की ओर अग्रसर होती है। दूसरे वर्ष के अन्त तक वे

छोटे-छोटे वाक्यों को बना लेते हैं, फिर भी संकेतों तथा हाव-भाव का उपयोग होता है (Muntz,1928)। वाक्य-निर्माण की प्रक्रिया को चार भागों में विभक्त कर सकते हैं।

i. एक शब्द के वाक्य की अवस्था **(Single Word Stage)**– इसका शुभारम्भ द्वितीय वर्ष के प्रारम्भ में होता है और लगभग 17.5 महीने तक चलता है।

ii. प्रारम्भिक वाक्य अवस्था **(Early Sentence Stage)–** यह अवस्था औसतन 18वें महीने में उत्पन्न होती है तथा आगामी सात माह तक चलती है। इस अवस्था के वाक्य अधूरे ूरे (Incomplete) होते हैं एवं प्रायः संज्ञा, क्रिया एवं विशेषण इत्यादि का उपयोग होता है।

iii. लघु वाक्य अवस्था **(Short Sentence Stages)–** इस प्रकार के वाक्यों में 3-4 शब्द पाये जाते हैं। यह अवस्था सामान्यतया द्वितीय एवं तृतीय वर्ष के बीच उत्पन्न होती है और कभी-कभी विलम्बित होने पर चार या पाँच वर्ष भी लग सकते हैं। इस अवस्था में भी 20 से 60 प्रतिशत वाक्य अधूरे होते हैं। वाक्य लघु होते हैं तथा 'संज्ञा' एवं 'क्रिया' की अधिकता और उपसर्गों, सहायक क्रियाओं इत्यादि का अभाव होता है।

iv. पूर्ण वाक्य अवस्था **(Complete Sentence Stage)–** पूर्ण वाक्यों के निर्माण की योग्यता का तात्पर्य है कि बच्चे इस अवधि में प्रौढ़ों की भाँति कथन के सभी भागों का उपयोग करके पूर्ण वाक्य बना सकते हैं। इस अवस्था का प्रदर्शन 3-4 वष्रों में होता है। छः वर्ष की आयु में बच्चों में इस अवस्था का पूरा प्रदर्शन होने लगता है।

वाणी-विकृतियाँ **(Speech Disorders)**

वाणी तथा विकास की अवधि में बच्चों में अनेक प्रकार की वाणी त्रुटियाँ एवं वाणी-दोष उत्पन्न होते हैं। इन त्रुटियों तथा दोषों को वाणी विकृतियों का नाम दिया गया है। इस तरह की विकृतियाँ इस कारण उत्पन्न होती हैं कि बच्चों के स्वतन्त्र का पूर्ण विकास नहीं हुआ रहता और अभ्यास की कमी रहती है। परन्तु इनमें वृद्धि के परिणामस्वरूप वाणी विकृतियाँ स्वतः अदृश्य होती रहती हैं। इसके अतिरिक्त गलत उच्चारण के अनुकरण, मांसपेशिय नियन्त्रण की कमी, त्रुटिपूर्ण श्रवण, दोषपूर्ण अधिगम,

पर्यावरणीय परिस्थितियों एवं शीघ्रता से बोलने की आदत के भी कारण वाणी-विकृतियाँ उत्पन्न होती हैं। परन्तु उचित प्रशिक्षण द्वारा इन विकृतियों को दूर किया जा सकता है। वाणी विकृतियाँ वाणी त्रुटियों एवं वाणी दोष में विभक्त की जाती हैं।

(1) वाणी त्रुटियाँ **(Speech Errors)–** बचपनावस्था में वाणी-त्रुटियाँ प्रायः उत्पन्न होती हैं परन्तु स्वतः अदृश्य होती रहती हैं। अशुद्ध अधिगम के कारण ऐसी विकृतियाँ पैदा होती हैं और माता-पिता को चाहिए कि गलत उच्चारण में रुचि लेने के बजाए उन्हें दूर करें। त्रुटियों के कुछ मुख्य उदाहरण इस प्रकार हैं।

(A) अप्रत्यक्ष या अकर्म **(Omission)–** प्रायः यह देखा जाता है कि बच्चे जटिल या बड़े शब्दों का उच्चारण करते समय कुछ अक्षरों का प्रत्यक्षीकरण ठीक से न कर पाने का कारण उन्हें छोड़ देते हैं। इसे अकर्म दोष कहते हैं। उदाहरण के लिए, 'पुस्तक' के लिए 'पुस्तक', बिस्कुट के लिए 'विकुट' कहना इत्यादि।

(B) अन्तरपरिवर्तन **(Interchange)–** यदि जटिल शब्द कभी-भी सुनने को मिलते हैं तो बच्चे उन्हें याद करने में कुछ अक्षरों का स्थान परिवर्तन करते देखे जाते हैं।

(C) स्थापन **(Speech-Defects)–** इस तरह की त्रुटि उस समय अनुभव की जाती है। जब बच्चे सीखे गए शब्दों में से कुछ पुराने अंशों के स्थान पर नवीन अक्षर लगा देते हैं। उदाहरण के लिए 'बेबी' के लिए 'बेब', 'ट्रेन' के लिए 'टेन' कहना इत्यादि।

(2) वाणी दोष **(Speech-Defects)–** बच्चों में वाणी सम्बन्धी त्रुटियों के अतिरिक्त वाणी दोष भी मिलते हैं। भाषा विकास में वाणी-दोषों के कारण बाधा उत्पन्न होती है। अतः यहाँ पर कुछ वाणी-दोषों की चर्चा की जायेगी।

(A) अशुद्ध उच्चारण **(Lisping)–** यदि बच्चे उपर्युक्त अक्षरों के स्थान पर अन्य अक्षर-ध्वनियों का उपयोग करके उच्चारण करते हैं तो इसे अशुद्ध उच्चारण कहते हैं। उदाहरण के लिए, 'प्रश्न' के लिए 'प्रस्न', कहना इत्यादि। इस प्रकार के दोष प्रायः जबड़े, दाँतों या होठों में विकृति एवं बचकानापन के कारण उत्पन्न होते हैं। स्कूल में प्रवेश लेने की आयु (School age) के पहले तक इस प्रकार दोष प्रायः मिलते हैं परन्तु उसके बाद अदृश्य होते जाते हैं। इसे नियंत्रित करना चाहिए।

(B) अस्पष्ट उच्चारण **(Slurring)–** अस्पष्ट उच्चारण या वाणी की अस्पष्टता भी बच्चों तथा कुछ वयस्कों में भी पाई जाती है। अस्पष्ट उच्चारण का मुख्य कारण होंठों, जिह्वा या जबड़ों की निष्क्रियता है। इसके अतिरिक्त यदि स्वर-अंगों (Vocal organs) में पैरालिसिस (Paralysis) का प्रभाव है तो भी अस्पष्ट उच्चारण की समस्या उत्पन्न होती है। यदि बच्चे शीघ्रता से बहुत-सी बातें कहना चाहते हैं तो भी अस्पष्ट उच्चारणों का प्रदर्शन होता है। शीघ्रता के कारण अस्पष्ट उच्चारण प्रायः स्कूल जाने की आयु से पहले प्रदर्शित होता है। उदाहरण के लिए, बच्चे 'रेडियों' के स्थान पर 'एडियो' का उच्चारण करते हैं।

(C) तुतलाना **(Stuttering)–** बच्चों तथा वयस्कों में भी तुतलाने का प्रदर्शन होता है। वैसे यह दोष कम लोगों में पाया जाता है। हरलॉक (1950) के अनुसार 6-7 वर्ष के बच्चों में एक प्रतिशत बच्चे इस दोष का शिकार होते हैं। तुतलाने के कारण प्रारम्भ में अक्षरों की पुनरावृत्ति कई बार होती है। तुतलाने का प्रभाव अलग-अलग व्यक्तियों में भिन्न-भिन्न पाया जाता है तथा एक निश्चित व्यक्ति के तुतलाने में समय समय में अन्तर होता है। तुतलाने का मुख्य कारण सांवेगिक तनाव एवं घबराहट माना जाता है। ब्लेन्टन (1942) ने 400 बच्चों पर अध्ययन करके यह निष्कर्ष दिया है कि ढ़ाई वर्ष की आयु में तुतलाने की समस्या सर्वाधिक होती है और उसके बाद पुनः स्कूल में प्रवेश करने की आयु में भी तुतलाना अनुभव किया जाता है।

ब्लेन्टन का मत है कि तुतलाने से छुटकारा पाना कठिन है। नवीन व्यक्तियों या परिस्थितियों के साथ होने पर तुतलाना प्रायः अनुभव किया जाता है। कुछ लोग नवीन व्यक्तियों का सामना होने पर, कुछ लोग अपने माता-पिता से सामना होने पर और कुछ लोग समूह या श्रोताओं का सामना करने पर तुतलाने लगते हैं। तुतलाने के कारण समायोजन कठिन हो जाता है। डेविस (1939) का निष्कर्ष है कि भाषा की परिपक्वता का तुतलाने से सम्बन्ध नहीं है।

(D) हकलाना- कुछ बच्चों तथा व्यक्तियों में हकलाने जैसे गंभीर दोष पाये जाते हैं। यह दोष तुतलाने से ज्यादा हानिकारक है। इस दोष के कारण बात करते-करते गला रुक जाता है या बात आरम्भ करते समय कुछ समय तक बात ही नहीं निकलती है। गले का अवरुद्ध हो जाना या बात का मँुह से न निकलना ही हकलाना कहा जाता है। इससे

व्यक्ति में तनाव आ जाता है तथा वह शर्मिन्दगी अनुभव करता है। ऐसा होने का सम्भावित कारण स्वर तंत्र्ा की मांसपेशियों का तनाव माना जाता है। इसके अतिरिक्त, तुतलाने की भाँति इस पर भी सांवेगिक तनाव एवं पेशीय तनाव इत्यादि का प्रभाव पड़ता है। हकलाने के साथ तुतलाने का भी दोष उत्पन्न हो सकता है। हकलाहट के बाद तनाव समाप्त होने पर व्यक्ति शीघ्रता से अनेक शब्द बोल जाता है और हकलाहट के पुनः प्रदर्शित होने पर बात रुक जाती है। हकलाने का दोष लड़कों में लड़कियों की अपेक्षया दो गुना अधिक पाया जाता है। इसी प्रकार तुतलाने व अस्पष्ट उच्चारण की समस्या भी बालकों में अधिक मिलती है।

मानसिक विरचनाओं के प्रकार

मानसिक विरचनाएँ अनेक प्रकार की हो सकती हैं परन्तु अभी तक यह निश्चित नहीं हो पाया है कि किन्हें मुख्य और किन्हें ग©ण माना जाये। अतः प्रस्तुत प्रसंग में कुछ महत्वपूर्ण विरचनाओं का ही उल्ल्ोख किया जायेगा।

1. दमन **(Repression)–** दमन का तात्पर्य चेतना में से किसी ऐसी इच्छा, विचार या अनुभव को निकाल देना है जो दुखद या क टकर है। कोलमैन (1975) के अनुसार, किसी खतरनाक इच्छा या असहनीय स्मृति को चेना से हटा देना ही दमन है। इसी कारण दमन को प्रेरित विस्मरण (Motivated forgetting) भी कहा जाता है। सामान्यतः समायोजन के लिए ऐसा करना लाभकारी होता है परन्तु सदैव ऐसा करना हानिकारक भी हो सकता है। फ्रायड के अनुसार दमित इच्छाएँ अचेतन मन में पड़ी रहती हैं और अनुकूल अवसर मिलने पर चेतना में आने का प्रयास करती हैं। इनका प्रदर्शन स्वप्नों में प्रायः होता है। व्यक्ति स्वभावतः भी असुखद घटनाओं को दमित करता रहता है। दमन में मिलती-जुलती परन्तु भिन्न, एक और भी मानसिक विरचना है जिसे उन्मूलन ;ैनचचतमेेपवदद्ध कहते हैं। इसमें व्यक्ति दुखद अनुभूतियों को चेतना से दूर करने के लिए किसी अन्य वस्तु पर अपना ध्यान केन्द्रित करने का प्रयास करता है।

2. उदात्तीकरण **(Sublimation)–** उदात्तीकरण से तात्पर्य उस मानसिक विरचना से है जिसके द्वारा व्यक्ति किसी लक्ष्य को प्राप्त करने में असफल होने पर किसी दूसरे लक्ष्य का

चयन करके अपनी इच्छा पूर्ति करने का प्रयास करता है। यद्यपि नवीन लक्ष्य से उसे उतनी संतुष्टि नहीं मिलती है जितनी कि मूल लक्ष्य से सम्भावित थी फिर भी ऐसा करने से उसकी समस्या का तत्काल समाधान हो जाता है और समायोजन स्थापित करने में भी सहायता मिलती है। जैसे, आक्रामकता के स्थान पर पहलवानी, मुक्केबाजी या ख्ोलकूल में भाग लेना। इससे मिलती-जुलती एक और विरचना है जिसे प्रतिस्थापन (Substitution) कहते हैं। इसमें भी व्यक्ति मूल लक्ष्य की जगह नया लक्ष्य चुनकर अपना काम चलाता है। जैसे, लैंगिक इच्छा की पूर्ति में असफल होने पर अश्लील गीत लिखना, अश्लील गीत गाना या हस्त मैथुन करना आदि। फ्रायड ने इन मानसिक विरचनाओं को भी महत्वपूर्ण बताया है।

3. क्षतिपूर्ति **(Compensation)–** यदि कोई व्यक्ति किसी लक्ष्य को प्राप्त करने में असफल हो जाता है जो उमसें हीन भावना (Inferiority comples)विकसित हो जाती है और उसकी क्षतिपूर्ति करने के लिए किसी अन्य लक्ष्य को प्राप्त करके संतुष्टि चाहता है। रच (1967) के अनुसार, क्षतिपूर्ति एक ऐसा प्रयास है जिसमें किसी कमी या आवांछित विशेषता को छिपाकर वांछित गुणों के विकास पर बल दिया जाता है। उदाहरणार्थ, शारीरिक सौन्दर्य में कमी होने पर व्यक्ति एक अच्छा वार्ताकार बनकर सामाजिक प्रशंसा अर्जित कर सकता है। परन्तु असुरक्षा एवं हीनता की भावना अत्यधिक हो जाने पर व्यक्ति क्षतिपूर्ति में असफल हो जाता है।

4. तादात्मीकरण **(Identification)–** - फ्रायड (1937) के अनुसार, समायोजन स्थापित करने में तादात्मीकरण का विशेष महत्व है। इन मानसिक विरचना के आधार पर व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति या आदर्श की विशेषताओं के अनुरूप अपने अन्दर विशेषताएँ विकसित करने का प्रयास करता है। जैसे बच्चे अपने माता-पिता या अन्य सदस्यों के व्यवहारों की नकल करके उनके जैसा व्यवहार करने का प्रयास करते हैं। आजकल युवक एवं युवतियाँ फिल्मी कलाकारों के हावभावों की नकल करते देख्ो जा रहे हैं। इससे स्पष्ट है कि तादात्मीकरण अपनी कमजोरी छिपाने का एक तरह का प्रयास है। कभी-कभी व्यक्ति संभावित कष्ट से बचने के लिए उस व्यक्ति के अनुसार कार्य करने लगता है जो उसे कष्ट पहुंचाने में सक्षम है (Bettelheim)।

5. युक्तकीकरण **(Rationazation)**– जब व्यक्ति अपनी असफलताओं पर पर्दा डालने के प्रयास में वास्तविक कारण के स्थान पर अवास्तविक कारणों के आधार पर किसी बात का औचित्य सिद्ध करता है तो उस प्रक्रम को युक्तकीकरण कहते हैं। कोलमैन (1975) ने भी लिखा है, इस विरचना में व्यक्ति अपने द्वारा किए जा रहे या किए जाने वाले कार्यो को तर्कों के आधार पर उचित ठहराने का प्रयास करता है। उस लोमड़ी की कहानी सबको याद होगी जिसने अंगूर न पाने की स्थिति में कहा कि 'अंगूर खट्टे थे', इसलिए नहीं तोड़ा। इसी प्रकार परीक्षा में असफल होने पर यह कहना कि प्रश्न पाठ्यक्रम से नहीं पूछे गए या स्वास्थ्य खराब हो गया था, युक्तकीकरण का उदाहरण है। इससे स्पष्ट है कि युक्तकीकरण का स्वरूप तार्किक होता है परन्तु उसका आधार गलत होता है। इस विरचना से समायोजन स्थापित करने में सहायता अवश्य मिलती है परन्तु इसका आश्रय अधिक लेने पर व्यक्ति का विचार अवास्तविक हो जाता है।

6. प्रक्षेपण **(Projection)**– द्वन्द्व या कुण्ठा के परिणामों में प्रक्ष्ोपण एक महत्वपूर्ण प्रक्रम है। इस विरचना में भी समायोजन में सहायता मिलती है। इस विरचना के कारण व्यक्ति अपनी कमजोरियों एवं दोषों को दूसरों पर आरोपित करता है या दूसरों को माध्यम बनाता है। इस प्रक्रम के कारण व्यक्ति अपनी असफलता के लिए स्वयं को उत्तरदायी न मानकर दूसरों को जिम्मेदार ठहराता (Page, 1962)। सीयर्स (1936) के भी अनुसार, इस विरचना का प्रकार्य अपने दोषों को दूसरों पर अ्ोरापित करना है। जैसे, परीक्षा में असफल होने पर छात्र अपने अध्यापकों या परीक्षकों को दोषी ठहरा सकता है। माक्र्स (1976) ने प्रक्षेपण को अस्वीकार करने का एक विशेष रूप कहा है (A special form of dential occurs when an individual refuses to admit the existence of Socially undesirable behaviour or impluse in himself, instead refers them to others)। इससे यह स्पष्ट है कि व्यक्ति अपनी असफलताओं का कारण दूसरों को मानकर अपनी प्रतिष्ठा (Self-esteem) की रक्षा करने तथा सामाजिक सहानुभूति एवं अनुमोदन (Approval) प्राप्त करने का प्रयास करता है।

फ्रायड के अनुसार, प्रक्ष्ोपण वह प्रक्रम है जिसमें इदम् (Id) की इच्छापूर्ति में असफल होने पर अहम् (Ego) बाहरी कारणों को उत्तरदायी मानता है। क्योंकि यदि स्वयं

को उत्तरदायी मान लिया जाये तो मानसिक तनाव अधिक उत्पन्न होगा। अन्य मनोवैज्ञानिकों का विचार है कि प्रक्ष्ोपण विचरना के परिणामस्वरूप व्यक्ति वास्तविकता से भागना चाहता है। इसी कारण वह अपनी असफलताओं के लिए दूसरों को दोषी ठहराता है (Kleinmuntz 1974)।

7. बौद्धिकीकरण **(Intellectualization)–** मानसिक विरचना का यह वह प्रक्रम है जिसके परिणाम स्वरूप व्यक्ति दुखद, भयपूर्ण या कष्टकर परिस्थितियों के प्रति विमुखता या तटस्थता की भावना विकसित करता है ताकि उसका व्यवहार या कार्य संबंधित संवेगात्मक दशाओं से प्रभावित न हो सके। डॉक्टरों में इस विरचना को देखा जा सकता है। वे चीड़-फाड़ करते समय रोगियों को कष्ट में देखकर भी कष्ट का चेतन अनुभव नहीं करते हैं। उनके लिए ऐसा करना भी आवश्यक है, क्योंकि यदि वे भी भावुक हो जायें तो शल्यक्रिया में बाधा पड़ सकती है (Mahl, 1971; Coleman, 1972)।

8. अकृतन **(Undoing)–** अकृतन वह मानसिक विरचना है जिसमें व्यक्ति, किसी अवांछित कार्य, व्यवहार या इच्छा को प्रतिबंधित कर देता है या त्याग कर देता है (Hilgard etc. 1975)। उदाहरणार्थ, जब हम कोई गलत कार्य कर जाते हैं तो उसका आभास होने पर हम प्रायश्चित करते हैं। 'क्षमा कीजिएगा', 'हमें अफसोस है' इत्यादि प्रतिक्रियाएँ अकृतन के उदाहरण हैं। असामान्य व्यवहारों के भी नियंत्रण में इस विरचना का उपयोग है। इस विरचना का संस्कारों से भी संबंध है। क्योंकि संस्कारों के द्वारा हम उचित और अनुचित में अन्तर सीखते हैं।

9. प्रतिक्रिया संरचना **(Reaction Formation)–** प्रतिक्रिया संरचना वह मानसिक विरचना है जिसके परिणाम स्वरूप व्यक्ति किसी तीव्र प्रेरक या इच्छा को छिपाने के प्रयास में उसके विपरीत व्यवहार करता है (हिलगार्ड आदि, 1975)। इससे संकेत मिल रहा है कि यह भी एक प्रकार का प्रक्षेपण है। जैसे कोई व्यक्ति जो कि अवाँछित कार्यों में लिप्त हो स्वयं को समाजसेवा के कार्यों में समर्पित करके सामाजिक प्रशंसा एवं सम्मान प्राप्त करने का प्रयास कर सकता है।

10. विस्थापन **(Displacement)–** विस्थापन वह मानसिक विरचना है जिसके द्वारा व्यक्ति को चिन्ता को नियंत्र्ाित या कम करने में सहायता मिलती है तथा इसके साथ-साथ अवांछित प्रेरक या इच्छा की किसी न किसी रूप में पूर्ति भी होती है। हिलगार्ड आदि (1975) के अनुसार, विस्थापन की दशा में असंतुष्ट इच्छा या प्रेरक को नवीन दिशा दी जाती है। उदाहरणार्थ, एक बालक को किसी अन्य पर क्रोध आ रहा है, लेकिन उसकी अभिव्यक्ति संभव नहीं हो पा रही है तो वह अन्य छोटे बच्चों पर अपना गुस्सा उतार सकता है या सामान आदि को नुकसान पहुंचा सकता है।

फ्रायड के अनुसार, आक्रामक एवं लैंगिक इच्छाओं को नियंत्रित करने में इसका अत्यधिक महत्व है। यह विरचना इच्छा को परिवर्तित किए बिना ही संतुष्टि का विकल्प प्रस्तुत करती है। जैसे, काम वासना में असफल व्यक्ति कला, कविता या संगीत के माध्यमों से सौन्दर्यानुभूति कर सकता है। इसी प्रकार, आक्रामकता के प्रदर्शन का अवसर न मिल पाने पर खेलकूदों (जैसे कबड्डी) में भाग लेकर उसकी संतुष्टि की जा सकती है।

उपर्युक्त मानसिक विरचनाओं के विवेचन से स्पष्ट हो रहा है कि इनके द्वारा व्यक्ति को चिन्ता, कुण्ठा तथा अन्य तनावपरक दशाओं में संतुलन स्थापित करने में सहायता मिलती है। संक्ष्ोप में, मानसिक विरचनाओं से हमें अग्रांकित रूपों में समायोजन स्थापित करने में सहायता मिलती है-

i. मानसिक विरचनाओं से हमें सोचने के लिए अतिरिक्त समय तथा अवसर मिलता है जो समायोजन में सहायक होते हैं।
ii. मानसिक विरचनाएँ नवीन लक्ष्य तथा उपाय प्रस्तुत करके समायोजन को उचित दिशा देती है।
iii. युक्तीकरण से भविष्य में व्यवहार को सुधारने में सहायता मिलती है।

प्रस्तुत प्रसंग में यह भी ध्यान देने योग्य है कि मानसिक विरचनाओं से समस्याओं का अस्थाई समाधान ही मिल पाता है और व्यक्ति का दृष्टिकोण अवास्तविक हो जाता है। अतः व्यक्ति को चाहिए कि वह सदैव वास्तविकता को महत्व दे और आवश्यकतानुसार अपने व्यवहार में सुधार करे।

किशोरावस्था में होने वाले परिवर्तन **(Changes During Adolescence)**

किशोरावस्था में अनेक प्रकार के परिवर्तन होते हैं और होने वाले परिवर्तनों के परिणामस्वरूप व्यक्ति में परिपक्वता आती है और वह प्रौढ़ों जैसा व्यवहार करने में सफल होता है। इस अवस्था में परिवर्तनों में मुख्य परिवर्तन निम्नलिखित हैं-

1. शारीरिक परिवर्तन **(Phisical Changes)–** शारीरिक वृद्धि की प्रक्रिया न तो यौवनारम्भ और न ही प्रारम्भिक किशोरावस्था तक पूरी हो पाती है। इस अवस्था में आन्तरिक परिपक्वता अधिक होती है एवं बाहरी विकास कम दिखाई पड़ते हैं। शारीरिक परिवर्तनों में वैयक्तिक भिन्नता का प्रभाव देखा जाता है। यौवनारम्भ के बाद बालकों में विकास की गति बालिकाओं की तुलना में अधिक होती है, परिणामस्वरूप यौवनारम्भ के बाद बालकों की ऊँचाई, शक्ति और माँसपेशियों में अधिक वृद्धि पाई जाती है तथा यह श्रेष्ठता आगे भी बनी रहती है। किशोरावस्था की अवधि आगे बढ़ने पर व्यवहार में पाया जाने वाला भद्दापन (Awkwardness) समाप्त होता रहता है। बालिकाओं में अधिकतम शक्ति (External Changes) 17 वर्ष की आयु में आ जाती है, जबकि बालकों में अधिकतम शक्ति 21-22 वर्ष की आयु में आ पाती है। किशोरावस्था में होने वाले प्रमुख शारीरिक परिवर्तन इस प्रकार हैं।

बाह्य परिवर्तन **(External Changes)**

ऊँचाई **(Height)–** - बालिकाओं में परिपक्व ऊँचाई 17-18 वर्ष और बालकों में एक-दो वर्ष बाद आती है।

वजन **(Weight)–** ऊँचाई में होने वाले परिवर्तनों की भाँति वजन में भी समय सारणी के अनुसार परिवर्तन होते हैं। उन भागों के वजन में वृद्धि अधिक होती है जिनमें पहले वसा (Fat) कम थी।

लैंगिक ग्रंथियाँ **(Sexual Glands)–** उत्तर किशोरावस्था में लैंगिक ग्रन्थियों का आकार (दोनों वर्गों में) पूरा हो जाता है। परन्तु कार्य के दृष्टिकोण से परिपक्वता कई वर्षों बाद आती है।

गौण लैंगिक विशेषताएँ **(Secondary Sex Characteristics) –** उत्तर किशोरावस्था तक गौण लैंगिक विशेषताएँ परिपक्व हो जाती हैं।

आन्तरिक परिवर्तन **(Internal System) –-**

पाचन तंत्र **(Digestive System)** आमाशय लम्बा तथा कम नलिकादार हो जाता है। आँत की लम्बाई तथा परिधि भी बढ़ती है तथा माँसपेशियाँ भी मोटी हो जाती हैं। यकृत ;स्मअमतद्ध का वजन बढ़ता है तथा ग्रासनली लम्बी हो जाती है।

रक्तसंचार **(Cireulatory System)–** हृदय में तीव्र गति से वृद्धि; जन्म की तुलना में 17-18 वर्ष में यह लगभग 12 गुना भारी हो जाता है। रक्त वाहनियों की लम्बाई तथा मोटाई हृदय के साथ परिपक्वता का स्तर प्राप्त

करती है।

श्वसन तंत्र **(Respiratory System)–** बालिकाओं के फेफड़े लगभग 17 वर्ष में परिपक्व हो जाते हैं जबकि बालिकों में यह परिपक्वता कई वर्ष बाद आती है।

अन्तस्रावी ग्रन्थियाँ **(Endocrine Glands)–** यौवनारम्भ में जनन ग्रन्थियों की क्रियाशीलता बहुत बढ़ जाती है और पूर्व किशोरावस्था में आन्तरिक ग्रन्थि प्रणाली में असन्तुलन आ जाता है। लैंगिक ग्रन्थियाँ तीव्रता से बढ़ती हैं तथा लैंगिक कार्य की क्षमता आ जाती है। परन्तु आकार सम्बन्धी परिपक्वता उत्तर या प्रारम्भिक किशोरावस्था में ही आ पाती है।

शारीरिक ऊतक **(Body tissues)–** कंकाल की वृद्धि औसतन 18वें वर्ष में रूक जाती है। हड्डियों की अपेक्षा ऊतकों का विकास हड्डियों में परिपक्वता आने के बाद भी जारी रहता है।

2. तूफान एवं प्रतिबल **(Storm & Stress)–** किशोरावस्था को ''तूफान एवं प्रतिबल'' की अवधि के नाम से जाना जाता है ;भ्ंससए 1905द्ध। क्योंकि इस अवधि में शारीरिक एवं ग्रन्थीय ;ळसंदकनसंतद्ध परिवर्तनों के कारण संवेगात्मक तनाव में अत्यधिक वृद्धि हो जाती है। चुंकि किशोरावस्था में कोई नवीन वृद्धि नहीं होती बल्कि य©वनारंग के समय

शुरू हुई वृद्धि पूर्णता प्राप्त करती है, अतः संवेगात्मक उथल-पुथल के अन्य कारणों पर विचार करना होगा।

किशोरावस्था में अत्यधिक संवेगात्मक तनाव का प्रमुख कारण सामाजिक परिस्थितियाँ हैं। इस अवस्था में आने पर किशोर से प्रौढ़ों जैसा व्यवहार करने की प्रत्याशा की जाती है तथा सामाजिक दबाव भी बढ़ता है। चुंकि इन सामाजिक दबावों से किशोर अभ्यस्त नहीं होता है, इसलिए उसमें तनावों का उत्पन्न होना स्वाभाविक है। किशोरावस्था के बाद अध्ययन-कार्य भी समाप्त हो जाता है तथा व्यक्ति को अपना भविष्य भी तय करना पड़ता है। इन कारणों से तनाव वृद्धि होती है और व्यक्ति इस तरह के तूफानों एवं तनावों से घिर जाता है। इस अवस्था में विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण भी अपनी चरम सीमा पर होता है। यह भी संवेगात्मक अस्थिरता बढ़ाने में काफी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

संवेगों का स्वरूप- किशोरावस्था के संवेग तीव्र, अनियमित तथा असंगत भी होते हैं, परन्तु आयु तथा अनुभवों में वृद्धि के कारण इनमें सुधार होता है। गेसेल इत्यादि (1956) के अनुसार चौदह वर्ष की आयु वाले बच्चे प्रायः चिड़चिड़े (Irritate)होते हैं। उनमें उत्तेजनशीलता (Excitability) बढ़ जाती है और अपने विचारों तथा भावनाओं को नियन्त्रित करने के स्थान पर दूसरों पर क्रोधित हो जाते हैं। परन्तु सोलहवें वर्ष में इसमें सुधार दिखाई पड़ता है। इससे स्पष्ट है कि प्रारम्भिक किशोरावस्था के समाप्त होते-होते संवेगात्मक स्थिरता आने लगती है।

संवेगों की अभिव्यक्ति- किशोरावस्था के संवेग बाल्यावस्था के संवेगों जैसे ही होते हैं परन्तु इस अवस्था में संवेगों की उत्पत्ति का कारण अलग होता है तथा उनकी अभिव्यक्ति पर नियंत्र्ाण में भी अन्तर पाया जाता है। यथा, यदि इस अवस्था में उन्हें 'बालक' मानकर व्यवहार किया जाता है। यथा, यदि इस अवस्था में उन्हें 'बालक' मानकर व्यवहार किया जाता है या उनके साथ 'न्यायोचित' व्यवहार नहीं किया जाता है तो वे प्रायः चिढ़ जाते हैं और क्रोधित हो उठते हैं। वे आत्मनियंत्र्ाण खोने के स्थान पर चुप रहकर या खुलकर आलोचना करके अपना क्रोध व्यक्त कर सकते हैं। इसके विपरीत बालक हिंसा पर उतारू हो सकता है। किशोरों में दूसरों की वस्तुओं से ईष्र्या भी पैदा हो सकती

है। इससे भी संवेगात्मक स्थिति बिगड़ती है। इस पर नियंत्र्ाण करने के लिए वे स्वयं भी धनापार्जन का रास्ता ढूढने का प्रयास करने लगते हैं।

संवेगात्मक परिपक्वता- संवेगात्मक परिपक्वता का आशय यह है कि किशोरावस्था के अन्त तक उनमें संवेगों पर उचित नियंत्रण स्थापित करने की योग्यता आ जाय। वे उचित-अनुचित का ध्यान रखकर संवेगों का प्रदर्शन करें। इससे उनमें संवेग उत्पन्न करने वाले उद्दीपकों की अनदेखी करने की भावना विकसित होगी। इसके अतिरिक्त उनकी संवेगात्मक अनुक्रियाओं में भी परिपक्वता प्रदर्शिता होनी चाहिए। अर्थात् एक जैसी परिस्थितियों में समान अनुक्रिया उत्पन्न होनी चाहिए।

संवेगों पर नियंत्रण स्थापित करने के लिए यह भी उपयोगी है कि वे अपनी समस्याओं पर अन्य लोगों से विचार-विमर्श करें। परन्तु, इसके लिए आवश्यक है कि सलाहकार व्यक्ति उनका विश्वासपात्र्ा होना चाहिए तथा यह विश्वास दिलाना चाहिए कि उनकी भावनाओं, विचारों और दृष्टिकोणों को गोपनीय रखा जायेगा। इससे संवेगात्मक स्थिरता तथा परिपक्वता प्रोत्साहित होगी। गेसेल आदि (1956) का मत है कि किशोरावस्था के अन्त तक संवेगात्मक परिपक्वता आ जाती है और संवेगात्मक उथल-पुथल थम जाती है।

3. सामाजिक परिवर्तन **(Social Changes) –** किशोरावस्था में सामाजिक विकास द्रुत गति से होता है। वास्तविकता तो यह है कि इस अवस्था में सामाजिक परिस्थितियों के प्रति समायोजन करने में उन्हें अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। उदाहरण के लिए, उन्हें परिवार के बाहर स्कूल में लोगों के साथ तथा विपरीत लिंग के साथ समायोजन स्थापित करना पड़ता है। इनमें विपरीत लिंग के साथ समायोजन स्थापित करने की समस्या का सामना करना पड़ता है। इस अवस्था में सामाजिक विस्तार भी काफी बढ़ जाता है एवं सामाजिक व्यवहारों में परिवर्तन तथा परिमार्जन भी होता है। अन्यथा सामाजिक समायोजन स्थापित करने में कठिनाई होगी। किशोरावस्था में निम्नलिखित सामाजिक परिवर्तन विशेष रूप से दिखाई पड़ते हैं-

i. समकक्ष-समूहों का प्रभाव **(Peer-Group Influences)**– इस अवस्था में व्यक्ति के व्यवहार पर परिवार की अपेक्षा-समूहों का अधिकतम प्रभाव पड़ता है। होराक्स एवं बेनीमॉफ (1966) के अनुसार, किशोरों की वास्तविक दुनिया ;त्मंस ूवतसकद्ध समकक्ष-समूह हो जाते हैं। समकक्ष-समूहों के सम्पर्क में आने पर व्यक्ति अपने 'स्व' के बारे में नवीन धारणाएँ विकसित करता है।

ii. सामाजिक व्यवहार में परिवर्तन **(New Values in Selection of Friends)–** किशोरावस्था में होने वाले परिवर्तनों में सामाजिक व्यवहारों में होने वाले परिवर्तनों का विशेष महत्व है। इस अवस्था में विपरीत लिंग के प्रति दूरी समाप्त हो जाती है तथा आकर्षण और खिचाव बढ़ जाता है। सामाजिक कार्यों में व्यक्ति अधिक से अधिक भाग लेने लगता है और इसके परिणामस्वरूप उनमें सामाजिक समझ बढ़ती है तथा आत्मविश्वास (Self confidence) में भी वृद्धि होती है।

iii. नवीन सामाजिक समूह **(New Social Grouping)–** किशोरावस्था में नवीन सामाजिक समूहों का निर्माण होता है तथा बाल्यावस्था के खेलों में उनकी रुचि घट जाती है और वह अधिक से अधिक औपचारिक सामाजिक क्रियाओं में भाग लेकर नवीन समूहों की संरचना करता है। वह घनिष्ठ मित्रों का चयन करता है, उनसे नवीन समूहों की संरचना करता है तथा इनके सहयोग से बड़े-बड़े समूहों या भीड़ों का भी सदस्य बन जाता है। लेकिन ऐसे समूहों में सामाजिक दूरी अपेक्षाकृत अधिक होती है। आगे चलकर वे संगठित समूहों का निर्माण करते हैं तथा मित्र-मण्डली (Gang) भी बनाते हैं।

iv. मित्रों के चयन में नवीन मूल्य **(New Values in Selection of Friends)**– किशोरावस्था में मित्रों के चुनाव का मापदण्ड बदल जाता है। वे स्कूल या पड़ोस के बाहर के उन लोगों को मित्र बनाना प्रारंभ कर देते हैं जिनकी रुचियाँ तथा मूल्य उनके अपने जैसे होते हैं (Rivenbark, 1971)। जोजेफ (1969) का मत है कि किशोर उन्हीं मित्रता करना चाहता है जो विश्वसनीय लगता है। अब वह विपरीत यौन के सदस्यों से सम्पर्क बढ़ाना चाहता है तथा अधिक से अधिक लोगों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास भी करता है।

v. सामाजिक स्वीकृति के नवीन मूल्य **(New Values in Social Acceptance)–** किशोरावस्था में सामाजिक स्वीकृतियों (Social acceptances) के लिए नवीन मूल्यों का विकास किया जाता है। समकक्ष-समूहों (Peer-groups) के आधार पर विकसित मूल्यों को ध्यान में रखते हुए अन्य लोगों को स्वीकृत या अस्वीकृत किया जाता है। किसी एक मूल्य के आधार पर प्रत्येक सामाजिक वस्तु या व्यक्ति को स्वीकृत/अस्वीकृत नहीं किया जाता है। इसके लिए वे विशेषताओं का संघात या समूह (Constellation of traits) विकसित करते हैं। संघात दो प्रकार के हो सकते हैं। इन्हें स्वीकृति लक्षण-समष्टि (Acceptance Syndrome) एवं अस्वीकृत लक्षण-समष्टि (Regection syndrome) कहते हैं।

स्वीकृति लक्षण- समष्टि के कारण व्यक्ति समकक्ष-समूहों या व्यक्तियों के साथ होना चाहता है या उनकी प्रतिष्ठा बढ़ाने का प्रयास करता है। अस्वीकृति लक्षण-समष्टि के कारण व्यक्ति किसी समकक्ष-समूह या व्यक्ति से अलग या असम्बद्ध रहना चाहता है।

vi. नेताओं के चयन में नवीन मूल्य **(New Values in Selection of Leaders)–** नेताओं के चयन में नवीन मूल्यों का विकास होता है। इस अवस्था में व्यक्ति यह समझने लगता है कि लोगों की दृष्टि में नेता समूह का प्रतिनिधि है, अतः उसे उच्च योग्यता का होना चाहिए। इस अवस्था में नेतृत्व अनेक प्रकार का हो जाता है- जैसे, सामाजिक नेतृत्व, बौद्धिक नेतृत्व, धार्मिक नेतृत्व और सामुदायिक नेतृत्व इत्यादि। सफल नेतृत्व के लिए समुचित योग्यता वाले व्यक्तियों का ही चयन नेता के रूप में किया जाता है। व्यक्ति यह अनुभव करने लगता है कि नेता में समूह के प्रति ईमानदारी होनी चाहिए, उसमें सामाजिक अन्तर्दृष्टि (सूझ) तथा समूह के कल्याण की भावना होनी चाहिए। इस प्रकार स्पष्ट है कि बाल्यावस्था की तुलना में किशोरावस्था में नेताओं के चयन का मापदण्ड बदल जाता है।

4. रुचियों में परिवर्तन **(Changes in Interests)–** किशोरावस्था में रुचियों में अनेक प्रकार के परिवर्तन दिखाई पड़ते हैं। रुचियों में परिवर्तन तथा रुचियों के विकास पर अनेक कारकों का प्रभाव पड़ता है। इसमें बुद्धि, पर्यावरण, रुचियों के विकास का अवसर, रुचियों की प्रतिष्ठा, समकक्ष मित्रों की रुचियाँ, समूह में व्यक्ति की प्रास्थिति, जन्मजात

क्षमताएँ, परिवार का दृष्टिकोण तथा अन्य अनेक कारकों का विशेष स्थान है। रुचियों के विकास तथा परिवर्तन पर लैंगिक भिन्नता का भी प्रभाव स्पष्ट रूप में पड़ता है। इस अवस्था में बाल्यावस्था की रुचियों से लोगों का लगाव कम हो जाता है या समाप्त हो जाता है और नवीन रुचियों का विकास होता है। आयु तथा अनुभवों में वृद्धि के कारण रुचियों में परिवर्तन तथा स्थिरता आती है और साथ ही साथ रुचियाँ अपेक्षाकृत सीमित हो जाती है। प्रत्येक व्यक्ति की कुछ विशिष्ट रुचियाँ होती हैं और कुछ रुचियाँ सभी व्यक्तियों में पायी जाती हैं। किशोरावस्था की रुचियों को निम्नलिखित वगर्ोंं में विभक्त कर सकते हैं-

i. मनोरंजनात्मक रुचियाँ **(Recreational Interests)–** खेल, कूद, विश्राम, यात्रा, विशेष शौकें, नृत्य, पढ़ना, चलचित्र देखना, रेडियो-टेलीविजन का आनन्द, दिवास्वप्न आदि।
ii. सामाजिक रुचियाँ**(Social Interests)–** पार्टियों तथा उत्सवों में भाग लेना नशीली वस्तुओं का सेवन, वाद-विवाद, दूसरों को सहायता पहुंचाना, सांसारिक घटनाओं में दिलचस्पी, आलोचना तथा सुधार सम्बन्धी आदतें।
iii. व्यक्तिगत रुचियाँ **(Personal Interests)**–शारीरिक प्रदर्शन, सामाजिक, स्वीकृति, वेशभूषा, स्वतन्त्रता, धनोपार्जन।
iv. शैक्षिक रुचियाँ **(Educational Interests)–** शिक्षा ग्रहण करना, अच्छे से अच्छे अंक प्राप्त करना, परीक्षाओं में श्रेष्ठता प्रदर्शित करना।
v. व्यावसायिक रुचियाँ **(Vocational Interests)–** भविष्य के बारे में सोचना व्यवसायों का चयन, लड़कों द्वारा आकर्षक व्यवसायों की इच्छा तथा लड़कियों द्वारा व्यवसायों में सुरक्षा की इच्छा। लड़कियों में अध्यापन तथा आयुर्विज्ञान के प्रति अधिक रुचि होती है।
vi. धार्मिक रुचियाँ **(Religious Interests)–** धार्मिक कार्यों में भाग लेना धार्मिक स्थानों का दर्शन, धार्मिक आस्था में परिवर्तन तथा धार्मिक मान्यताओं के प्रति सन्देह।

5. नैतिकता में परिवर्तन **(Changes in Morality)–** चुंकि किशोरावस्था में सामाजिक समझ का अधिक से अधिक विकास हो जाता है, इसलिए किशोर यह समझने में समर्थ होता है कि उसका समूह या समाज उससे किस प्रकार के व्यवहार की प्रत्याशा करता है। वह व्यवहारों तथा आदतों में परिवर्तन करता है तथा अपना व्यवहार सामाजिक परिस्थितियों के अनुकूल बनाता है। पियाजे (1969) ने लिखा है, किशोरावस्था व्यक्ति में संज्ञानात्मक योग्यता सम्बन्धी 'औपचारिक सक्रिया की अवस्था' (Stage of formal operations) है। इस अवस्था में वे समस्याओं समाधान हेतु अनेक दृष्टिकोणों से विचार कर सकते हैं क्योंकि उनमें संज्ञानात्मक योग्यता का विकास हो चुका रहता है। किशोरावस्था में नैतिक विकास के लिए निम्नलिखित प्रकार के संकृत्य ;जं्ेोद्ध करने पड़ते हैं। ऐसा न करने से नैतिकता का उचित विकास नहीं हो पाता है।

i. नैतिक संप्रत्ययों में परिवर्तन **(Change in Moral Concepts)–**नैतिक विकास तथा समायोजन के लिए व्यक्ति को प्रारंभिक जीवन में स्थापित नैतिक संप्रत्ययों में परिवर्तन करना पड़ता है तथा नवीन नैतिक संप्रत्ययों को सीखना पड़ता है। किशोरावस्था में नैतिक संप्रत्ययों में परिवर्तन उत्पन्न करने के लिए उन्हें निर्देश देना चाहिए। यह नहीं समझना चाहिए कि वे पूर्णतया परिपक्व हो गए हैं और उन्हें निर्देशों की आवश्यकता नहीं है।

ii. नैतिक संहिता का निर्माण **(Building a Moral Code)–** किशोरों को नैतिक परिवर्तन के अन्तर्गत जो दूसरा कठिन कार्य करना पड़ता है वह यह है कि उन्हें नैतिक संहिता का निर्माण करना पड़ता है। बालकों की भाँति किशोर व्यक्ति समाज द्वारा निर्मित तथा परिमार्जित संप्रत्ययों के आधार पर नैतिक संहिता का निर्माण करता है। वह स्वयं सही तथा गलत या वांछित तथा अवांछित में अन्तर सीखना चाहता है तथा विकास को अपनी इच्छानुसार गति और दिशा प्रदान करना चाहता है (Winick, 1968)। वह यह भी अनुभव करने लगता है कि समाज में 'दोहरा मापदण्ड' (Double Standard) भी चलता है। जैसे, लड़कों की तरह लड़कियों को स्वतंत्रता प्राप्त नहीं है।

iii. व्यवहार का आन्तरिक नियंत्रण **(Inner Control of Behaviour)**– नैतिक परिवर्तन तथा विकास के लिए किशोरों को जो तीसरा प्रमुख कार्य करना पड़ता है वह यह है कि उन्हें व्यवहार पर आन्तरिक नियन्त्रण करना पड़ता है। इसके लिए अन्तरात्मा का विकास (Development of conscience) आवश्यक है। अन्तरात्मा का ही विकास होने के कारण व्यक्ति गलत कार्यों के करने पर ग्लानि अनुभव करता है तथा भविष्य में वैसी गलती नहीं करता है (Peck and Havighurst, 1962; Bartemeir, 1969)।

6. लैंगिक रुचियाँ तथा लैंगिक व्यवहार **(Sexual Interests & Sexual Behaviour)–** किशोरावस्था में लिंग-संगत व्यवहार (Sex relevant behaviour) का भी अधिगम करना पड़ता है। लड़कों को पुरुषों जैसा और लड़कियों को महिलाओं जैसा व्यवहार सीखने के साथ-साथ विपरीत लिंग के प्रति प्रासंगिक व्यवहार करना पड़ता है। किशोरावस्था में इसका प्रभाव प्रत्येक व्यक्ति के व्यवहार पर पड़ता है। इस अवस्था में लैंगिक प्रणाली परिपक्व हो जाती है, व्यक्तियों पर लिंग-संगत व्यवहार करने के लिए सामाजिक दबाव पड़ता है। व्यक्तियों की लैंगिक रुचियों का भी लैंगिक व्यवहार के निर्धारण में विशेष महत्व होता है। इस अवस्था में युवक तथा युवतियाँ स्वयं आकर्षक बनने का प्रयास करती हैं तथा समूह या समाज में आकर्षण का केन्द्र बनना चाहती हैं। लैंगिक रुचि बढ़ जाने के कारण वे अपने समकालीन मित्रों तथा अन्य स्रोतों से इसके बारे में अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। औपचारिक विवाह होने के पहले युवक तथा युवतियाँ अनेक प्रकार के स्रोतों से लैंगिक कार्यों के बारे में अनुभव प्राप्त करते हैं, लैंगिक कार्यों का ज्ञान देने वाली पुस्तक पढ़ते हैं। मित्रों से बात करते हैं, स्कूल तथा कालेज से भी सहायता प्राप्त करते हैं और हस्तमैथुन, प्यार-मुहब्बत, आलिंगन अथवा लैंगिक सन्सर्ग का भी व्यक्तिगत रूप से प्रायोगिक अनुभव करते हैं। इस प्रकार उनकी लैंगिक जागरूकता में वृद्धि होती है। किशोरावस्था के अंत तक अधिकांश युवक तथा युवतियों को अधिकतम लैंगिक जानकारी हो जाती है।

लैंगिक रुचियों तथा व्यवहारों को दो वर्गों में विभक्त कर सकते हैं। इन्हें बहुलैंगिकता (Heterosexuality)का विकास एवं अनुमोदित लैंगिक भूमिकाएँ (Approved Sex roles) कहते हैं। इनमें प्रथम का आशय विपरीत लिंग के लोगों के प्रति उचित व्यवहार तथा हावभाव करने से है। बचपन में लड़के-लड़कियों में दूरी रहती है, परन्तु किशोरावस्था में यह दूरी घटती है।

द्वितीय किशोर-किशोरियों को अनुमोदित लैंगिक भूमिकाएँ भी निभानी पड़ती हैं। अर्थात्, उनके लिंग से सम्बन्धित पारम्परिक व्यवहार में उन्हें सीखना पड़ता है। लड़कियाँ भी लड़कों की भाँति स्वतंत्रता चाहती हैं, परन्तु समाज उन्हें स्वीकृति नहीं प्रदान करता है। वैसे, आज स्थिति काफी बदल गई है (Sorenson, 1973)।

आक्रामकता के प्रकार -

कई लोगों द्वारा मनोविज्ञान में आक्रामकता शब्द की परिभाषावैज्ञानिकों को हमेशा व्यवहार के सामाजिक स्वरूप के लिए सुविधाजनक नहीं माना जाता है, जिससे दूसरों को नुकसान हो सकता है यह सजा, व्यवहार को नष्ट करने, एक समाज के स्वीकृत सामाजिक मानदंडों को प्रभावित करने और मनोवैज्ञानिक परेशानी पैदा करने के लिए बहुत अधिक है। यह गपशप है, असत्य जानकारी का प्रसार और शत्रुतापूर्ण कल्पना, साथ ही हत्या और आत्महत्या।

जानवरों के साम्राज्य में, आक्रामकता जीवित रहने में मदद करता है, और अंदरसभ्य समाज ने आक्रामकता के हमलों से कार्यालय कार्यकर्ताओं की कई पुरानी बीमारियों को जन्म दिया, जो एक नियम के रूप में प्रबंधन या अधिकारियों के साथ अपने संचित असंतोष को बाहर नहीं निकाले।

आक्रामक किस प्रकार के प्रोत्साहन पर निर्भर करता है, और पीडिघ्ता से वह क्या प्रतिक्रिया करता है, आठ प्रकार के आक्रामकता बाहर खड़े होते हैं-

1. उकसाया- हमला करने वाले व्यक्ति ने इस व्यवहार को उकसाया। बेदखली-शिकार ने हमलावर को किसी भी तरह से भड़काने नहीं दियाय

2. आक्रामक- आदमी हिंसा का कारण बनने वाला सबसे पहले था, और स्वयं का बचाव नहीं करना।

3. सुरक्षात्मक- हिंसा के कार्यों की प्रतिक्रिया।

3. प्रतिक्रिया- क्षति के लिए बदला

4. उत्तेजना के कारण आक्रमण-क्रियाएं जो जलन हटाने में मदद

करती हैं।

5. प्रोत्साहन- ऐसे कार्यों का कारण कुछ के लिए प्रोत्साहन पाने की

इच्छा है।

6. स्वीकृत- समाज के सामाजिक मानदंडों का समर्थन करता है।

मौखिक आक्रामकता कहा जाता है। पीड़ित को इंटरनेट के माध्यम से आत्मघाती विचारों पर धकेल दिया जा सकता है। यह रोता, अपमान, गपशप, बदनामी में व्यक्त किया जाता है। दुर्भाग्यवश, सामाजिक नेटवर्क की लोकप्रियता के कारण नकारात्मक प्रभाव की इस पद्धति को दूसरी हवा मिली है, और विशेष रूप से किशोरों और युवा लोग आत्महत्या के लिए बेहद प्रतिक्रिया कर रहे हैं।

किशोरावस्था की समस्याएँ **(Problems of Adolescence)**

वैसे तो विकास की हर अवस्था में बालकों को अनेकानेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है, परन्तु किशोरावस्था में तो किशोर तथा किशोरियाँ समस्याओं के बोझ से दब-सी जाती हैं। इसीलिए किशोरावस्था को समस्याओं की अवधि (Age of Problems) कहा जाता है। हाल (1950) ने तो इस अवस्था को ''तूफान एवं प्रतिबल'' की अवस्था का नाम ही दे दिया है। इस अवस्था की विभिन्न प्रकार की समस्याएँ न केवल वर्तमान में

समायोजन को प्रभावित करती हैं बल्कि किशोरों के भविष्य पर भी इनकार प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। संभवतः यही कारण है कि किशोरावस्था की समस्याओं को पहचानने तथा समाधान प्रस्तुत करने को मनोवैज्ञानिकों ने काफी प्रमुखता दिया है। किशोर तथा समाज दोनों ही के लिए यह उपयोगी और आवश्यक भी है कि उनकी समस्याओं का यथोचित समाधान उपलब्ध कराया जाय।

चुंकि किशोरावस्था को तीन अवधियों में विभक्त किया जाता है, इसलिए किशोरावस्था की समस्याओं पर सर्वप्रथम इसी आधार पर प्रकाश डाला जायेगा।

पूर्व किशोरावस्था की समस्याएँ **(Problems of Preadolescence)**– किशोरावस्था की प्रथम अवधि है। इस अवधि की प्रमुख समस्याओं के रूप में किशोर-किशोरियों में विकसित होने वाली नकारात्मक प्रवृत्ति तथा सामाजिक नियंत्रण में कमी का उल्लेख किया जा सकता है। किशोर-किशोरियों में इसी अवधि से चिन्ता, अस्थिरता, उलझन, लक्ष्यहीनता, संघर्ष, द्वन्द्व एवं कुसमायोज के अन्य लक्षण दिखाई पड़ने लगते हैं। इस अवधि में उनके व्यवहारों को समझ पाना कठिन होता है क्योंकि वे अपनी बातें माता-पिता तथा अन्य लोगों को नहीं बताना चाहते हैं। यही कारण है कि इस अवधि को रहस्यात्मक अवधि भी कहते हैं (गार्डनर, 1974; विलियम्स, 1949)। लड़कियाँ प्रायः अधिक चिन्तित दिखाई पड़ती हैं।

प्रारंभिक किशोरावस्था की समस्याएँ **(Problems of Early Adolescene)**– इस अवधि की भी समस्याएँ प्रायः समायोजन स्थापित करने पड़ते हैं। जैसे, सामाजिक समायोजन, व्यक्तिगत समायोजन, आर्थिक तथा व्यावसायिक समायोजन इत्यादि (विलियम्स, 1949), गैरिसन एवं कनिंघम, 1952)। इस अवधि में भी बालिकाओं को बालकों की अपेक्षा व्यक्तिगत तथा सामाजिक समायोजन में कठिनाई का सामना अधिक करना पड़ता है (पोप, 1943)। इसके विपरीत लड़कों के सामने जीविकोपार्जन की समस्या सबसे कठिन समस्या के रूप में सामने आती है।

उत्तर किशोरावस्था की समस्याएँ-

उत्तर किशोरावस्था में किशोरों तथा किशोरियों को गत अवस्थाओं की तुलना में और भी अधिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। परिवार तथा परिवार के साथ सामंजस्य, विद्यालय, व्यवसाय, जीविकोपार्जन, आत्मनिर्भरता, सामाजिक प्रत्याशयों, व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाओं, खर्च के लिए धन की कमी, परिवार बसाने आदि से सम्बन्धित समस्याएँ उत्तर किशोरावस्था में किशोरों को इस तरह अपने जाल में घ्ोर लेती हैं कि कभी-कभी वह असहाय भी दिखने लगता है (हीथ एवं ग्रेगरी, 1946, क्लोहर 1948, विलियम्स, 1950)। लड़कों की तुलना में लड़कियों को प्रायः अधिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। उन्हें शारीरिक आकर्षण, साज-सज्जा, सुरक्षा, विवाह तथा परिवार की चिन्ता अधिक रहती है (गुप्ता एवं गुप्ता, 1978)। किशोरों को इस कारण भी अपेक्षाकृत अधिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है क्योंकि उनसे प्रौढ़ों जैसे व्यवहार की प्रत्याशा की जाने लगती है। आज के भाग-दौड़ तथा अनिश्चितता के युग में किशोर संभवतः सर्वाधिक प्रभावित है। वह असन्तोष तथा दुःख से पीड़ित है। कुछ करने की अभिलाषा, सामाजिक प्रत्याशयों, आलोचनाओं एवं बाधाओं के बीच वह पिसता रहता है। इसीलिए किशोरावस्था को समायोजन की दृष्टि से असाधारण कठिनाई की अवस्था कहा जाता है (Crow & Crow, 1956)।

किशोरावस्था की समस्याओं के प्रकार- किशोरावस्था की समस्याओं को जानने तथा उनका समाधान प्रस्तुत करने हेतु अनेकानेक शोधकर्ताओं द्वारा उल्लेखनीय कार्य किया गया है। जोन्स (1948), विलियम्स (1949, 1950), पोप (1943), साइमण्ड्स (1936), गार्डन (1950), एम.सी. जोशी (1963) एवं जे. पाण्डेय (1968) और अन्य अनेक शोधकर्ताओं ने किशोरों की समस्याओं का पता लगाने का प्रयास किया गया है। समस्याओं की कोई अंतिम सूची प्रस्तुत करना संभव नहीं है। फिर भी प्रमुख समस्याएँ इस प्रकार हैं-

1. स्वावलम्बन की समस्या- यह एक महत्वपूर्ण समस्या है। किशोर इस आयु में आत्मनिर्भर बनना चाहता है तथा पारिवारिक-आश्रितता समाप्त करना चाहता है। यह एक कठिन कार्य है और उनमें चिन्ता के लिए उत्तरदायी है।

2. समकक्ष मित्रों के साथ सम्बन्ध की समस्या- किशोरावस्था के प्रारंभिक वर्षों में जहाँ परिवार पर निर्भरता घटती है वहीं पर आश्रितता बढ़ती है। मित्रों को अधिक महत्व दिया जाने लगता है। उनके साथ समायोजन स्थापित करना एक महत्वपूर्ण कार्य बन जाता है (Mussen & Conger, 1956)।

3. विपरीत लिंग **(Opposite Sex)** के साथ सम्बन्ध की समस्या- इस अवस्था में विपरीत लिंग के सदस्यों के प्रति आकर्षण चरम पर होता है। प्रारंभिक वर्षों की झिझक को दूर करना तथा विपरीत लिंग के लोगों के साथ उचित सम्बन्ध स्थापित करना भी एक महत्वपूर्ण समस्या है (Butterfield, 1939)।

4. व्यवसाय **(Vocation)** की समस्या- अपने लिए उचित व्यवसाय की खोज भी एक महत्वपूर्ण समस्या है। इसका सम्बन्ध जीविकोपार्जन से है। वह व्यवसाय में लगकर स्वावलम्बी बनना चाहता है। लेकिन यह कार्य काफी दुरूह होता है।

5. नैतिक एवं धार्मिक **(Moral & Religious)**समस्याएँ- किशोरावस्था में किशोर-किशोरियों को नैतिक तथा धार्मिक अवरोधों, प्रतिबंधों एवं द्वन्द्वों का सामना करना पड़ता है। इससे उनमें तनाव की समस्या उत्पन्न होती है। वे स्वभाव से स्वविवेकी हो जाते हैं और नैतिकता के मापदण्डों से सहमत ही होंगे, आवश्यक नहीं है (Ausubel, 1952)।

6. संवेगात्मक परिपक्वता **(Emotional Maturity)** की समस्या- इस अवस्था में व्यापक शारीरिक तथा अन्य प्रकार के परिवर्तनों के कारण संवेगात्मक स्थिति डाँवाडोल हो जाती है (English & Finch, 1954)। इसीलिए इसे ''तूफान एवं प्रतिबल'' की अवस्था भी कहा जाता है। (Hall, 1905)संवेगात्मक अस्थिरता के कारण समायोजन विघ्नित हो जाता है।

7. सामाजिक अनुरूपता **(Social Conformity)** की समस्या- चुंकि किशोरावस्था में स्वच्छन्दता की भावना बढ़ जाती है जब कि समाज वांछित व्यवहार की प्रत्याशा करता है, इस कारण भी किशोरों को द्वन्द्व तथा प्रतिबल झेलना पड़ता है। उनके व्यवहार में अनुरूपता की कमी होने पर उन्हें व्यंग एवं आलोचना का शिकार बनना पड़ता है।

8. विद्यालयीय समस्याएँ **(School Problems)–** किशोरावस्था की विभिन्न अवधियों में किशोर-किशोरियों को अनेकानेक प्रकार की विद्यालयीय समस्याओं का भी सामना करना पड़ता है। प्रवेश की समस्या, विद्यालय में समायोजन की समस्या एवं अच्छे अंक प्राप्त करने की समस्याएँ इत्यादि इस दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। (गुप्ता एवं गुप्ता, 1978)

9. स्वास्थ्य-समस्याएँ **(Health Problem)–** कभी-कभी स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएँ भी किशोर-किशोरियों के जीवन में संकट पैदा करती हैं।

10. मनोरंजनात्मक समस्या- स्वास्थ्य के लिए मनोरंजन आवश्यक है। यदि किशोर मनोरंजन के उचित अवसरों से वंचित है तो इसका उसके व्यक्तित्व के विकास तथा समायोजन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। प्रायः मनोरंजन के साधनों की कमी तथा पारिवारिक प्रतिबंध के कारण यह समस्या पैदा होती है।

11. पारिवारिक समस्याएँ **(Family Problems)–** इस अवस्था में अनेक प्रकार की पारिवारिक समस्याओं का भी सामना करना पड़ सकता है। खराब आर्थिक स्थिति, परिवार में विघटन, किसी सदस्य की मृत्यु, एवं स्नेह का अभाव इत्यादि ऐसे कारक हैं जो पारिवारिक समस्याओं को जन्म देते हैं। इससे किशोरों का मन दुःखी हो उठता है और समायोजन विघ्नित हो जाता है।

बालकों का स्वरूप

सामान्य बालक **(Normal Child)**

सामान्य बालक औसत शारीरिकी वाले एवं स्वस्थ्य होते हैं तथा सामान्य शारीरिक श्रम वाले कार्यों को करने में किसी प्रकार की बाधा का अनुभव नहीं करते हैं। इनका बौद्धिक स्तर सामान्यतः 90 से 110 बुद्धि लब्धि सीमा के मध्य होता है। कक्षा में अधिकांश बालकों की भाँति शैक्षिक उपलब्धि में भी औसत होते हैं तथा सभी विषयों को समान रूप से महत्व देते हुये शिक्षक द्वारा दिये गये कक्षा कार्य एवं दत्त कार्य को लगन के साथ पूरा करते हैं। इनके सीखने की गति भी प्रायः औसत होती है। समाज में ये आपेक्षित व्यवहार करते हैं, सामाजिक कार्यों में रचनात्मक सहयोग देते हैं तथा उपलब्ध साधनों से अधिक लाभ उठाने की क्षमता रखते हैं। इन्हीं कारणों से इनका समाज एवं

विद्यालय में समायोजन उत्तम रहता है तथा ये संवेगात्मक रूप से इनका समाज एवं विद्यालय में समायोजन उत्तम रहता है तथा ये संवेगात्मक रूप से सन्तुलित (emotionally balanced) होते हैं।

एक ऐसा बालक जो कि शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, शैक्षिक, सांवेगिक एवं व्यावहारिक विशेषताओं के कारण किसी सामान्य या औसत बालक से उस सीमा तक स्पष्ट रूप से विचलित या भिन्न होता है जहाँ कि उसे अपनी योग्यताओं, क्षमताओं एवं शक्तियों को समुचित रूप से विकसित करने के लिए परम्परागत शिक्षण विधियों में परिमार्जन या विशिष्ट प्रकार के कार्यक्रमों की आवश्यकता होती है, विशिष्ट बालक कहा जाता है। इस श्रेणी में शारीरिक रूप से अक्षम, प्रतिभाशाली, सृजनात्मक, मन्द बुद्धि, शैक्षिक रूप से श्रेष्ठ एवं पिछड़े, बाल-अपराधी, असमायोजित, समस्याग्रस्त, सांवेगिक अस्थिरतायुक्त आदि प्रकार के बालक सम्मिलित हैं।

विशिष्टता का क्षेत्र सार्वभौमिक है। यह किसी भी वर्ग, जाति, धर्म, सम्प्रदाय, राष्ट्र आदि के व्यक्तियों में पाई जा सकती है। कभी यह विशिष्टता वंशानुगत, कभी वातावरण-जन्य तथा कभी दोनों ही के संयोजन का प्रतिफल होती है। इतिहास में विभिन्न विशिष्टताओं वाले व्यक्तियों के उदाहरण मिलते हैं। अमेरिकी राष्ट्रपति कैनेडी की बहन मन्दबुद्धि थी। प्रसिद्ध लेखक एवं ट्रेवलर हैलन कीलर चक्षुहीन एवं श्रवण विकलांग थीं। महान कवि सूरदास जन्मान्ध थे। प्रसिद्ध आँइनसटीन का भाषा विकास काफी विलम्ब से हुआ था। अमेरिकी राष्ट्रपति रुसवेल्ट स्वयं पोलियों के शिकार थ्ो। यह सभी उदाहरण सिद्ध करते हैं कि विभिन्न निर्योग्यताओं की पूर्ति सम्भव है तथा कोई भी अक्षम बालक उचित शिक्षण एवं प्रशिक्षण के द्वारा सामान्य बालकों की तरह स्वयं के लिए तथा राष्ट्र एवं समाज के लिए उपयोगी बनाया जा सकता है। अतः आज संसार के लगभग समस्त विकसित एवं विकासशील देशों में विशिष्ट बालकों के प्रति लोगों के दृष्टिकोण में परिवर्तन हुआ है और इन विशिष्ट बालकों के लिये विशेष विद्यालय खोले गये हैं जहा उन्हें उनकी आवश्यकतानुसार शिक्षण एवं प्रशिक्षण दिया जाता है।

शारीरिक विकलांग बालक **(Physically Handicapped Child)**

विकलांगता एक ऐसी स्थिति है जो किसी भी व्यक्ति को किसी भी अवस्था में उसके सामान्य व्यवहार, कार्यशक्ति विचार एवं नियमित कृत्य को न्यूनाधिक प्रभावित कर आंगिक, मानसिक, सामाजिक व भावात्मक असन्तुलन उत्पन्न कर देती है।'' बाल गोविन्द तिवारी के इस कथन के अनुसार विकलांगता एक असन्तुलन की स्थिति है जो कि व्यक्ति विशेष के व्यवहार को प्रभावित कर उसको सामान्य व्यक्ति से अलग दर्शाती है।

शैक्षिक दृष्टि से विकलांगता किसी भी प्रकार की नियर्ोग्यता हो सकती है जो बालक विशेष की औसत बालकों की भाँति शिक्षा ग्रहण करने में असमर्थ बनाती है। ऐसे बालक सामान्य शिक्षा पद्धति से लाभान्वित नहीं हो पाते। उनके लिये अतिरिक्त सहायता व विशिष्ट शिक्षण की आवश्यकता होती है।

विकलांग बालकों के अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि विकलांग बालक औसत बालक से सर्वथा भिन्न नहीं होते। कोई पक्ष विशेष ही ऐसा होता है जिससे सीखने की स्थिति में विचलन (deviation) उत्पन्न हो जाता है। विकलांग बालक दूसरे विकलांग बालकों से विकलांगता के स्वरूप में विकलांगता की सीमा की दृष्टि से भिन्न होते हैं। सेमुअल ए. किर्क के अनुसार विभिन्न विकलांग बालकों को तीन श्रेणियों- (1) मानसिक विकलांग (mentally handicapped), (2) सामाजिक रूप से कुसमायोजित (socially maladjusted) तथा (3) शारीरिक विकलांग (physically handicapped)-में विभक्त किया जा सकता है।

शारीरिक विकलांगता **(Physical Handicapness)**

आंगिक असामान्यता के कारण शारीरिक विकलांग बालकों को आसानी से पहचाना जा सकता है। यह असामान्यता उनके व्यवहार, शारीरिक आकृति, चलना, उठना-बैठना आदि के अतिरिक्त उनकी कार्य-क्षमता, कार्य विधि, कार्य परिणाम आदि से स्पष्ट जानी जा सकती है। इनमें से अधिकांश सामान्य शिक्षण पद्धति से ही लाभान्वित हो सकते हैं। इनको केवल अतिरिक्त सहायता सामग्री व शिक्षक द्वारा अधिक ध्यान व समय देने की

आवश्यकता होती है। शारीरिक रूप से विकलांग बालकों को उनके प्रभावित अंगों व तन्त्र्ाोंं के आधार पर निम्न वर्गों में रखा जा सकता है।

1. चक्षु-विकलांग (Visually handicapped)

2. श्रवण-विकलांग (Aurally handicapped)

3. वाक्-विकलांग (Speech handicapped)

4. विरुपित (Crippled)

5. शारीरिक रूप से अस्वस्थ (Unhealthy)

प्रतिभाशाली बालक **(Talented Child)**

अन्य विशिष्ट बालकों की भाँति ही प्रतिभाशाली बालक भी वर्तमान शिक्षा पद्धति से सामान्य कक्षाओं में लाभान्वित नहीं हो पाते हैं। कभी-कभी तो ये अपनी विलक्षण बुद्धि व क्षमताओं के कारण सामान्य परिस्थितियों में समायोजित नहीं हो पाते और समस्यात्मक बालक घोषित कर दिये जाते हैं। पिछले कुछ दशकों से अधिकांश पश्चिमी देशों में शैक्षिक रूप से पिछड़े एवं विकलांग बालकों की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है, किन्तु प्रतिभाशाली बालकों के लिए विशेष योजनाएँ व शैक्षिक व्यवस्था कहीं-कहीं ही उपलब्ध है।

प्रतिभाशाली बालक प्रायः अपने स्तर के उन सभी कार्यों को बिना किसी की सहायता के कुशलता से कम समय में ही पूरा कर लेते हैं जिनकी उनसे अपेक्षा की जाती है। अपने खाली समय में ये बालक कुछ अधिक व विशिष्ट प्रकार का कार्य करना चाहते हैं जबकि मध्यम स्तर के परिवारों व विद्यालयों में इनको अपनी विलक्षणता को किसी सृजनात्मक व मौलिक रूप में प्रगट या प्रयुक्त करने के अवसर नहीं मिल पाते हैं। फलस्वरूप ये समाज व विद्यालय में कुसमायोजन की समस्या को तो जन्म देते ही हैं साथ ही उनकी प्रतिभासम्पन्नता भी व्यर्थ ही जाती है। कभी-कभी अपनी इस विलक्षणता का उपयुक्त उपयोग न हो सकने के कारण ये बालक असामाजिक कार्यों में संलग्न हो जाते हैं और शातिर अपराधी बन जाते हैं। प्रतिभावान शब्द उन सभी बालकों को शामिल करता है जो शैक्षिक रूप से विद्यालय के उच्च 15 से 20 प्रतिशत उपलब्धि वर्ग में आने

के लिए उच्च मानसिक योग्यता व कार्य क्षमता रहते हों तथा/या किसी विशेष क्षेत्र जैसे गणित, यान्त्रिकी, विज्ञान, कलात्मक अभिव्यक्ति, सृजनात्मक लेखन, संगीत व सामाजिक नेतृत्व में उच्च स्तरीय प्रतिभा व अपने वातावरण से मुकाबला करने की अनोखी सृजनात्मक योग्यता रखते हैं।

सर्जनात्मक बालक **(Creative Children)**

सर्जनात्मक शब्द आंग्ल भाषा के 'क्रियेटिविटी' शब्द का पर्यायवाची है। विधायकता, उत्पादकता, खोज, मौलिकता आदि सभी शब्द इसी के समान माने जाते है। सर्जनशील बालक कौन होते हैं अर्थात् उनमें क©न से गुण व योग्यता होती हैं या किस आधार पर हम उन्हें सर्जनशील बालक कहने लगते हैं, इसके लिए विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने अपने विचार व्यक्त किये हैं-

इसरेली, एन. (Israile, N.) ''सर्जनात्मक बालक किसी नवीन वस्तु का निर्माण एवं उसमें परिवर्तन करने की क्षमता रखता है।'' '' (Creative children have the capacity of constructing and manipulating any new object.)

बैरन (Barron, 1961) ''सर्जनात्मक बालक पहले से विद्यमान वस्तुओं तथा तत्वों को संयुक्त कर नवीन निर्माण करता है।(Creative children mean, to make new combinations from the already existing objects and elements.)

डीहान एवं हेविंगहस्ट (Dehaan and Havinghurst, 1961) ''सर्जनात्मक बालक नवीन तथा वांछित वस्तु के उत्पादन की क्षमता का गुण रखता है। यह नवीन उत्पादन सम्पूर्ण समाज अथवा केवल उसी व्यक्ति के लिए ही नवीन हो सकता है जो उसका निर्माण करता है। (Creativity of the children has the quality which leads to the production of something new and desirable. The new product may be new to society or new to the individual who creates it.)

टॉरेन्स (Torrance) सर्जनात्मक समस्याओं की अपर्याप्तताओं, ज्ञान के अभाव, खोये तत्वों, असामन्जस्यताओं आदि के प्रति संवेदनशील होने की प्रक्रिया है।'' (Creativity is the process of becoming sensitive to problems, deficiencies, gap in knowledge, missing elements, disharmonies and so forth.)

बालक द्वारा किसी जटिल समस्या का विद्वतापूर्ण समाधान करने की योग्यता सर्जनात्मकता है, जो अपने में निहित विभिन्न विशेषताओं-समस्या के प्रति सजगता, गतिशील वैचारिकता, लचीलापन, मौलिकता, जिज्ञासा, नवीनता हेतु परिवर्तन की आकांक्षा के माध्यम से रचनात्मकता उत्पन्न करती है।

सर्जनशील बालकों की अपने समूह में अपनी एक अलग पहचान होती है क्योंकि सर्जनशील बालक अपने व्यक्तित्व में कुछ विशेषताओं को अपनाये होते हैं। सर्जनशील बालकों की मुख्य विशेषतायें निम्नलिखित हैं-

1. सर्जनात्मक बालकों के विचारों में लचीलापन पाया जाता है। इन बालकों का बौद्धिक स्तर बहुत विस्तृत होता है। इनमें एक प्रकार की नियन्त्रित कल्पना पायी जाती है जिससे किसी न किसी उपलब्धि को निर्देशन प्राप्त होता है। इन बालकों का अनुसन्धान क्षेत्र भी उच्च स्तर का होता है।

2. सर्जनात्मक बालकों में व्यक्तिगत स्वतन्त्रता पायी जाती है। सर्जनात्मकता में उत्पादकता की योग्यता पायी जाती है। इनके विचारों में स्वतन्त्रता होती है और यह सर्जनात्मक कार्यों को स्वतन्त्र रूप में करते हैं। ये बालक किसी समस्या का समाधान अनुकूलता व प्रतिकूलता आदि को ध्यान में रखकर करते हैं। इनमें प्रतिकूल वस्तुओं को सहन करने की क्षमता पायी जाती है।

3. सर्जनात्मक बालक किसी परीक्षण पर अपने समूह में अन्य लोगों से अधिक अंक प्राप्त करते हैं। सर्जनात्मक बालक अपनी बौद्धिक और सांस्कृतिक रुचियों को प्रत्यक्ष रूप में विकसित करते हैं। इन बालकों में विभिन्न क्षेत्रों में भाग लेने की क्षमता होती है और उन क्षेत्रों में वह अपने भावों को व्यक्त करते हैं।

4. सर्जनशील बालकों में अपने जीवन की अस्पष्टता को सहन करने की उच्च योग्यता पायी जाती है और अनिश्चितता व कठिनता को स्वीकार करने की इच्छा होती है। ये लोग अपने जीवन की समस्याओं को बड़े साधारण रूप में लेते हैं और कठिनाइयों को चुनौती देते हैं। अपनी समस्याओं का समाधान तुरन्त ढूंढ लेते हैं।

5. अध्ययनों से स्पष्ट हुआ है कि सर्जनशील व्यक्ति अपनी आयु से अधिक परिपक्व होते हैं। यह व्यक्ति वातावरण में हमेशा वास्तविकता एवं सत्यता की खोज करते हैं। ये व्यक्ति अन्य लोगों की तुलना में अधिक जिम्मेदारी समझने वाले, ईमानदार व विश्वसनीय होते हैं, साथ ही इनमें अन्य लोगों से बात करने के गुण भी होते हैं।

सृजनशील बालकों की पहचान के लक्षण **(Development of Creativity in Children)**

सर्जनशील बालकों में साधारण से अलग कुछ अपनी योग्यता व लक्षण होते हैं जिनके द्वारा हम सर्जनात्मक बालकों को पहचान लेते हैं। गिलफोर्ड ने सर्जनात्मक बालकों के पहचान के निम्न प्रमुख लक्षण बताये हैं-

1. जो बालक तात्कालिक सन्दर्भ एवं परिस्थितियों से परे जाकर चिन्तन- मनन एवं अभिव्यक्ति की योग्यता रखते हैं उनमें सर्जनात्मकता पाई जाती है।

2. जिन बालकों में किसी लक्ष्य अथवा समस्या की सम्पूर्ण अथवा आंशिक रूप से पुनः व्याख्या करने की क्षमता पाई जाती है वे सर्जनात्मक शक्तियों से युक्त होते हैं।

3. सर्जनशील बालक अत्यधिक संवेदनशील होते हैं तथा वे किसी भी कार्य को बड़ी गम्भीरता से लेते हैं।

4. वे बालक जो चिन्तन, तर्क तथा कल्पना द्वारा प्रासंगिक किन्तु असामान्य विचारों के साथ सामन्जस्य स्थापित कर लेते हैं वे सर्जनशील होते हैं।

5. तर्क, चिन्तन तथा प्रमाणों के माध्यम से मौखिक एवं तर्कसंगत अभिव्यक्ति के द्वारा अन्य व्यक्तियों के विचारों, विश्वासों एवं धारणाओं को परिवर्तित करने वाले बालक भी सर्जनशील होते हैं।

6. सर्जनशील बालकों में स्वायत्तता (autonomy) पाई जाती है। वे अपने कार्यों को उत्तरदायित्वपूर्ण ढंग से करते हैं तथा लक्ष्य पूर्ति तथा उनमें बेचैनी बनी रहती है।

बालकों में सर्जनात्मक का विकास **(Development of Creativity in Children)**

सर्जनात्मकता का विकास बालक में बाल्यावस्था से प्रारम्भ हो जाता है। इन बालकों में सर्जनात्मकता की अभिव्यक्ति सबसे पहले उस समय होती है जबकि बच्चा अपने मित्रों के साथ ख्ोलता है, लेकिन जब वह स्कूल जाने लगता है तो इसमें सर्जनात्मकता का क्षेत्र विस्तृत हो जाता है।

अरस्तेन (1968) ने बताया कि सर्जनात्मकता के विकास में कई आयु स्तरों पर अवरोध उत्पन्न हो जाते हैं। इन्होंने बाल्यावस्था से लेकर किशोरावस्था तक कुछ क्रिटिकल अवस्थायें इस प्रकार से बताई हैं-

1. पाँच-छह वर्ष की अवस्था में सर्जनात्मकता के विकास में अवरोध उस समय उत्पन्न होता है जब बच्चा स्कूल जाना प्रारम्भ करता है। वहाँ पर गुरुओं की आज्ञा माननी होती है, विद्यालयों के नियमों का पालन करना होता है इसके साथ घर पर भी नियमों का पालन करने के लिये बाध्य किया जाता है। इस तरह से यदि बालक को बहुत अधिक नियन्त्रण में रखा जाता है तो उसकी सर्जनात्मकता के विकास में बाधा उत्पन्न होती है।

2. इसके बाद जब बालक आठ-दस साल का हो जाता है तो उसमें समूह के सदस्य बनने की प्रवृत्ति बढ़ती है। यदि वह उस समूह के प्रतिमानों से अनुरूपता स्थापित करत है तो वह सामान्य रहता है और यदि वह उसके अनुरूप अपने को नहीं बना पाता तो वह अपने को तिरस्कृत महसूस करता है। यदि इस अवस्था में बालक का सन्तुलन बना रहता है तो सर्जनात्मकता अच्छी तरह से विकसित होती है अन्यथा अवरोध उत्पन्न हो जाते हैं।

3. तीसरा अवरोध उस समय उत्पन्न होता है जब बालक तेरह से पन्द्रह वर्ष का होता है। इस अवस्था में बालक अन्य लोगों का अनुमोदन (approval) चाहता है, विशेष

कर वह विपरीत लिंग के लोगों का अनुमोदन चाहता है। यदि वह अपना पूरा समय अनुमोदन में व्यतीत कर देता है तो उसमें सर्जनात्मकता का विकास नहीं होता है।

4. इसके बाद सत्रह से उन्नीस वर्ष तक की अवस्था में अवरोध उत्पन्न होते हैं। इस अवस्था में किशोर व्यवस्था को प्राप्त करने अथवा व्यवसाय से सम्बन्धित प्रशिक्षण के लिए प्रयत्नशील होता है। यदि इस समय उसे नियन्त्रण में या नियमबद्ध रहना पड़ता है तो बालक की सर्जनात्मकता दब जाती है।

गिलफर्ड एण्ड मेरीफील्ड ने कारकों की एक बैटरी सर्जनात्मकता का मापन करने के लिए बनाई। हैरिस तथा ओवन (1957) ने वैज्ञानिक सर्जनात्मकता परीक्षण विकसित किया।

इन्दौर के बी.के. पासी (1972) के सर्जनात्मकता में निहित शाब्दिक एवं अशाब्दिक कारकों का मापन करने के लिए हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में सर्जनात्मक परीक्षणों की एक माला को विकसित किया।

देहली के एस.के. मजूमदार (1983) ने सर्जनात्मकता से सम्बन्धित विभिन्न परीक्षणों की श्रृंखला का प्रकाशन किया।

सर्जनात्मक परीक्षण-

1. पासी का सर्जनात्मक परीक्षण **(1979)-** पासी का यह परीक्षण भारत (1972) में निर्मित एवं मानकीकृत किया गया। यह परीक्षण अंग्रेजी व हिन्दी दोनों माध्यमों में है। इसमें छह शाब्दिक एवं अशाब्दिक उप-परीक्षण हैं-

(i) The seeing problem test (ii) the unusual uses test, (iii) The consequences test, (iv) The test of inquisitiveness, (v) The square puzzle test. (vi) The blocks test of creativity.

सर्जनात्मक के छह उप-परीक्षणों की पुनर्परीक्षण विश्वसनीयता 68 से 97 के मध्य तथा मध्यांक विश्वसनीयता गुणांक 83 ज्ञात हुआ तथा शाब्दिक तथा अशाब्दिक परीक्षणों की अर्द्धविच्छेद विश्वसनीयता 80 है। इसकी वैधता रेवेन्स का वयस्क या स्टेण्डर्ड प्रोग्रेसिव मैट्रिक्स, जलोटा का मानसिक योग्यता सामूहिक परीक्षण तथा उपलब्धि प्राप्तांकों से इस

परीक्षण के प्राप्तांकों को सह-सम्बन्धित करने पर क्रमशः मध्यांक वैधता गुणांक 60, 27, 27 तथा 30 ज्ञात की गयी। परीक्षण के शाब्दिक एवं अशाब्दिक सर्जनात्मक कारकों की घटक वैधता (factorial validity)30 से 74 के मध्य ज्ञात की गयी। समस्त छः भागों के शतांशीय मानक ज्ञात किये गये।

2. बाकर मेंहदी: सर्जनात्मक चिन्तन का शांब्दिक परीक्षण (1985)- बाकर मेंहदी के परीक्षण में चार उप परीक्षण हैं- (i) परिणाम परीक्षण, जिसे यदि ऐसा हो जाए तो नाम से इंगित किया जाता है। इस परीक्षण में तीन असम्भव बातें दी होती है जो कभी सत्य नहीं होती हैं; जैसे यदि मनुष्य पक्षियों की भाँति उड़ने लग जाता तो क्या होता, यदि विद्यालय में पहिये लग जायें तो क्या होगा, यदि मनुष्य को खाने की आवश्यकता न रह जाये तो क्या होगा? इनको करने के लिए परीक्षार्थी को 12 मिनट का समय दिया जाता है परीक्षार्थी को इन प्रश्नों से जितने उत्तर परिणाम याद आयें लिखने होते हैं। (ii) असमान्य प्रयोग परीक्षण जिसमें 'वस्तुओं के नये-नये प्रयोग' की संज्ञा दी गयी है इसमें तीन सामान्य वस्तुओं के नाम दिये होते हैं, जैसे- पत्थर का टुकड़ा, लकड़ी की छड़, पानी। परीक्षार्थी को उक्त वस्तुओं में नये-नये विचित्र एवं रोचक प्रयोग अधिक से अधिक संख्या में लिखने होते हैं, इसके लिए 15 मिनट का समय होता है। (iii) नवीन सम्बन्धों का परीक्षण जिसे 'नये सम्बन्ध का पता लगाना कहा गया। पेड़ तथा मकान कुर्सी और सीढ़ी, हवा और पानी। परीक्षार्थी को प्रत्येक जोड़ों के शब्दों के सम्बन्धों को बताना होता है। इसके लिए भी 15 मिनट का समय है, (iv) परीक्षण सुधार जिसे 'वस्तुओं को मनोरंजन बनाना' शीर्षक दिया गया है इसमें परीक्षणों को किसी सादे खिलौने को ध्यान में रखते हुए उन नवीन, निराले एवं मनोरंजक तरीकों को लिखना होता है इसके लिए छः मिनट का समय है।

सम्पूर्ण परीक्षण तथा विभिन्न उप-परीक्षणों के मध्य सह-सम्बन्ध शहरी लोगों पर .76 से .86 तक तथा ग्रामीण लोगों पर .54 से .74 तक ज्ञात किया। भिन्न घटकों- प्रवाह अनम्यता, मौलिकता एवं योग प्राप्तांकों का अध्यापक श्रेणी से वैधता गुणांक क्रमशः 40, 32, 34 तथा 39 ज्ञान किया गया विभिन्न घटकों एवं योग सर्जनात्मक अंकों की पुर्नपरीक्षण विश्वसनीयता 89 से .96 के मध्य ज्ञात की गयी। कक्षा 7 एवं 8 में पढ़ने

वाले शहरी तथा कक्षा 8 में पढ़ने वाले ग्रामीण छात्रों पर सर्जनात्मकता के शाब्दिक कारकों पर शतांशीय मानक ज्ञात किये गये।

3. वाकर मेंहदी: सर्जनात्मक चिन्तन का अशाब्दिक परीक्षण (1985)- इस परीक्षण में तीन उप-परीक्षण सम्मिलित हैं। (1) चित्र्ा बनाने की क्रिया- इनमें दो साधारण रेखीय आकृतियों के द्वारा चित्र बनाना होता है। (2) चित्र पूर्ति क्रियायें- इस परीक्षण में दस आपूर्ति आकृतियाँ दी होती हैं प्रत्येक आकृति को रेखाओं की सहायता से पूरा करना होता है। (3) त्रिभुजाकार एवं अण्डाकार आकृति क्रियायें- इसमें सात त्रिभुज तथा सात अण्डाकार आकृतियाँ दी गयी हैं। प्रत्येक आकृति को अंग मानकर नवीन एवं रोचक चित्र बनाना होता है।

सम्पूर्ण परीक्षण के लिए 35 मिनट का समय रखा गया है। इसके विभिन्न घटकों तथा सम्पूर्ण परीक्षण की पुर्नपरीक्षण विधि से विश्वसनीयता .93 से .95 के मध्य ज्ञात की गयी। इस परीक्षण पर की गयी अनुक्रियाओं को फलांकन शीट (Scoring sheet) पर विस्तरण (elaboration) 'मौलिकता' (Originality) तथा योग सर्जनात्मक प्राप्तांकों के रूप में ज्ञात किया जाता है। दोनों घटकों विस्तरण एवं मौलिकता तथा योग सर्जनात्मक प्राप्तांक का अध्यापक श्रेणीमान से वैधता गुणांक क्रमशः .34, .33 तथा .38 ज्ञात हुई। इस परीक्षण पर शतांशीय मानक ज्ञात किये गये।

4. बी.पी. शर्मा तथा जे.पी. शुक्ला: वैज्ञानिक सर्जनात्मकता का शाब्दिक परीक्षण (1985)- यह परीक्षण वी.पी. शर्मा एवं जे.पी. शुक्ला ने 1985 में बनाया है। इस परीक्षण में 12 पद हैं जो कि चार उप-परीक्षणों में विभाजित हैं- (i) consequences test, (ii) unusual uses test, (iii) new relationship, (iv) just think why test.

इस पूरे परीक्षण को करने के लिए 20 मिनट का समय निर्धारित किया है। यह परीक्षण छठवीं से आठवीेंं कक्षा के बच्चों पर प्रकाशित किया गया। इस परीक्षण पर विश्वसनीयता ज्ञात परीक्षण विधि द्वारा ज्ञात की गयी जो कि .64 से .77 प्राप्त हुई। इस

परीक्षण की कारक वैधता .98 पायी गयी है। कक्षा के शाब्दिक कारकों पर शतांशीय मानक ज्ञात किये गये हैं।

5. के एन. शर्माः अपसारी उत्पादन योग्यतायें परीक्षण **(Divergent Production Abilities, Test 1987)**– के.एन. शर्मा ने 1987 में 'अपसारी उत्पादन परीक्षण' बनाया। इस परीक्षण में छः परीक्षण हिन्दी में हैं जो आठ योग्यताओं का मापन करते हैं। इसके छः परीक्षण निम्न हैं- 1. (Word production, Uses of things, Similarities, Sentence constuction Titles test) तथा (Elaboration test) ये परीक्षण आठ निम्न योग्यताओं का मापन करता है। (i) Word fluency, (ii) Ideational fluency, (iii) Associational fluency, (iv) Expressional fluency, (v) Spontaneous flexibilily, (vi) Adaptive flexibility, (vii) Originality, (viii) Elaboration.

इस परीक्षण की विश्वसनीयता पुर्नपरीक्षण विधि से ज्ञात की गयी जो सभी उप-परीक्षणों में क्रमशः .67, 80, 68, 84, 85, 82 प्राप्त की गयी। इस परीक्षण की वैधता बाकर-मेंहदी के परीक्षण से ज्ञात की गयी, आठों योग्यताओं में वैधता क्रमशः 50, 43, .33, 37, .39, .48, .43, 44 प्राप्त हुई। इस परीक्षण पर शतांशीय मानक ज्ञात किये गये।

6. एस.पी. मलहोत्रा एवं सुचेता कुमारीः भाषा सर्जनात्मक परीक्षण- सर्जनात्मक के सम्बन्ध में यह परीक्षण अभी हाल में प्रकाशित हुआ है। यह परीक्षण हिन्दी तथा अंग्रेजी दोनों भाषा में है तथा यह स्कूल और कॉलेज दोनों प्रकार के छात्रों के लिए प्रयुक्त किया जाता है। यह परीक्षण पाँच उप-परीक्षण में विभक्त है- (i) plot building, (ii) dialogue writing, (iii) poetic diction (iv) descriptive style and (v) vocabulary test.

इस परीक्षण में परीक्षार्थी को कहानी, कविता, शीर्षक निबन्ध आदि लिखने होते हैं।

सर्जनशील बालकों का व्यक्तित्व **(Personality of Creative Children)**

सर्जनशील बालकों के व्यक्तित्व के विषय में बहुत से मनोवैज्ञानिकों ने अध्ययन किये हैं। इसके लिए मनोवैज्ञानिकों ने विभिन्न परीक्षणों एवं मापनियों का प्रयोग किया।

टोरेन्स (1969) ने अपने अध्ययनों में बताया कि सर्जनात्मक बालकों के व्यक्तित्व में एक विशेषता न होकर विशेषताओं का पूरा समूह होता है। इनके द्वारा बताई गयी कुछ मुख्य विशेषताएँ निम्न प्रकार हैं- विकृति को स्वीकारना, जोखिम उठाना, दृढ़ भावना, परार्थोन्मुखता (altruism) अन्य के प्रति जागरूकता, सदैव किसी चीज से परेशान, अव्यवस्था की ओर आकर्षित होना, रहस्य की ओर आकर्षित होना, कठिन कार्यों के लिए प्रयास करना, लज्जालु प्रवृत्ति, रचनात्मक आलोचनात्मक साहसी होना इत्यादि।

इसके अतिरिक्त भी अनेक गुण ऐसे पाये गये जो सर्जनशील बालकों के व्यक्तित्व में पाये जाते हैं। ये बालक बहुत संवेदनशील होते हैं। इनके व्यक्तित्व में स्वतः प्रेरित होने की क्षमता होती है साथ ही इनका आकांक्षा स्तर भी उच्च होता है। अन्तद्र्वन्द कुण्ठाओं को सहन करने की क्षमता होती है। उच्च सर्जनशील बालकों का अहम् ;महवद्ध बहुत शक्तिशाली होता है और इनकी जीवन के प्रति वास्तविक, स्वस्थ अभिवृत्ति होती है।

सर्जनात्मकता से सम्बन्धित कारक **(Factors related to Creativity)**

1. बुद्धि एवं सर्जनात्मकता **(Intelligence and creativity)**– अनेक अध्ययनों में बुद्धि और सर्जनात्मकता में सकारात्मक सहसम्बन्ध पाया गया है। परन्तु गक्कर आदि (1980), चड्डा तथा सेन (1981)। आदि अनेक मनोवैज्ञानिकों ने बताया कि अधिक सर्जनशील बालक आवश्यक नहीं है कि अधिक बुद्धिमान ही हो क्योंकि इनके बीच पाये जाने वाला सहसम्बन्ध काफी कम है उसका विस्तार 010 से 044 है। मेंहदी (1977) ने बताया कि जो बालक शहरी क्षेत्र के होते हैं उनकी सर्जनात्मकता और बुद्धि में नकारात्मक सहसम्बन्ध होता है जबकि जो ग्रामीण क्षेत्रों से सम्बन्ध रखते हैं उनमें सकारात्मक सहसम्बन्ध पाया गया है। निष्कर्ष रूप से हम कह सकते हैं कि सर्जनशील बालक सामान्य व लगभग औसत बुद्धि के होते हैं।

2. शैक्षिक उपलब्धि एवं सर्जनात्मकता **(Scholastic achievement and creativity)**–सर्जनात्मकता और छात्रों की उपलब्धि में सकारात्मक सहसम्बन्ध पाया जाता है। अनेक अध्ययनों से स्पष्ट हुआ कि सर्जनात्मक का सकारात्मक प्रभाव अंग्रेजी, विज्ञान आदि पर पड़ता है जबकि अन्य विषयों से कम सकारात्मक सम्बन्ध पाया गया।

साथ ही विज्ञान के छात्रों की उपलब्धि व शाब्दिक-अशाब्दिक सर्जनात्मकता में भी नकारात्मकता में काफी हद तक सकारात्मक सहसम्बन्ध है।

3. मूल्य एवं सर्जनात्मकता **(Values and creativity)**– अनेक अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि जो उच्च सर्जनशील बालक होते हैं उनमें सामाजिक, स्वतन्त्र्ाता, विभिन्नता, ज्ञान, सौन्दर्यात्मक, आदर्श व आर्थिक मूल्य पाये जाते हैं। कुमार (1978) ने बताया कि सैद्धान्तिक मूल्य भी उच्च सर्जनशील बालकों में पाये जाते हैं परन्तु कुछ मात्रा में कम सर्जनशील बालकों में भी यह मूल्य पाये जाते हैं। इसके साथ अध्ययनों में यह भी पाया गया कि परम्परागत मूल्य व सर्जनात्मक में कोई सहसम्बन्ध नहीं पाया जाता है। अन्त में पांडे (1980) ने बताया कि सर्जनशील और सर्जनात्मकता के रहित शिक्षक और शिष्य के मूल्यों में सार्थक अन्तर नहीं होता है।

निष्कर्ष रूप से हम कह सकते हैं कि उच्च सर्जनशील बालक औसत और कम सर्जनशील बालकों से भिन्न होते हैं परन्तु यह अभी तक स्पष्ट नहीं हुआ है कि कौन से मूल्य मुख्य रूप से उच्च सर्जनशील बालकों में पाये जाते हैं और कौन से मूल्य कम व औसत सर्जनशील बालकों में पाये जाते हैं।

मन्दितमना बालक **(Definition and Meaning)**

मानसिक मंदिता का प्रत्यय मानसिक अक्षमता या न्यूनता वाले उन सभी बालकों के लिए प्रयोग किया जाता है जो कि घर, समाज तथा विद्यालय की परिस्थितियों के साथ अपना अनुकूलन करने में असमर्थ होते हैं। वर्तमान समय में मंदितमना बालकों को परिभाषित करने के अनेक प्रयास किये गये हैं तथा अनेकों विद्वानों ने इन्हें विभिन्न दृष्टिकोणों से परिभाषित किया है। चुंकि मानसिक मंदिता की समस्या सैद्धान्तिक न होकर व्यावहारिक है, अतः प्रायः समस्त परिभाषायें उसके व्यावहारिक पक्ष की ही व्याख्या करती हैं। किन्तु मानसिक मंदिता के प्रत्यय में किन-किन मानसिक अक्षमताओं को सम्मिलित किया जाये, इस सम्बन्ध में विद्वानों में मतैक्य नहीं है। इसके अतिरिक्त मानसिक कारकों को भावात्मक अथवा व्यक्तित्व सम्बन्धी कारकों से पूर्णतया पृथक कर उनका मूल्यांकन किया जाय या नहीं इस सम्बन्ध में भी विद्वानों में मतभेद है। फिर भी समस्त

परिभाषाओं का आधार सामान्य परिस्थितियों में परिलक्षित होने वाले बालक की एक सामान्य योग्यता ही है न कि उसकी विशेष योग्यता।

मन्दितमना बालकों का व्यक्तित्व **(Personality of Mentally Retarded Children)**

मानसिक मन्दिता मानव व्यक्तित्व की ऐसी ऋणात्मक विशिष्टता है, जो कि किसी क्षेत्र या देश विशेष के लिए ही नहीं अपितु समस्त मानव जाति (human)के लिए एक महत्वपूर्ण समस्या बनी हुई है।

अनेक मनोवैज्ञानिकों और मनोचिकित्सकों के अध्ययन से स्पष्ट हुआ है कि मन्दितमना बालकों के व्यक्तित्व को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। मन्दिमना एक ऐसी विकृति है जो कि बालकों के व्यक्तित्व को विघटित (desorganised) बनाती है। सामान्य बालकों की तुलना में मन्दितमना बालकों में शारीरिक व मानसिक विकृतियाँ अधिक पायी जाती हैं, मानसिक मन्दता बालकों के संज्ञानात्मक पहलुओं (cognitive aspects) जैसे- बुद्धि, शैक्षिक उपलब्धि, विशेष कौशल तथा रुचियों को प्रभावित करती है। इन बालकों का व्यक्तित्व बौद्धिक रूप से अवसामान्य होता है। साधारणतः इनकी बुद्धि लब्धि 75 से कम होती है। निम्न बौद्धिक स्तर के कारण इनमें परिपक्वता (maturation) की गति मन्द होती है, फलस्वरूप इनका व्यक्तित्व बड़ा क्षीण सा लगता है।

पिछड़ा बालक वह है जो कक्षा में अपनी योग्यताओं एवं क्षमताओं के अनुरूप प्रगति नहीं कर पाता तथा अपनी कक्षा (या उसकी आयु-समूह के लिए सामान्य कक्षा) से एक या दो कक्षा नीचे के कार्यों को करने में भी अपने आपको अक्षम पाता है या कठिनाई का अनुभव करता है। उदाहरणार्थ बार्टन हॉल के अनुसार, 'सामान्यतया पिछड़ेपन का प्रयोग उन बालकों के लिए होता है जिनकी शैक्षणिक उपलब्धि उनकी स्वाभाविक योग्यताओं के स्तर से कम हो।

वर्ट ने अपनी पुस्तक 'दी बैकवर्ड चाइल्ड' में पिछड़े बालक को निम्न प्रकार परिभाषित किया है- ''पिछड़ा हुआ बालक वह है जो स्कूली जीवन के मध्य में अपनी आयु स्तर की कक्षा से एक सीढ़ी नीचे की कक्षा का कार्य करने में असमर्थ हो।''

पिछड़ापन प्रायः बालक की सीखने की मन्द गति का भी द्योतक होता है। यह कभी बालक की सभी शैक्षिक विषयों में उपलब्धि को प्रभावित करता है तो कभी केवल किसी विषय विशेष को। बर्ट ने पिछड़े बालकों को सांख्यिकीय रूप से परिभाषित किया है। उनके अनुसार किसी विषय में 85 से कम सम्प्राप्ति लब्धि वाले बालक सामान्य बालकों की श्रेणी में आते हैं।

यह निश्चित करने के लिए कि कोई कम शैक्षणिक उपलब्धि वाला बालक पिछड़ा हुआ है अथवा नहीं, उस बालक की उपलब्धि की तुलना उसकी स्वाभाविक योग्यता से अथवा समान आयु के समान बुद्धि-लब्धि वाले बालक की उपलब्धि से की जानी चाहिए। यह आवश्यक नहीं कि कम औसत बुद्धि लब्धि या योग्यताओं वाले बालक ही शैक्षिक रूप से पिछड़े हों। प्रायः ऐसा भी देखने में आता है कि विशेष प्रतिभा-सम्पन्न बालक, यद्यपि अन्य समान आयु के बालकों की तुलना में उच्च स्तरीय उपलब्धि रखते है, शैक्षिक क्षेत्र में अपनी क्षमताओं एवं योग्यताओं के अनुरूप प्रगति नहीं कर पाते ऐसे प्रतिभाशाली बालक भी पिछड़े बालकों की श्रेणी में आते हैं। दूसरी ओर एक मन्द बुद्धि बालक किसी सामान्य बालक के बराबर प्रगति नहीं कर पाता उसे तब तक पिछड़ा हुआ नहीं कहा जा सकता तब जब तक कि नहीं कर पाता उसे तब तक पिछड़ा हुआ नहीं कहा जा सकता जब तक कि उसकी उपलब्धि की मात्रा उससे कम न हो जितनी कि वह अपनी योग्यता के आधार पर प्राप्त कर सकता है। शैक्षिक रूप से पिछड़े बालक का चित्र यहाँ दिया जा रहा है।

स्वयं के व्यक्तित्व व वातावरण में निहित अनेक कारक बालक के शैक्षिक पिछड़ेपन के लिए उत्तरदायी हो सकते हैं। इन विभिन्न व्यक्तिगत (अथवा व्यक्तित्व सम्बन्धी) व बाह्य (अथवा वातावरणीय) कारणों को अग्र प्रकार सुविधापूर्वक व्यक्त किया जा सकता है-

पिछड़ेपन के कारण

(1) व्यक्तिगत कारण, (2) परिवेशीय कारण (3) अवसामान्य भौतिक विकास

(4) बौद्धिक मन्दता (5) दोषपूर्ण सांवेगिक विकास (6) पारिवारिक कारण

(7) विद्यालयीय कारण (8) सामाजिक कारण

पिछड़ेपन की पहचान एवं निदान (**Identification and Diagnosis of Backwardness**)

बालकों में शैक्षिक पिछड़ेपन के उचित व प्रभावी उपचार के लिए समय पर उसकी पहचान व निदान अत्यन्त आवश्यक है। सामान्य कक्षाओं में ऐसे बालकों की पहचान के लिए उनकी कक्षा में उपलब्धि व शैक्षिक इतिहास को आधार माना जा सकता है। इसके अतिरिक्त मानकीकृत उपलब्धि व मानसिक योग्यता परीक्षणों का उपयोग भी पिछड़ेपन की पहचान के लिए किया जाता है। निदान करके यह जाना जाता है कि बालक किस क्षेत्र में किन कारणों से पिछड़ गया है। क्या उसकी यह कमजोरी किसी विषय विशेष तक ही सीमित है अथवा सभी विषयों में समान रूप से है? पिछड़ेपन के कारण बालक में निहित है अथवा वातावरण में या दोनों में?

वंचित बालक (**Deprived Children**)

वंचित बालक विशिष्ट बालकों की वह श्रेणी है जो कि सामाजिक (Social), आर्थिक (Economical) तथा सांस्कृति (Cultural) विषमताओं (Disparity) के फलस्वरूप उत्पन्न होती है। निरन्तर वैज्ञानिक तकनीकी एवं आर्थिक प्रगति के बावजूद भी समाज में ऐसे कई वर्ग विद्यमान हैं जो अत्यन्त विपन्न (Impoverished) परिवेश में जीवन यापन कर रहे हैं तथा व्यक्तित्व के विकास एवं अपने अन्दर निहित क्षमताओं के प्रस्फुटन के लिए आवश्यक न्यूनतम अपेक्षाओं (Pre-requisites) से वंचित है। अन्य शब्दों में, निम्न सामाजिक आर्थिक स्तर के बच्चे भी इसी श्रेणी में आ जाते हैं जो कि परिवार की सुविधाओं के अभाव के कारण अपनी योग्यताओं का विकास नहीं कर पाते हैं।

वंचित बालक तथा शिक्षा (**Deprived Children and Education**)

जैसा कि पहले संकेत किया जा चुका है, वंचित बालक के लिए विद्यालय का वातावरण अजीब सा रहता है। घर पर अर्जित भाषा तथा उसकी अभिव्यक्ति की कला विद्यालयीय परिवेश में पाये जाने अनुपयुक्त हैं। यही बेमेलपन वंचित बालकों के विकास में बाधक होता है। इसे दूर करने के लिये अध्यापकों तथा अभिभावकों की अभिवृत्तियों को बदलने का प्रयास आवश्यक हो जाता है। इस परिवर्तन से वंचित बालकों को ज्ञान प्राप्ति के साथ-साथ समाज के साथ सामंजस्य स्थापित करने में सहायता मिलेगी। चुंकि वंचित बालक क्षेत्र निर्भर प्रकार के होते हैं अतः उनको शिक्षा प्रदान करने के लिये मूर्त पद्धति का प्रयोग उचित रहता है। प्रायः विद्यालय का सामान्य वातावरण इन प्रवृत्तियों के विरुद्ध होता है अतः वंचित बालक शिक्षा के पर्याप्त मात्रा में लाभान्वित नहीं हो पाते हैं। दूसरे यह भी सामान्य रूप ये पाया गया है कि प्रायः अध्यापक वंचित बालकों की विशेषताओं और कठिनाइयों से अवगत नहीं होते हैं। रथ (1982) ने इन समस्याओं का विश्लेषण करते हुये तीन विशिष्ट उपायों की संस्तुति की है।

(i) पूर्व-विद्यालय वातावरण (pre-school environment) के कारण उत्पन्न अधिगम न्यूनताओं (learning deficits) को दूर करने का प्रयास,

(ii) विशिष्टि विषयों में न्यूनताओं को दूर करने का प्रयास तथा।

(iii) वंचित बालकों की प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति का प्रयास।

यह सर्वविदित है कि शारीरिक तथा मानसिक विशेषताओं में वैयक्तिक भिन्नतायें होती हैं, अतः यह मानना कि सभी बालक अवसर मिलने पर समान क्षमता वाले हो जायेंगे तर्कसंगत नहीं लगता है। अतः क्षमता का वास्तविक मूल्यांकन होना चाहिए। इस मूल्यांकन से न केवल कमियों के सम्बन्ध में ज्ञान होता है बल्कि ऐसे कौशल और क्षमताओं का पता चलता है जो कि वंचित बालकों में होती हैं। ऐसे कौशलों को विकसित तथा पुरुस्कृत करना भी वंचित बालकों की स्थिति को सुधारने में सहयोगी सिद्ध होता है।

इस प्रकार वंचित बालकों की समस्या बहुआयामी (multidimensional) है और इसके समाधान के लिए विद्यालय, परिवार तथा समाज द्वारा सभी स्तरों पर प्रयास अपेक्षित है।

समस्यात्मक बालक (**Problem Children**)

बहुधा ऐसे बालक देखने को मिल जाते हैं, जो अपेक्षित सामान्य व्यवहार नहीं करते और इस प्रकार किसी न किसी समसया के जनक होते हैं। कुछ बालक घर से विद्यालय के लिए घर से निकलते हैं और पार्क में जाकर बैठ जाते हैं, कुछ बालक ऐसे होते हैं जो विद्यालय जाने के उपरान्त बीच में ही विद्यालय से भाग जाते हैं। कुछ ऐसे बालक भी देखने को मिलते हैं जो स्कूल के कार्य को घर पर नहीं करते हैं तो कोई विद्रोही, अनुशासनहीन या उदासीन हो जाता है। अपने इन व्यावहारिक विचलनों के कारण ये बालक अध्यापकों, स्कूल व्यवस्थापकों व माता-पिता सभी के समक्ष कोई न कोई समस्या खड़ी करते रहते हैं, सभी क्षेत्रों में उपलब्धि में पिछड़ जाते हैं तथा समाज में समायोजित नहीं हो पाते। कुसमायोजित तथा असामान्य व्यवहार के कारण ये बालक समस्यात्मक बालक कहलाते हैं।

समस्यात्मक बालक से अभिप्राय (**Meaning of Problem Children**)

वे बालक जिनका व्यवहार या व्यक्तित्व किसी न किसी पक्ष में अत्यधिक असाधारण होता है समस्यात्मक बालक कहलाते हैं। अपने इस असाधारण व्यवहार या व्यक्तित्व के कारण ये विभिन्न प्रकार की समस्याओं को जन्म देते रहते हैं। ये समस्यायें विशेष रूप से किसी एक क्षेत्र के अध्ययन का विषय नहीं होती हैं। बालक की आयु, असाधारण व्यवहार की परिस्थितियाँ तथा स्थान, व्यवहार की प्रकृति व गम्भीरता के अनुसार यह समस्या कभी माता-पिता, शिक्षक, समाज की होती है तो कभी सम्मिलित रूप से सब ही की। अतः इन सब ही के दृष्टिकोणों को समन्वित करके समस्यात्मक बालक को परिभाषित करना अधिक व्यावहारिक होगा। बेलेस्टाइन के शब्दों में 'समस्यात्मक बालक वे बालक हैं जिनके व्यवहार व व्यक्तित्व किसी न किसी बात में गम्भीर रूप से असामान्य है।'

समस्यात्मक बालकों की पहचान

उपचारात्मक तथा मार्गदर्शन प्रदान करने के दृष्टिकोणों समस्यात्मक बालक की सही पहचान तथा उसके व्यवहार की असामान्यता की प्रकृति तथा सीमा की जानकारी

अत्यन्त आवश्यक है। किसी भी एक परिस्थिति में बालक के व्यवहार व व्यक्तित्व का निरीक्षण करके उसकी समस्यात्मक प्रकृति के विषय में कोई सही व निश्चित धारणा नहीं बनाई जा सकती है क्योंकि प्रायः बालक क्षणिक उत्तेजना या अन्य सांवेगिक स्थितियों में भी असामान्य व्यवहार करने लगते हैं जबकि वह व्यवहार उनके व्यक्तित्व का एक अंग नहीं होता है। इसके विपरीत कक्षा में एक अत्यधिक शांत दिखने वाला बालक खेल के मैदान या घर पर समस्यात्मक के समान व्यवहार करने वाला भी हो सकता है। अतः इन बालकों की वैज्ञानिक रूप से पहचान करने के लिए शिक्षण को विभिन्न विधियों व तकनीकियों का प्रयोग करना चाहिए। कुछ मुख्य विधियाँ जो सामान्यतः प्रयोग में लायी जाती हैं निम्न हैं-

बड़ी अवस्था में भी अंगूठा चूसना; नाखून कुतरना, अनैच्छिक मूत्रस्राव करना, आवारागर्दी तथा पलायन, हकलाना, अधीरता, चिन्तातुर रहना, असुरक्षित महसूस करना आदि असामान्य लक्षण भी इन बालकों के व्यवहार व व्यक्तित्व में परिलक्षित होते हैं। इस प्रकार के व्यवहार एक दो बार के देखने पर तो सामान्य ही प्रतीत होते हैं किन्तु आदत या जीवन श्©ली का रूप धर लेने पर गम्भीर समस्याओं को जन्म देते हैं।

कुसमायोजित बालक (**Maladjusted Children**)

कुछ बालक सामान्य बालकों से भिन्न व्यवहार करते हैं, इनके व्यवहार की भिन्नता का कारण उनकी अभिवृद्धि और विकास में भिन्नता है। सामान्यतः अभिभावक अपने बच्चों के शारीरिक स्वास्थ्य की ओर तो पूरा ध्यान देते हैं परन्तु उनके मानसिक स्वास्थ्य पर ध्यान नहीं देते हैं। इसका प्रभाव बालक के व्यवहार व समायोजन पर पड़ता है और उसका समायोजन बिगड़ने लगता है जिसे हम कुसमायोजन का ना देते हैं।

साधारण रूप से कुसमायोजन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें मानसिक एवं व्यवहारिक दोनों ही प्रकार के प्रत्युत्तर निहित रहते हैं और इनके द्वारा ही एक व्यक्ति अभाव, तनाव, भग्नाशा आदि को व्यक्त करता है तथा इन आन्तरिक माँगों तथा बाह्य परिस्थितियों के मध्य सामंजस्य लाता है। क्योंकि उसके अन्दर निहित शक्तियों का बाहरी परिवेश से सामंजस्य नहीं हो पाता है। वह जो चाहता है वह वातावरण एवं स्थितियों से

जब अन्तक्रिया करता है तो उसे वह मिल नहीं पाता अतः जिसके कारण उसमें नैराश्य, द्वन्द्व, तनाव, चिन्ता आदि प्रवृत्ति जन्म लेती है और उसे समायोजन की परिधि से खींचकर कुसमायोजन की ओर ले जाती है जहाँ कि उसके विघटित व्यक्तित्व का विकास होता है।

कुसमायोजित बालकों की सामान्य विशेषतायें-

अधिकतर ऐसे बालक समाज में अपने आपको स्नेह रहित तथा बिना न्याय के सजा पाने वाले समझते हैं। साथ ही ये बालक ऐसा भी सोचते हैं कि उन्हें मानव के रूप में सभी अधिकार प्राप्त नहीं हैं। ऐसे बालक अपने को अवांछित समझते हैं।

शारीरिक विशेषतायें-

स्कूल न जाना तथा असामाजिक कार्य में लिप्त होना, हीनता की भावना, ग्रन्थि असन्तुलन भी कुसमायोजन का कारण हो सकता है क्योंकि ग्रन्थि के आवश्यकता से अधिक या कम हारमोन निकलने पर बालक का शारीरिक विकास यथोचित नहीं हो पाता है। फलस्वरूप ये बालक हीन भावना के कारण कुसमायोजित हो जाते हैं।

मनोवैज्ञानिक विशेषतायें-

ऐसे बालकों की बुद्धि लब्धि प्रायः 85 या इससे कम होती है। इनमें तार्किक चिन्तन की शक्ति कम होती है। चिन्ता, मनोविकार, संदेह, स्नायुविक तनाव, हिस्टीरिया, परपीडन-कामुकता, तनाव स्वपीडन, कामुकता, स्वप्रेम, ग्रन्थियाँद्ध स्वलिंगयकामुकता आदि विशेषतायें ऐसे बालकों में पायी जाती है।

सामाजिक विशेषतायें-

प्रायः दूषित पड़ोस के कारण भी बालक कुसमायोजित बन जाते हैं क्योंकि आस-पास के बालकों से उसकी दोस्ती हो जाती है जिसका सीधा प्रभाव बालकों के व्यवहार पर पड़ता है। इसके अतिरिक्त बालकों के कुसमायोजन का कारण गरीबी, एक भग्न परिवार, मित्रों की बुरी साबित भी होती है। कभी-कभी उच्च समाज में भी, जहाँ सभी आर्थिक साधन उपलब्ध हैं वहाँ पर कुसमायोजित बालक मिलते हैं।

अपराधी बालक (**Delinquent Children**)

किसी सदस्य अथवा सदस्य-समूह के द्वारा किये गये इस प्रकार के व्यवहार से अन्य सदस्य अथवा समूह को या उसकी सम्पत्ति को क्षति पहुंचती है। वयस्कों में ही देखने को नहीं मिलता है। लेकिन यह समाज विरोधी व्यवहार केवल वयस्कों में ही देखने को नहीं मिलता है। प्रायः बालक भी इस स्तर के अपराध कर जाते हैं जो कि न्यायालय में सूचित किये जाते हैं। यही बालक 'किशोर अपराधी बालक' या 'किशोर अपराधी' के नाम से जाने जाते हैं। पूर्व-किशोरावस्था तथा किशोरावस्था बालक की सामाजिक, सांवेगिक तथा नैतिक मूल्यों, रुचियों आदि के विकास की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण होती है। इस समय बालक के समक्ष जो भी वातावरण तथा आदर्श रखा जाता है उसको वह अपने मापदण्डों के आधार पर मापता है। यदि उसके जीवन मूल्यों व समाज के आदर्श व मूल्यों में टकराहट होती है तो वह कभी छुपकर तो कभी निर्भय होकर समाज विरोधी कार्य करने में भी नहीं चूकता। उचित समय पर उचित निर्देशन व उपचार के द्वारा यदि उसकी इस प्रवृत्ति को समाप्त नहीं कर दिया जाता है तो वह समाज, राष्ट्र व स्वयं अपने भविष्य के लिए समस्या बन सकता है।

बालकों के द्वारा सामाजिक मूल्यों के विपरीत किया गया प्रत्येक कार्य 'बाल अपराध' कहलाता है तथा इन्हें करने वाले बालक 'बाल अपराधी' कहलाते हैं। इस प्रकार के कृत्यों का विस्तार बहुत अधिक है। इसमें साधारण उद्दण्डता से लेकर हत्या तथा बलात्कार जैसे गम्भीर अपराध सम्मिलित हैं। क्योंकि प्रत्येक राष्ट्र तथा समाज के अपने पृथक सामाजिक मूल्य तथा नैतिक मापदण्ड होते हैं (जो समय के साथ परिवर्तित होते रहते हैं), 'बाल अपराधी' तथा 'बाल अपराध' को किसी एक सर्वमान्य परिभाषा द्वारा परिभाषित नहीं किया जा सकता है। सामान्य रूप में यह एक कानूनी ;समहंसद्ध तथा प्रचलित प्रत्यय है। अल्पवयस्क के द्वारा किया गया वह व्यवहार है जो विशेष विधिक प्रतिमानों अथवा किसी सामाजिक संस्थान के आदर्शों को निरन्तर अथवा और गम्भीरता के साथ तोड़ता है जिससे कि व्यवहार करने वाले व्यक्ति अथवा समूह के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही का दृढ़ आधार प्राप्त हो जाता है।

द्वितीय अध्याय

साहित्य का पुनरावलोकन

किसी भी शोध कार्य को पूर्ण करने के लिए एवं जीवन्त बनाने के लिए तथा सफल सार्थक बनाने के लिए उस विषय से सम्बंधित पूर्व में किये गये शोध कार्यों की अहम भूमिका होती है। किसी भी शोध कार्य का वैज्ञानिक स्तर पर अध्ययन करते समय साहित्य की समीक्षा एक महत्वपूर्ण पहलू होता है। प्रस्तावित अध्ययन हेतु हमें सैद्धांतिक रुपरेखा प्रदान करने में सहायक होते हैं। पूर्व साहित्यों के माध्यम से ही अनुसंधानकत्र्ता को यह ज्ञात होता है कि इस विषय पर कितना शोध कार्य किया जा चुका है। उस जानकारी के आधार पर शोधकत्र्ता भविष्य में सम्पादित होने वाले शोध के सम्बंध में दिशा-निर्देश प्राप्त करता है एवं शोध कार्य की रुपरेखा तैयार करता है। साहित्य पुनर्विलोकन के अध्ययन द्वारा ही अनुसंधानकत्र्ता यह निर्णय लेने में सफल होता है कि किस प्रकार कितनी गहराई तक किस विषय पर अनुसंधान कार्य करना है।

सम्बंधित साहित्य का पुनरावलोकन करने से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि साहित्य पुनरावलोकन क्या है?

सम्बंधित साहित्य से तात्पर्य अनुसंधान की समस्या से सम्बंधित उन सभी प्रकार की पुस्तकों, ज्ञानकोषों, पत्र-पत्रिकाओं, प्रकाशित तथा अप्रकाशित शोध प्रबंधों एवं अभिलेखों आदि से है, जिनके अध्ययन से कल्पनाओं के निर्माण, अध्ययन की रुपरेखा तैयार करने एवं कार्य को आगे बढ़ाने में सहायता मिलती है।

इसके महत्व को स्पष्ट करते हुए गुड, दार तथा स्केट्स कहते हैं-"एक कुशल चिकित्सक के लिए यह आवश्यक है कि वह अपने क्षेत्र में हो रही औषधि सम्बंधी आधुनिकतम खोजों से परिचित होता रहे, उसी प्रकार शिक्षा में जिज्ञासु छात्र, अनुसंधान के क्षेत्र में कार्य करने वाले तथा अनुसंधानकत्र्ता के लिए भी उस क्षेत्र से सम्बंधित सूचनाओं एवं खोजों से परिचित होना आवश्यक है।"

पुनरावलोकन सम्बंधित फ्लो चार्ट

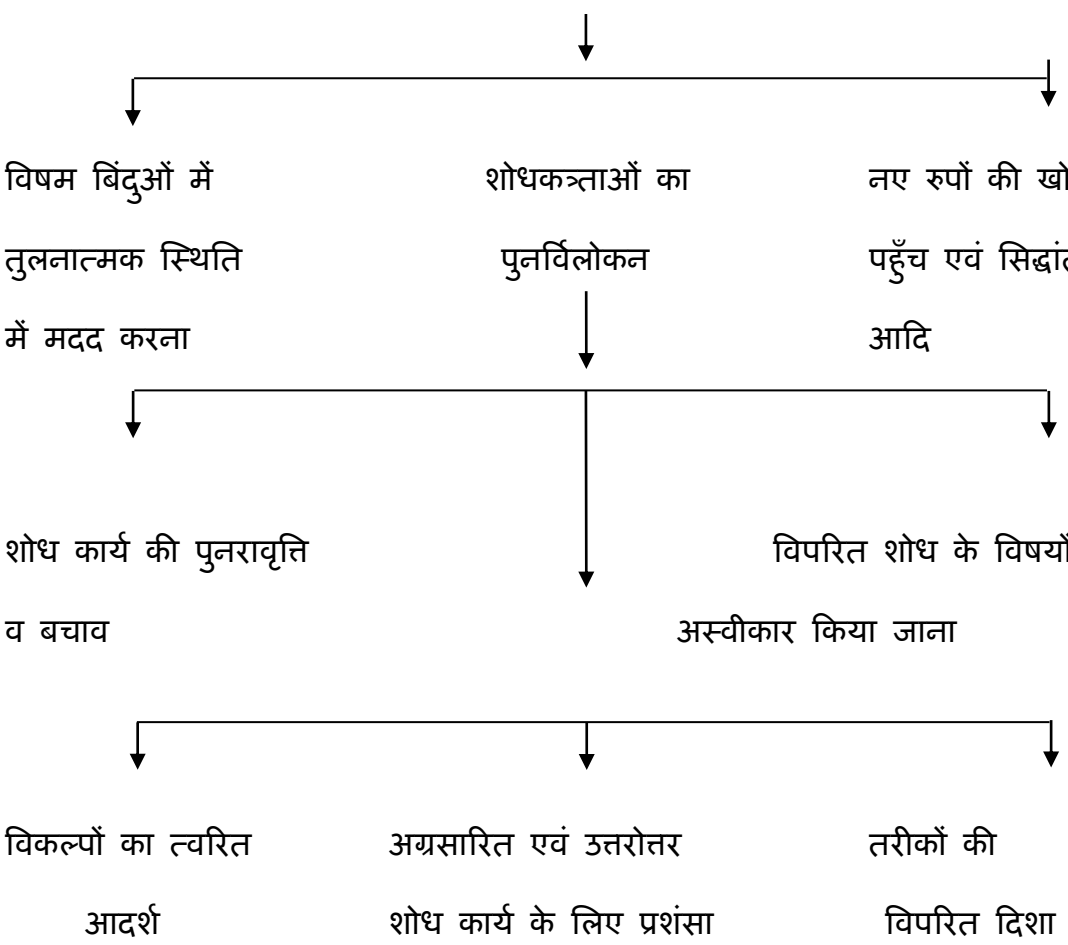

प्रस्तुत अध्ययन में, शोध के इन प्रमुख बिंदुओं के संदर्भ में किये गये वैज्ञानिक अध्ययनों का वर्णन-

किशोरों/किशोरियों के आक्रामक व्यवहार पर टी**0**वी**0** के प्रभाव के संदर्भ में अध्ययन-

विकासात्मक मनोवैज्ञानिकों (ह्यूसमेन एवं मिलर 1994, बुशमेन एवं एंडरसन 2001, एंडरसन एवं साथी 2005) ने यह प्रमाण प्रस्तुत किये हैं कि ''हिंसक 'मीडिया' की बच्चों द्वारा भविष्य में आक्रामक व्यवहार करने व बाल अपराधी होने में महत्वपूर्ण भूमिका है।''‘

बेंदूरा (**1965)** ने अपने अध्ययन के दौरान कुछ किशोरों को एक मशहूर मा ॅडल को एक 'गुड़िया' को मारते एवं उस पर अत्याचार करते दिखाया। तदुपरांत उन किशोरों को अन्य किशोरों (जिन्होंने यह दृश्य नहीं देखा था) के साथ मिलाया, तो यह पाया गया कि जिन किशोरों ने यह दृश्य देखा था, उनमें आक्रामक व्यवहार की स्पष्ट झलक दिखाई पड़ रही थी, परंतु वे किशोर जिन्होंने यह दृश्य नहीं देखा था, वे सामान्य व्यवहार कर रहे थे।

पीटरसन (**1967)** ने अपने प्रयास से यह तथ्य सामने लाया कि परिवारों में पारिवारिक धारावाहिक अधिक लोकप्रिय है और इससे भी एक सम्भावित खतरा बना हुआ है। इन धारावाहिकों में अधिकतर पारिवारिक सदस्यों के बीच ही आपस में षड्यंत्र की रचना करते दिखाया जाता है और इन धारावाहिकों को काफी लम्बा बनाया जाता है, जो वर्षों तक चलते हैं। इस तरह ये धारावाहिक न केवल पर्याप्त समय लेते है, बल्कि लम्बे समय तक परिवार पर प्रभाव भी डालते हैं, जिसका प्रभाव अंततः नकारात्मक ही देखा गया है।

लाईबर्ट और बैरॉन (**1972)** ने अपने अध्ययन में यह पाया कि जो किशोर नकारात्मक व्यवहार वाले कार्यक्रम देखते हैं, उनमें नकारात्मक व्यवहार करने की उत्तेजना अति तीव्र होती है। वे दूसरों को नुकसान/हानि पहुँचा कर आंतरिक खुशी का अनुभव करते हैं एवं पात्रों का अनुशरण इस प्रकार करते हैं, जो सामाजिक परिवेश में नकारात्मक रुप में देखा जाता है।

फेडरिच एवं स्टेन (**1972)** ने अपने अध्ययन हेतु तकरीबन 100 किशोरों का चयन किया। किशोरों के समूह 30, 30 और 40 बनाकर, अलग-अलग वातावरण में उनका चार सप्ताह का अध्ययन किया गया। प्रथम 30 किशोरों को नकारात्मक वातावरण प्रदान कर उन्हें उत्तेजना से परिपूर्ण व हिंसात्मक दृश्यों को दूरदर्शन व वीडियो के माध्यम से दिखाया गया। दूसरे चरण में 30 अन्य किशोरों को सामान्य सामाजिक वातावरण में सहानुभूति, परोपकार व उदारता आदि की शिक्षा प्रदान की गई और अंतिम चरण में 40 किशोरों को तटस्थ वातावरण में कम उत्तेजक व हिंसात्मक दृश्य दिखाये गये तथा उसी प्रकार सहानुभूति व उदारता का पाठ भी नहीं के बराबर पढ़ाया गया। चार सप्ताह तक

उनके व्यवहारों की गणना अंकों के आधार पर लेखनीबद्ध की गई। यह पाया गया कि जिन किशोरों को सामान्य सामाजिक वातावरण प्रदान किया गया था, उनके अंक सबसे ज्यादा थे। द्वितीय स्थान पर तटस्थ वातावरण के किशोरों को मिला। नकारात्मक वातावरण के किशोरों ने सबसे कम अंक अर्जित किये।

जंग व कामस्टॉक **(1994)** ने टी0वी0 हिंसा के आक्रामक व्यवहार पर प्रभाव का बहुविश्लेषण किया और यह पाया कि टी0वी0 हिंसा व आक्रामक व्यवहार में महत्वपूर्ण धनात्मक सम्बंध है।

बुशमेन **(1995)** ने अपने अध्ययन में पाया कि किशोर जब नकारात्मक व्यवहार वाले कार्यक्रम देखते है, तो वह दृश्य अथवा घटना उनके मन-मस्तिष्क में घर कर जाती है। जब कभी यथार्थ के धरातल पर इस तरह का वाक्या होता है तो जो उनके जेहन में कार्यक्रम देखने के दौरान जो घर कर गया था, वह सब सामने आ जाता है और वे उसके अनुरुप ही वे अपना व्यवहार प्रकट करते हैं, जो कि सामाजिक दायरे में नकारात्मक कहलाता है। अतः कह सकते हैं कि अत्यधिक हिंसात्मक/नकारात्मक व्यवहार के कार्यक्रमों का किशोरों के मस्तिष्क पर नकारात्मक प्रभाव ही पड़ता है, जो कि सदैव ही हानिकारक है।

क्रिक व ग्रोटेपीटर **(1995)**, ह्यूजमेन एवं साथी (2003) तथा कोयने एवं आर्चर (2005) ने विभिन्न अध्ययनों में यह पाया कि टी0वी0 हिंसा लोगों में सम्बंधात्मक हिंसा को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इस हिंसा का सामान्य स्वरुप साजिशपूर्ण व्यवहार है, जिसमें अफवाह फैलाना, गप्पे लड़ाना व झूठ बोलना आदि ऋणात्मक व्यवहार शामिल है। बुशमेन एवं साथियों (2002) तथा जेंटाइल एवं साथियों (2003) ने भी यह पाया कि टी0वी0 पर लगातार व लम्बे समय तक प्रदर्शित हिंसात्मक दृश्य न केवल दर्शक में शारीरिक व भाशिक आक्रामकता को बढ़ाता है, बल्कि सम्बंधात्मक आक्रामकता में भी वृद्धि करता है।

मैकनीले-चोक एवं साथी **(1998)** तथा ब्रोनिमा एवं साथी (2003) ने अपने अध्ययनों द्वारा यह प्रमाण प्रस्तुत किया कि उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले बच्चे

जिनका भाषिक विकास उच्च स्तर का था, जो विभिन्न संचार माध्यमों का अधिक बारम्बारता से उपयोग करते थे तथा इन संचार माध्यमों द्वारा प्रस्तुत सामग्री को समझ पाते थे, ने तुलनात्मक तौर पर अधिक सम्बंधात्मक आक्रामकता का प्रदर्शन किया। अतः यह स्पष्ट है कि उच्च सक्रिय व उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर के बच्चों को विभिन्न संचार माध्यमों यथा टेलीविजन, विडियो एवं फिल्म में प्रस्तुत सम्बंधात्मक हिंसा के अवलोकन का अवसर अधिक मिलता है, जिसके कारण उनमें ऐसे ऋणात्मक व्यवहारों के प्रति समझव उनके पुनरावृत करने की सम्भावना बढ़ जाती है।

बर एवं हेयने **(1999)** तथा जेंटाइल एवं सेसमा **(2003)** ने अपने अध्ययनों के आधार पर यह समझाया कि टेलीविजन पर देखे गये सरल व जटिल व्यवहारों की बच्चों द्वारा पुनरावृत्ति को समझने के लिए 2 से 5 वर्ष की आयु अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

डिल (2000) ने अपने शोध से यह निष्कर्ष निकाला कि देखकर सीखने को जो सिद्धांत है, वह मनुष्य को प्रत्यक्ष रुप से प्रभावित करता है। इसके परिणाम शीघ्र निकलते हैं और दण्ड भी भुगतना पड़ता है। जब किशोर अपने आदर्श को दूरदर्शन पर सकारात्मक व्यवहार करते देखता है, तो उसके विचार भी सकारात्मक रुप धारण कर लेते हैं, वहीं नकारात्मक व्यवहार उसे दूसरों के साथ आक्रामक व्यवहार करने पर विवश कर देता है और उसके व्यवहार की प्रकृति भिन्न हो जाती है।

कैंसर फेमिली फाउण्डेशन **(2001)** द्वारा सेक्स आन टी0वी0 विषय पर किये गये अध्ययन अनुसार 4 में से 3 प्राईम टाईम शो में यौन सम्बंध हुआ करते हैं, जिसका सीधा असर किशोरों पर परिलक्षित होता है। वे भी इससे अभिभूत हो नये-नये सम्बंध स्थापित करना चाहते हैं, जिसके कारण हिंसक स्वभाव का विकास होता है तथा अश्लीलता उनके आचरण में झलकती है।

एंडरसन एवं साथी **(2001)** ने भी यह पाया कि संचार माध्यमों का सदुपयोग बच्चों में प्रसामाजिकता को विकसित करने में तथा बच्चों को उनके शैक्षिक निष्पादन में सहायता करने हेतु किया जा सकता है। इस बात की पुष्टि बेंदूरा (1977) व फ़िस्क एवं साथियों (1999) के अध्ययनों से भी हुई है।

हेमामालिनी एवं साथियों (2010) ने अपने अध्ययन में पाया कि छुट्टी के दिनों में अत्यधिक टी0वी0 के समक्ष समय गुजारने के कारण बच्चों में हिंसा काी मात्रा बढ़ी।

वर्मा एवं अजवानी (**2010)** ने अपने अध्ययन में यह पाया कि जिन लोगों ने टी0वी0 पर तुलनात्मक रुप से ज्यादा समय धारावाहिकों को देखने में गुजारा, वे कम समय तक टी0वी0 धारावाहिकों को देखने वाले लोगों की तुलना में साजिशपूर्ण व्यवहार करने हेतु अधिक प्रवृत्त हुए।

ओस्ट्राव एवं साथियों (**2007)** ने सापेक्षिक रुप से उच्च सामाजिक, आर्थिक स्तर व उच्च क्रियाशील बच्चों पर किये गये एक लम्बवत् अध्ययन में यह पाया कि जिन बच्चों को लम्बवत् शैक्षिक कार्यक्रम दिखाए गए, उनके व्यवहार में प्रसामाजिकता अधिक थी। अपने अध्ययन में उन्होंने यह भी पाया कि जो बच्चे स्कूल में सम्बंधात्मक हिंसा का प्रदर्शन करते पाये गये, वे अन्य कम आक्रामक बच्चों की तुलना में अधिक टी0वी0 देखने के आदी थे।

वरटेला (**2011)** द्वारा हिंसा प्रवणता पर टी0वी0 के प्रभाव के अध्ययन हेतु किया गया। बच्चों को बेतरतीब क्रम में हिंसात्मक अथवा अहिंसात्मक 'विडियो गेम' खेलने दिये गये। इसके पश्चात् उन्हें आक्रामक होने का अवसर दिया गया और उनके व्यवहार को प्रेक्षण किया गया। यह पाया गया कि जिन बच्चों ने हिंसात्मक 'विडिया गेम' खेले, उनमें परिस्थिति आने पर आक्रामक व्यवहार करने की प्रवणता उन बच्चों की तुलना में ज्यादा थी, जिन्होंने अहिंसात्मक 'विडियो गेम' खेले। चूँकि अब यह कत्तई सम्भव नहीं है कि बच्चों को टी0वी0 देखने से वंचित किया जा सके। अतः परटेला ने यह सुझाव दिया कि टी0वी0 हिंसा के दुष्प्रभाव से बच्चों को बचाने के लिए माता-पिता या बालकों को पारिवारिक परिस्थिति में प्रदर्शित होने वाले टी0वी0 कार्यक्रमों का सावधानीपूर्वक चयन करना होगा तथा टी0वी0 स्रोतों का भी यह दायित्व होना चाहिए कि वे टी0वी0 कार्यक्रमों में हिंसा के अंश को न्यूनतम करें।

आक्रामक व्यवहार पर सुझाावग्रहणशीलता के प्रभाव के संदर्भ में अध्ययन-

डोमेनिक एवं साथियों (**2009)** ने अपने विस्तृत अध्ययन में पाया कि टी0वी0 कार्यक्रमों में प्रस्तुत माॅडल प्रतिष्ठा सुझाव की प्रक्रिया के तहत दर्शकों में हिंसक प्रवृत्ति को विकसित करने में अपने भूमिका निभाते हैं। ऐसी स्थिति में उच्च सुझावग्रहणशीलता दर्शक माॅडल की प्रतिष्ठा सुझाव प्रभाव के फलस्वरुप, निम्न सुझावग्रहणशीलता दर्शक की तुलना में परिस्थिति आने पर हिंसक व्यवहार अधिक प्रदर्शित करते हैं। डोमेनिक के अनुसार व्यक्ति अपनी जाग्रतावस्था का बड़ा हिस्सा टी0वी0 के समक्ष गुजारता है, जो उसे एक शिक्षक की भाँति व्यवहार के नियम व सामाजिक मानकों को बताता है। दर्शक की सुझावग्रहणशीलता के फलस्वरुप टी0वी0 में प्रस्तुत माॅडलों के सम्प्रेक्षण से स्वयं में उत्तेजना महसूस करते हैं और उनके समान हीं हिंसक व्यवहार करने के लिए उत्तेजित हो जाते हैं, क्योंकि उदोलन की स्थिति दर्शक की अंतर्बाधा को परिवर्तित कर आक्रामकता की प्रवृत्ति को उत्तेजित कर देती है।

चेरिल एवं साथियों (**2009)** के अध्ययनों से यह निष्कर्ष निकला है कि टी0वी0 युवा की सुझावग्रहणशीलता के प्रारुप को परिवर्तित कर देता है। 681 बालकों व 433 बच्चों (औसत आयु 9.9 वर्ष) पर किये गये इस अध्ययन में प्रयोज्यों की विभिन्न गतिविधियों यथा खेल, टी0वी0 देखना, घर के कार्य करना आदि के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन किया गया। अनुसंधानकत्र्ताओं ने यह भी पाया कि टी0वी0 बच्चों के दैनिक कार्यों पर भी दुष्प्रभाव डालता है।

गोक्सू (**2009)** ने अपने अध्ययन में यह पाया कि टी0वी0 खतरनाक शीलगुणों को अपनाने के सुझावों को प्रस्तुत करने के माध्यम के रुप में कार्य करता है। इस अध्ययन में यह भी पाया गया कि दर्शक की सुझावग्रहणशीलता के फलस्वरुप उनमें हिंसक व्यवहार करने की प्रवृत्ति अधिक हो जाती है।

मेथ्यू (**2011)** ने एक रोचक अध्ययन में व्यावसायिक कुश्ती के प्रेक्षण का बच्चों पर प्रभाव का अध्ययन किया। उन्होंने पाया कि विगत चार वर्षों में व्यावसायिक कुश्ती देखने वालों की संख्या बढ़ी तथा साथ ही यह भी पाया कि इसके फलस्वरुप 'रिसेश' के

दौरान व्यावसायिक कुश्ती देखना पसंद करने वाले बच्चों ने आक्रामक व गलत खेल व्यवहार अधिक प्रदर्शित किया। बच्चों ने अपनी सुझावग्रहणशीलता के कारण वहीं किया जो उन्होंने व्यावसायिक कुश्ती लड़ने वालों को करते देखा। उन्होंने इस सुझावग्रहणशीलता के चलते उसी अनुपयुक्त भाषा का प्रयोग किया, जिसे वे मैच देखते समय या टी0वी0 पर सुनते थे। इससे यह स्पष्ट है कि सुझावग्रहणशीलता व टी0वी0 हिंसा के प्रेक्षण के फलस्वरुप हिंसक व्यवहार प्रवृत्ति में धनात्मक सम्बंध है।

इन अध्ययनों के अतिरिक्त वे समस्त अध्ययन, जिनमें टी0वी0 हिंसा को व्यक्ति की हिंसक प्रवृत्ति का कारक होना पाया गया, अप्रत्यक्ष तौर पर दर्शकों की सुझावग्रहणशीलता की भूमिका की ओर भी प्रकाश डालते हैं, जिसके फलस्वरुप टी0वी0 हिंसा के प्रेक्षण का भिन्नात्मक प्रभाव उनके हिंसक व्यवहार पर पड़ता है।

आक्रामक व्यवहार में लिंग विभिन्नता के संदर्भ में अध्ययन-

ह्यूजमेन एवं साथियों (**1972)** ने आक्रामकता के हर माप पर स्त्री व पुरुष के मध्य सांख्यिकीय रुप से सार्थक अंतर पाया। यह पाया गया कि पुरुषों में उनके द्वारा प्रदर्शित क्रोध व आक्रामकता के शीलगुण का सम्बंध तीव्रतर प्रतिक्रियाशीलता एवं उदोलन से है, जबकि स्त्रियों के संदर्भ में यह बात लागू नहीं होता। फेबर व बनर्स (1996) ने पाया कि वितृष्णा उत्पन्न करने वाली घटनाओं के प्रति स्त्री व पुरुष के विभिन्न दैनिक प्रत्युत्तरों के फलस्वरुप उनमें व्यवहारात्मक परिवर्तन दिखाई पड़ते हैं।

क्रिक व ग्रोटेपीटर (**1995)** ने बाल्यकाल के आक्रामक व्यवहार को समझाने हेतु लिंग आधारित उपकल्पना स्थापित की, जिसके अनुसार लड़के प्रायः शारीरिक आक्रामकता का तथा लड़कियाँ प्रायः सम्बंधात्मक आक्रामकता का प्रदर्शन करती हैं।

ओस्ट्रोव एवं साथियों **(2007)** ने भी अपने अध्ययनों द्वारा इस उपकल्पना की पुष्टि की तथा इस संदर्भ में 'मिडिया' हिंसा की महत्वपूर्ण भूमिका को पाया। मेकनली-चोक एवं साथियों (1998), क्रिक एवं साथियों (1997, 1999), हार्ट एवं साथियों (1998), रसेल एवं साथियों (2003), सीबेन (2003), बोनिका एवं साथियों (2003), हावले (2003), ओस्ट्रोव व कीटिंग (2004) तथा ओस्ट्रोव एवं साथियों (2004) ने भी अपने विभिन्न अध्ययनों में

टी0वी0 हिंसा का लड़के व लड़कियों पर विभिन्न प्रभाव पाया, जिसके अनुसार लड़के, लड़कियों की तुलना में अपने साथियों के साथ शारीरिक हिंसा का अधिक प्रदर्शन करते हैं, जबकि लड़कियाँ, लड़कों की तुलना में अधिक सहेलियों के साथ सम्बंधात्मक हिंसा का ज्यादा प्रदर्शन करती हैं।

मोफ़ीटी (**2004)** ने अपने अध्ययन में यह पाया कि मध्य किशोरावस्था के दौरान किशोर व किशोरियाँ दोनों ही समाज विरोधी गतिविधियों में लगभग समान रुप से संलिप्त होते हैं।

वर्मा एवं अजवानी (**2010)** ने अपने शोध में यह पाया कि स्त्री व पुरुष में षड्यंत्रकारी प्रवृत्ति लगभग समान होती है। उनके अनुसार आज के आधुनिक युग में विभिन्न कारणों के चलते स्त्री व पुरुष दोनों ही अपना ज्यादा समय घर से बाहर गुजारते हैं। किशोरों में इसकी मुख्य वजह शैक्षिक गतिविधियाँ हैं, जिसके फलस्वरुप घर पर गुजारने वाला समय (टी0वी0 के समक्ष गुजारने वाला समय) भी दोनों के लिए लगभग समान हो गया है। परिणामस्वरुप टी0वी0 हिंसा का दोनों लिंग समूहों पर लगभग समान प्रभाव पाया गया है।

ओस्ट्राव एवं साथियों (**2007)** ने उच्च सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले तथा उच्च क्रियाशील बच्चों पर किये गये अध्ययन में टी0वी0 हिंसा के प्रभाव के संदर्भ में लिंग विभिन्नता का अध्ययन किया। उन्होंने लड़कियों में पूर्व व वर्तमान सम्बंधात्मक आक्रामकता में धनात्मक सम्बंध पाया, परंतु लड़कों के संदर्भ में यह धनात्मक सम्बंध पूर्व तथा वर्तमान शारीरिक आक्रामकता के संदर्भ में पाया गया। इन अध्ययन परिणामों से यह पता चलता है कि पूर्व बाल्याकाल में संचार माध्यमों के प्रसार के कारण लिंग सामाजीकरण प्रक्रिया होती है। यह सम्भव है कि टी0वी0 पर समान कार्यक्रम को देखते समय लड़के व लड़कियाँ भिन्न-भिन्न व्यवहार शैली एवं साथियों व स्कीमा की तरफ अवधान केंद्रित करते हैं।

ह्यूजमेन **(2003)** के अनुसार इसकी मुख्य वजह यह है कि लड़के व लड़कियाँ टी0वी0 अथवा संचार माध्यमों में दिखाये जाने वाले समान लिंग पात्रों को ज्यादा अनुकरण करते हैं।

कुंठा और आक्रामकता जैसी नैदानिक अवधारणाओं पर प्रयोगात्मक जांच करते समय बड़ी कठिनाइयों का अनुभव होता है। इन कठिनाइयों के बावजूद हताशा और आक्रामकता पर प्रायोगिक अध्ययनों ने रोसेनजिग (1934), मिलर, डोलार्ड और डोब (1939) सियर्स (1940) और येट्स विश्वविद्यालय के अन्य लोगों के साथ-साथ वॉटसन, मिलग्राम और कई के बीच कड़ाई से शुरू किया। अन्य।

रोसेनजवेग **(1935)** ने एक प्रसिद्ध व्यक्ति के प्रतिदिन की स्थितियों में प्रतिक्रियाओं की विशेषताओं के मॉडल के मूल्यांकन के लिए अपना प्रसिद्ध चित्र चित्रण परीक्षण किया। इस अध्ययन में 24 कार्टून शामिल हैं जो रोजमर्रा की जिंदगी की घटनाओं का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो ज्यादातर एक दूसरे के लिए निराशाजनक महत्व रखते हैं।

विषयों को दूसरे व्यक्ति द्वारा किए गए उत्तर को लिखने या बोलने का निर्देश दिया जाता है। प्रतिक्रियाओं को दो अलग-अलग प्रकार की आक्रामक प्रतिक्रियाओं में विभाजित किया गया था, जैसे कि एक असाधारण, अकर्मक और आवेगी।

जहाँ तक आक्रामकता की दिशा का संबंध था, विभिन्न आयु वर्ग के वयस्कों और बच्चों में अक्सर असाधारण प्रतिक्रियाएं पाई गईं, जहां पर गहन प्रतिक्रियाएं कम से कम देखी गईं। हालांकि लड़कों और लड़कियों के बीच अंतर महत्वपूर्ण नहीं थे, विभिन्न आयु समूहों के बीच मतभेद उल्लेखनीय थे। बच्चों के बड़े होने पर एक्सट्रपुनिटिव प्रतिक्रिया कम और कम हो गई।

मिलर और डॉलार्ड **(1939)** ने अपनी प्रसिद्ध हताशा-आक्रामकता की परिकल्पना के सामान्य सिद्धांत को तैयार किया जिसमें कहा गया है कि आक्रामकता हमेशा हताशा का परिणाम है। मिलर ने इस परिकल्पना को श्वेत समूह द्वारा लगाए गए हताशा के परिणामस्वरूप उनकी प्रतिक्रिया का अध्ययन करने के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका के

नीग्रोओं पर लागू किया। यह अध्ययन हताशा और आक्रामकता के क्षेत्र में सभी शोध का एक प्रारंभिक बिंदु है।

सीयर्स एंड सीयर्स **(1939)** ने परिकल्पना की जांच करने के लिए एक प्रयोग किया कि आक्रामकता के लिए अस्थिरता की ताकत सीधे हताशा की मात्रा के साथ बदलती है।

उन्होंने एक स्वतंत्र चर के रूप में 5 महीने के बच्चे की भूख की प्रवृत्ति की ताकत में बदलाव का उपयोग करने के लिए एक प्रयोग डिजाइन किया। तीन सप्ताह तक लगातार बच्चे को दूध पिलाने से मुंह से बोतल की निकासी बाधित हो गई थी और उसे चूसने का अनुभव हुआ।

जैसे-जैसे बच्चा लगभग अधिक तृप्त हो गया, निराशा की ताकत कम हो गई और इसलिए तुरंत आक्रामक प्रतिक्रियाएं कम और कम हो गईं। दोब, सियर्स और मिलर द्वारा किए गए दो प्रश्नावली अध्ययनों ने उपरोक्त दृश्य के समर्थन में अतिरिक्त सबूत जोड़े हैं।

डेटा ने संकेत दिया कि आक्रामक प्रतिक्रियाओं का अनुपात अधिक था क्योंकि अस्थिरता की ताकत अधिक हो गई थी। आगे के अध्ययन में डोब और सीयर्स (1940) ने पाया कि ओवरट आक्रामकता की मात्रा में प्रगतिशील वृद्धि है क्योंकि आक्रामकता की प्रवृत्ति मजबूत हो जाती है।

सियर्स**,** होवलैंड और मिलर **(1940)** ने आक्रामकता को मापने के लिए तकनीक स्थापित करने के लिए कॉलेज के छात्रों पर एक अध्ययन किया। उन्हें पूरी रात जागते रहना होगा, हालांकि उन्हें रात के खाने, खेल और नींद के दौरान झूठे वादे दिए गए थे।

इस दुख को जोड़ने के लिए उन्हें धूम्रपान करने की भी मनाही थी। तो इन सबके कारण जलन और झुंझलाहट हुई। फलस्वरूप उन्होंने शीतलता, उदासीनता, शत्रुता, शिकायतों और असहयोगी व्यवहार के संदर्भ में आक्रामकता व्यक्त की। वे इतने नाराज थे कि उन्होंने टिप्पणी की सभी मनोवैज्ञानिक पागल हैं।

वाटसन **(1934)** ने असुरक्षित और निराश करने वाले बचपन के अनुभवों के साथ 230 कॉलेज के छात्रों के व्यवहार का तुलनात्मक अध्ययन किया और बचपन के सुखद

अनुभवों को सुरक्षित किया। दो तुलनात्मक समूहों ने अपने आक्रामक व्यवहार में महत्वपूर्ण अंतर दिखाया, निराश समूह सुरक्षित समूह की तुलना में अधिक आक्रामकता दिखा रहा है।

डेम्बो, केस्टिर, उपदेग्राफ ने पाया कि आक्रामकता की आवृत्ति को उस डिग्री के साथ सहसंबद्ध किया गया था जिससे बच्चा समस्या को हल कर सकता है। जो हल नहीं कर सके, उन्होंने अधिक आक्रामकता दिखाई और इसके विपरीत।

काफी अच्छा, इसान, ग्रीन, जर्सिल्ड और अन्य ने निराशा के परिणामस्वरूप बच्चों में आक्रामक व्यवहार की जांच की है। नींद में जाने की सामान्य इच्छा के साथ हस्तक्षेप ने सियर्स, होवलैंड और मिलर ने अपने प्रासंगिक साहित्य में बताया है कि कई प्रकार के आक्रामक कार्यों का उत्पादन किया गया है।

सीयर्स एंड सीयर्स **(1940)** में आगे पाया गया है कि खाने के साथ हस्तक्षेप से युवा शिशुओं में रोना रोना और चूहों में तड़क और काटने के व्यवहार में वृद्धि हुई है।

इस लेखक (1998) ने यह भी पाया कि बोतल से दूध पिलाने के बीच में उसके छह महीने के पोते के खाने में हस्तक्षेप करने से रोना रोना और शारीरिक नाराजगी जैसे कि उसके दोनों पैरों को बार-बार ठोकर मारना जब खिला बोतल उसके मुंह से दूर ले जाया जाता है या जब खिला दूध से भरी बोतल उसे दिखाई जाती है लेकिन जब वह बेहद भूखा होता है तो उसके मुंह के अंदर नहीं डाला जाता है।

दिलचस्प बात यह है कि यह देखा गया कि जब बच्चे को दूध पिलाने की स्थिति में रखा जाता है, तो उसे खिलाई गई बोतल दिखाई जाती है, लेकिन बोतल को मुंह के अंदर डालने में देरी हो जाती है, वह ज्यादा जोर से रोती है और अपने दोनों पैरों को जोर से चिपका देती है, जिससे अधिक झुंझलाहट का संकेत मिलता है।

Doob and Sears (1939) बेलैक, रोड्रिक और किबरॉफ द्वारा किए गए अध्ययनों से संकेत मिलता है कि आक्रामकता की मात्रा निराशा की ताकत के साथ-साथ हस्तक्षेप की मात्रा पर भी निर्भर करती है।

परिकल्पना के समर्थन में आक्रामकता के विस्थापन पर कुछ अध्ययन भी किए गए हैं कि अवरोधी आक्रामकता की मजबूत प्रवृत्ति को विस्थापित करना है। पिता और भाइयों के प्रति आक्रामकता को राजनीति में उतारा जा सकता है जैसा कि लासवेल ने पाया था। मिलर और डॉलार्ड ने एक प्रयोग में चूहों को एक दूसरे से लड़ने के लिए बनाया।

उसके बाद एक चूहे के बजाय एक गुड़िया रखी गई और चूहे ने गुड़िया पर हमला करना शुरू कर दिया। इसी तरह, निराश व्यक्ति हताशा के साथ नहीं जुडने वाले दर्शकों या दर्शकों पर मासूम पर हमला करता है। यह अधिक बार होता है जब निराशा का वास्तविक कारण अज्ञात है।

जब किसी कर्मचारी को कार्यालय में उसके बॉस द्वारा डांटा जाता है, तो वह घर पर कप और प्लेट को तोड़ता है या पिटाई करता है, अपनी पत्नी को अनुचित तरीके से डांटता है। यह आक्रामकता के विस्थापन का मामला है। हमारे दिन-प्रतिदिन के जीवन में सामान्य उदाहरण हैं। उपरोक्त दृश्य के समर्थन में, होवलैंड और सियर्स (1940) ने पाया कि निराशा दक्षिण में कपास की कम कीमत के साथ जुड़ी थी, लेकिन एक निर्दोष, एक नीग्रो हमले का जादू बन गया।

बलात्कार का मामला और इसी तरह के मामले आक्रामकता के विस्थापन को दर्शाते हैं, हालांकि जिन वस्तुओं पर हमला किया गया है, उनका हताशा की उत्पत्ति से कोई लेना-देना नहीं है। होम्स (1972) ने 60 पुरुष अंडर-ग्रेजुएट के साथ आक्रामकता विस्थापन और अपराधबोध पर एक प्रयोग किया।

आक्रामकता के विस्थापन को कुछ दृष्टिकोण अध्ययनों के माध्यम से प्रयोगात्मक रूप से प्रदर्शित किया गया है। 18-20 वर्ष के आयु वर्ग के पुरुषों को एक ग्रीष्मकालीन शिविर में भाग लेने के दौरान हताशा से पहले की स्थिति के बाद और बाद में मेक्सिको और जापानियों के प्रति उनके रवैये को इंगित करने का अनुरोध किया गया था।

दो स्थितियों में प्रतिक्रियाओं की तुलना ने संकेत दिया कि विषयों ने पहले की तुलना में निराशा के बाद वांछनीय लक्षणों की एक छोटी संख्या की जांच की। निराशा -

आक्रामकता की परिकल्पना को बाद में इस दृष्टिकोण से संशोधित किया गया कि आक्रामकता केवल हताशा की प्रतिक्रिया नहीं है।

मैक्लेलैंड और एपिसेला ने 28 विषयों पर एक अध्ययन किया, जो प्रयोगशाला में मध्यम और गंभीर मात्रा में हताशा के अधीन थे और विभिन्न प्रकार की आक्रामक प्रतिक्रियाओं, हमलों, वापसी और युक्तिकरण का प्रदर्शन किया। सीवार्ड (1945) ने चूहों पर अध्ययन की एक श्रृंखला आयोजित करने के बाद पाया कि उम्र बढ़ने के साथ आक्रामक व्यवहार की संख्या और तीव्रता में गिरावट आई है।

इस बात के सबूत थे कि सशर्त प्रतिक्रिया के कारण आक्रामकता हुई। होटेनब्यूज (1951) ने एक अध्ययन किया गुड़िया खेलने पर निराशा का प्रभाव और पाया गया कि घर पर अत्यधिक निराश और सजाए गए बच्चे गुड़िया खेलने में अधिक आक्रामक थे और गुड़िया खेलने के लिए बच्चों ने केवल प्रयोगशाला में ही प्रयोग किया।

लिवॉन और मुसेन **(1957)** ने आक्रामकता और निर्भरता पर काबू पाने के लिए अहंकार नियंत्रण के संबंध पर एक अध्ययन किया। अध्ययन की परिकल्पना का परीक्षण करने के लिए डिजाइन किया गया था कि अहंकार नियंत्रण क्षमता में व्यक्तिगत अंतर आक्रामकता और आश्रित व्यवहार के निषेध की डिग्री से संबंधित हैं। परिणामों से पता चला कि आक्रामक आवेगों को अहंकार नियंत्रण प्रक्रिया द्वारा बाधित किया जा सकता है।

आक्रमण के प्रति मातृ प्रतिक्रियाओं के एक समारोह के रूप में ओवरट और फंतासी आक्रामकता के बीच संबंधों पर एक और अध्ययन में, लेसर (1957) ने आक्रामकता पर प्रोत्साहन और हतोत्साहन के प्रभाव का पता लगाने का प्रयास किया। परिणामों से पता चला है कि मातृ दृष्टिकोण कुछ हद तक काल्पनिकता और अति आक्रमण के बीच के संबंध को निर्धारित करता है।

हताशा की प्रतिक्रियाओं में सेक्स अंतर पर कुछ अध्ययन भी किए गए हैं। रोसेनजिग (1969) ने युवा पुरुषों और महिलाओं के बीच निराशा की प्रतिक्रिया में अंतर का अध्ययन किया। यह पाया गया कि लड़कियों की तुलना में लड़के अधिक आक्रामक और अहंकारी थे।

रोसेनजवेग **(1969)** ने कुंठाओं के प्रति किशोरों की प्रतिक्रिया में सेक्स के आधार पर मतभेदों पर एक और अध्ययन किया। पुरुष विषयों को विशेष रूप से पुरानी पीढ़ी के साथ प्रतिस्पर्धा के संबंध में महिला विषयों की तुलना में अधिक आक्रामक दिखाया गया।

वर्तमान लेखक (1967) ने समस्या की जांच के लिए विषय के रूप में पुरुष और महिला कॉलेज के छात्रों को ले जाने वाली निराशाजनक स्थितियों की प्रतिक्रिया में सेक्स अंतर पर एक अध्ययन किया, दोबट, सियर्स और मिलर (1939) की तकनीक के बाद एक फ्रस्ट्रेशन-रिएक्शन शेड्यूल का निर्माण किया गया।

निराशा प्रतिक्रिया अनुसूची में 10 अलग-अलग निराशाजनक परिस्थितियां शामिल थीं और 8 प्रतिक्रिया पैटर्न जो नीचे दिए गए हैं 110 पुरुष और 110 महिला कॉलेज के छात्रों पर प्रशासित थे।

प्रत्यक्ष शारीरिक आक्रमण के एक संशोधन के माध्यम से तीन चर से संबंधित था। बुश अग्रेसन मशीन एंड प्रोसीजर (1961)। हताशा पर काबू पाने के लिए आक्रामकता या तो महत्वपूर्ण थी या गैर-वाद्ययंत्र मनमाना और गैर-मनमाना था। परिणामों ने संकेत दिया कि गैर-इंस्ट्रूमेंटल स्थिति की तुलना में इंस्ट्रूमेंटल स्थिति के तहत अधिक आक्रामकता हुई।

मजबूत हताशा कमजोर हताशा की तुलना में अधिक आक्रामकता का उत्पादन करती है, लेकिन केवल तब जब आक्रामकता को पहले वाद्य के रूप में अनुभव किया गया हो। परिणाम हताशा आक्रामकता परिकल्पना के संबंध में भी चर्चा की जाती है। ट्रेक्सलर (1976) में चर्चा की है निराशा एक तथ्य है, भावना नहीं, निराशा और कम आत्म-स्वीकृति के बीच संबंध।

चूंकि यह माना जाता है कि निराशा एक सच्चाई है, इसलिए यह मरीजों को निराशा को सहन करने के लिए बेहतर सिखा सकता है, इसलिए उदाहरण प्रस्तुत करने के लिए मामलों को प्रस्तुत किया जाता है कि क्लाइंट को उसे प्राप्त करने में विफल रहने के जोखिम को सहन करने के लिए उसे सिखाकर दीर्घकालिक निराशा को कम किया जाएगा। मुखरता के माध्यम से लक्ष्य।

लीवर **(1976)** द्वारा बनाए गए दक्षिण अफ्रीका में फ्रस्ट्रेशन एंड प्रेजुडिस पर एक सर्वेक्षण में यह देखा गया कि फ्रस्ट्रेशन-आक्रामकता सिद्धांत के प्रस्तावक पूर्वाग्रह को आक्रामकता का एक रूप मानते हैं। इस सर्वेक्षण में दक्षिण अफ्रीका चाप में पूर्वाग्रह पर हताशा के प्रभाव पर तीन अध्ययनों का वर्णन किया गया है।

परिणाम बताते हैं कि एक हताशा सहानुभूति संबंध के लिए कुछ सबूत प्रतीत होते हैं जो दक्षिण अफ्रीका के लिए अजीब हो सकते हैं या नहीं भी हो सकते हैं।

तृतीय अध्याय

शोध प्रारूप

अध्ययन क्षेत्र-

प्रस्तुत अध्ययन का क्षेत्र उत्तर प्रदेष प्रांत का एक शहर गाजीपुर है। इसकी स्थापना तुगलक वंश के शासन काल में सैय्यद मसूद गाज़ी द्वारा की गई थी। कुछ इतिहासकारों के मुताबिक इस शहर का प्राचीन नाम गाधीपुर था, जो कि सन् 1330 में ग़ाज़ीपुर कर दिया गया। ऐतिहासिक दस्तावेजों के मुताबिक ग़ाज़ीपुर के कठउत पृथ्वीराज चैहान के वंशज राजा मांधाता का गढ़ था। राजा मांधाता दिल्ली सुल्तान की अधीनता को अस्वीकार कर स्वतंत्र रुप से शासन कर रहा था। दिल्ली के तुगलक वंश के सुल्तान को इस बात की सूचना दी गई, जिसके बाद मुहम्मद बिन तुगलक के सिपहसालार सैयद मसूद अल हुसैनी ने सेना की टुकड़ी के साथ राजा मांधाता के गढ़ पर हमला कर दिया। इस युद्ध में राजा मांधाता की पराजय हुई, जिसके बाद मृत राजा की सम्पत्ति का उत्तराधिकारी सैयद मसूद अल हुसैनी को बना दिया गया। इस जंग में जीत के बाद दिल्ली सुल्तान की आरे से सैयद मसूद अल हुसैनी को ''मलिक-अल-सादात-ग़ाज़ी'' की उपाधि से नवाज़ा गया। जिसके बाद सैयद मसूद ग़ाज़ी ने कठउत के बगल में गौसपुर को अपना गढ़ बनाया। लेकिन कुछ समय बाद उसने ग़ाज़ीपुर शहर की स्थापना की। जिसके बारे में कुछ इतिहासकारों का मत है कि उस प्राचीन गाधीपुर का ही नया नामकरण ग़ाज़ीपुर कर दिया गया।

जनसंख्या- 3,622,727 (सन् 2011 तक)

घनत्व- 1072

क्षेत्रफल- 39.2 वर्ग किमी (15 वर्ग मीटर)

ऊँचाई- 62 मीटर (203 फीट)

गाजीपुर अंग्रेजों द्वारा सन् 1820 में स्थापित, विश्व में सबसे बड़े अफीम के कारखाने के लिए प्रख्यात है। यहाँ हथकरघा तथा इत्र उद्योग भी है। ब्रिटिश भारत में गवर्नर जनरल लार्ड कार्नवालिस की मृत्यु यहीं हुई थी तथा वे यहीं दफन हुए, जिनका मकबरा आज भी गाजीपुर के गोराबाजार में स्थित है। शहर उत्तर प्रदेश-बिहार सीमा के बहुत नजदीक स्थित है। यहाँ स्थानीय भाषा भोजपुरी एवं हिंदी है। यह पवित्र शहर बनारस (वाराणसी) के 70 किमी0 पूर्व में स्थित है।

गाजीपुर का इतिहास- वैदिक काल में गाजीपुर घने वनों से ढका था तथा उस समय यहाँ कई संतों के आश्रम थे। इस स्थान का सम्बंध रामायण काल से भी है। कहा जाता है कि महर्षि परशुराम के पिता ऋषि जमदग्नि यहाँ रहते थे। प्रसिद्ध गौतम महर्षि तथा ऋषि च्यवन ने यहीं शिक्षा प्राप्त की। भगवान बुद्ध ने अपना पहला प्रवचन सारनाथ में दिया था, जो कि यहाँ से अधिक दूर नहीं है। बहुत से स्तूप उस काल के प्रमाण हैं। गाजीपुर, सल्तनत काल से मुगल काल तक एक महत्वपूर्ण क्षेत्र था। प्रसिद्ध टी0वी0 धारावाहिक 'महाभारत' के पटकथा लेखक 'राही मासूम रज़ा' का जन्म यहीं के ग्राम गंगौली में हुआ था और यहाँ पर शहीद वीर अब्दुल हमीद का भी जन्म हुआ था।

गाजीपुर का भूगोल- गाजीपुर, उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग में, गंगा नदी के किनारे स्थित है। इसके पश्चिम में बनारस, उत्तर में मऊ, पूर्व में बलिया और पश्चिमोत्तर में जौनपुर, दक्षिण में चंदौली जिला इसके पास स्थित है। गंगा किनारे होने के कारण यहाँ की मिट्टी बहुत उपजाऊ है। कृषि यहाँ का प्रमुख व्यवसाय है। गेहूँ, धान और गन्ना यहाँ की मुख्य फसलें हैं।

गंगा घाट- पवित्र नदी मानी जाने वाली गंगा नदी, गाजीपुर से होकर बहती है। यह नदी गाजीपुर के सिधौना क्षेत्र से गोमती नदी का संगम करते हुए जिले में प्रवेश करती है। गाजीपुर में वाराणसी के घाटों की तरह कई गंगा घाट हैं, जिनमें प्रमुख ददरीघाट, कलेक्टर घाट, स्टीमरघाट, चीतनाथ घाट, पोस्ताघाट, रामेश्वर घाट, पक्का घाट, कंकड़िया घाट, महादेव घाट, सिकंदरपुर घाट, श्मशान घाट (सबसे पूर्व दिशा में) तथा मुख्य रुप से सिकंदरपुर घाट, जो करण्डा परगना में प्रचलित घाटों में शामिल है। अतः इसे ''लहुरी काशी'' भी कहा जाता है।

कामाख्या धाम- यह शहर से 40 किमी दूर, गहमर पुलिस स्टेशन के तहत एक हिंदू देवी माँ कामाख्या का मंदिर है। यह मंदिर गड़ाईपुर गाँव में स्थित है। संरक्षण और तीर्थ यात्रियों की सुरक्षा के लिए वहाँ एक पुलिस बूथ स्थापित किया गया है। यह अच्छी तरह से सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है।

महाहर धाम- यह शहर से 30 किमी दूर कासिमाबाद क्षेत्र में स्थित शहर का सबसे बड़ा तीर्थस्थल है। माना जाता है कि महाशिवरात्रि के दिन काशी विश्वनाथ यहाँ पधारते हैं और निकट स्थित कुंड में स्नान करते हैं। चैरी, करहिया और हथौरी के पास रेलवे लाईन और खमाया धाम माता मंदिर और वहाँ माँ दुर्गा मंदिर निकट स्थित है। यह भी माना जाता है कि भगवना श्री राम के पिता, दशरथ जी ने इसी स्थान पर श्रवण कुमार को बाण मारा था।

नेहरु स्टेडियम- यह गाजीपुर शहर का एकमात्र स्टेडियम है, जिसका नाम भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरु के नाम पर पड़ा है। यह एक छोटा तथा सरकारी स्टेडियम है। इसमें एक व्यायामशाला भी है। स्टेडियम आमतौर पर विभिन्न जिला स्तरीय खेलकूद प्रतियोगिताओं के लिए प्रयोग किया जाता है।

धामूपुर- यह गाजीपुर शहर से 37 किमी0 दूर एक छोटा सा गाँव है, जो परमवीर चक्र विजेता वीर अब्दुल हमीद का जन्म स्थान भी है। वीर अब्दुल हमीद, भारत-पाकिस्तान युद्ध के दौरान भारतीय सेना में एक सैनिक थे, जिन्होंने पाकिस्तान की कई टैंकों को नष्ट किया था तथा देश की रक्षा के लिए सर्वोच्च बलिदान दिया।

शिक्षा- यहाँ प्रमुख 5 स्नातकोत्तर महाविद्यालय तथा 100 से भी अधिक विद्यालय है, जबकि जनपद गाजीपुर में 150 स्व-वित्तपोषित महाविद्यालय है। हर वर्ष की तरह गाजीपुर में शिक्षा में विद्यालय का अभिष्ट योगदान रहा है।

शोध का महत्व- प्रस्तुत शोध अध्ययन में किशोर-किशोरियों के आक्रामकता का अध्ययन किया जा रहा है, जिसकी आवश्यकता एवं महत्व अनिवार्य है। जैविक विकास की कई अवस्था से गुजरते हुए मानव अपने जीवन की तीसरी सीढ़ी, लेकिन अत्यंत महत्वपूर्ण सीढ़ी ''किशोरावस्था'' में प्रवेश करता है। किशोरावस्था, बाल्यावस्था तथा

युवावस्था के मध्य की अवस्था है। इसे संधिकाल (Transitional Period) भी कहते हैं। इस अवस्था में प्रवेश करने पर बाल्यावस्था में अर्जित स्थिरता पुनः अस्थिरता में बदलने लगती है और तनाव, आक्रोश, तीव्रता, आक्रामकता व्याप्त होने लगती है।

किशोरावस्था में प्रमुख समस्याओं का पता लगाने के संदर्भ में मून (Moon), पोप (Pope), विलियम्स (Williams) एवं लुईस (Luewis) ने हाईस्कूल व कालेज स्तर के किशोरों की समस्याओं का अध्ययन करके निम्न समस्याओं की खोज की, जो इस प्रकार है- विद्यालय की समस्या, परिवार की समस्या, आर्थिक समस्या, व्यक्तित्व समायोजन की समस्या, स्वास्थ्य की समस्या, अस्थिरता की समस्या, यौन व्यवहार की समस्या, मानसिक न्यूवता, संवेगात्मक समस्या एवं नैतिक समस्या आदि।

किशोरावस्था में क्रोध उत्पन्न करने वाली परिस्थितियाँ अधिकांशतः सामाजिक होती हैं। बालक को क्रोध तब आता है, ज बवह जिस काम में लगा होता है, उसमें बाधा डाली जाती है या उनके द्वारा किये गये कार्यों का उपहास किया जाना भी किशोर में क्रोध उत्पन्न करता है। जब उसके साथ बालक जैसा व्यवहार किया जाता है या उससे जबरदस्ती कोई कार्य कराया जाता है। इन बातों के अलावा किशोर तब भी क्रोध करता है, जब कार्य ठीक तरह से नहीं होता है, उस कार्य के पूर्ण करने में बाधा पड़ने पर किशोर में क्रोध उत्पन्न हो जाता है। उसे रोके जाने पर कुंठा या असहायता का अनुभव करता है। इससे वह क्रुद्ध हो जाता है। वह स्वतंत्र होने की इच्छा रखता है। नव किशोर बालकों की तरह ये इतने अधिक क्रोध में आ जाते हैं कि बेकाबू हो जाते हैं। किंतु उनकी क्रोध की अनुक्रिया का अधिक सामान्य रुप होता है। किशोर क्रोध की स्थिति में बदमिजाज हो जाते हैं। शिक्षा राष्ट्र निर्माण की कुंजी है और मानव निर्माण की आधारशीला भी है। मनुष्य धीरे-धीरे विकास क्रम की तीसरी अवस्था 'किशोरावस्था' में पहुँचता है, यह अवस्था बहुत ही तूफानी एवं संवेगात्मक होती है। ऐसी अवस्था में अक्सर यह देखा गया है कि किशोर- किशोरियों में समायोजन की स्थिति कमजोर हो जाती है, जिससे उनका स्व-समायोजन, समूह समायोजन, विद्यालयी समायोजन कमजोर हो जाता है और यह देखा गया है कि एकल शिक्षण संस्थाओं का भी प्रभाव समायोजन पर पड़ता है।

स्टेनले हाॅल ने कहा है कि ‘‘किशोरावस्था बड़े संघर्ष, तनाव, तूफान तथा विरोध की अवस्था है। इस अवस्था में ऊर्जा का सही समय और सही दिशा में प्रयोग किया जाये तो उसे उन्हें समाज के प्रति एक जिम्मेदार व उपयोगी नागरिक बनाया जा सकता है और भारत जैसे प्रजातांत्रिक देश में यह उत्तरदायित्व और भी महत्वपूर्ण हो जाता है।

किशोरावस्था में आक्रामकता सम्बंधी विकसित सामाजिक विकास- इस अवस्था में सामाजिक सम्बंधों का विकास बड़ी तीव्र गति से होता है। किशोर के सामाजिक सम्पर्क का क्षेत्र काफी बड़ा होता है, जिसमें किशोर/किशोरियों को नयी भूमिकाओं का निर्वाह करते हुए नये सामाजिक सम्बंध को स्थापित करना होता है। वे मित्रों का चयन पूर्वाग्रह के आधार पर नहीं करते हैं, बल्कि परिस्थिति को दृष्टिगत रखते हुए अपना सम्पर्क बनाते हैं। विपरीत लिंग के व्यक्तियों के प्रति सम्बंध प्रगाढ़ होता है। समाज में अन्य व्यक्तियों के प्रति मित्रवत् व्यवहार करते हैं। सामाजिक कार्यों, उत्सवों एवं जुलूसों में बढ़-चढ़ कर भाग लेते हैं। नेतृत्व शैली भी इस अवस्था में प्रदर्शित होती है। समाज की रीतियों प्रथाओं और परम्पराओं के प्रति एक प्रकार की निष्ठा की भावना किशोर के भीतर विकसित होने लगती है। समाज के व्यक्तियों एवं आदर्शों के प्रति उसके भीतर नवीन मनोवृत्तियों, रुचियों, धारणाओं और मूल्यों का निर्माण होता है। सामाजिक जीवन में आत्म नियंत्रण विकसित करने के लिए यह आवश्यक है कि किशोर आदर्श व्यक्तियों से प्रेरणा प्राप्त करें। किशोर अपनी मित्र मण्डली में बैठकर सामाजिक राजनैतिक एवं यौन सम्बन्धी चर्चाओं का आनन्द लेता है।

शोध का उद्देश्य :-

1. किशोर किशोरियों के आक्रामक व्यवहार पर घरेलू हिंसा के प्रभाव का अध्ययन करना।

2. किशोरियों के आक्रामक व्यवहार पर टी.वी. का प्रभाव ज्ञात करना।

3. किशोरावस्था में आक्रामकता तथा विद्यालयीन वातावरण के बीच सह-सम्बन्ध ज्ञात करना।

4. **परिकल्पना (Hypothesies) :-**

उपकल्पना किसी भी शोध की रीढ़ के समान महत्वपूर्ण होती है। प्राकल्पना के महत्व को दर्शाते हुए गुडे एवं हॉट ने Social Research'csa लिखा है-''अच्छे शोध में प्राकल्पना का निर्माण करना सर्वप्रमुख चरण है।'' बिना प्राकल्पना के कोई भी शोध कार्य पूर्ण नहीं हो सकता है। प्रस्तुत शोध की भी निम्नलिखित परिकल्पनाएँ निर्मित की गई है-

1. किशोर/किशोरियों के आक्रामक व्यवहार पर घरेलू हिंसा का प्रभाव नहीं पाया जाता।

2. किशोर/किशोरियों के आक्रामक व्यवहार पर टी.वी. का प्रभाव नहीं पाया जाता।

3. किशोरावस्था में आक्रामकता तथा विद्यालयीन वातावरण के बीच सह-सम्बन्ध नहीं पाया जाता।

न्यायदर्श :-

किसी भी मनोवैज्ञानिक तथ्य अथवा मानवीय व्यवहार के सत्यापन के लिए पूर्ण 'समग्र' समूह का अध्ययन असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य होता है। अतः अधिकांश अवस्थाओं में न्यायदर्श द्वारा ही काम चलाया जाता है। इस दृष्टि से शोध क्षेत्र में न्यायदर्श का बड़ा महत्व है।

न्यायदर्श की विशेशताएं- प्रस्तुत शोध में ''किशोरावस्था में आक्रामकता: कारक एवं प्रभाव'' का अध्ययन किया गया है। गाजीपुर जनपद के क्षेत्रफल को देखते हुए सम्पूर्ण जनपद को अध्ययन की परिसीमा में नहीं रखा जा सकता है। अतः शोध छात्रा द्वारा

गाजीपुर जनपद के शहरी क्षेत्रों का चयन किया गया, जिसमें चार स्कूलों का चयन किया गया, जो निम्न है-

1. राजकीय बालिका इण्टर कालेज, गाजीपुर
2. लूर्दस कान्वेंट गल्र्स इण्टर कालेज, गाजीपुर
3. राजकीय सिटी इण्टर कालेज, गाजीपुर
4. एम0 एच0 इण्टर कालेज, गाजीपुर।

एटकिंसन, स्मिथ, बेम एवं हिलगार्ड (1990)- इन्होंने प्रतिदर्श को परिभाषित करते हुए लिखा है कि ''प्रतिदर्श का तात्पर्य प्राप्तांकों के सम्पूर्ण सेट, जिसे जनसंख्या कहते हैं, से लिये गये प्राप्तांकों के एक अंश से है।''

न्यायदर्श के प्रकार

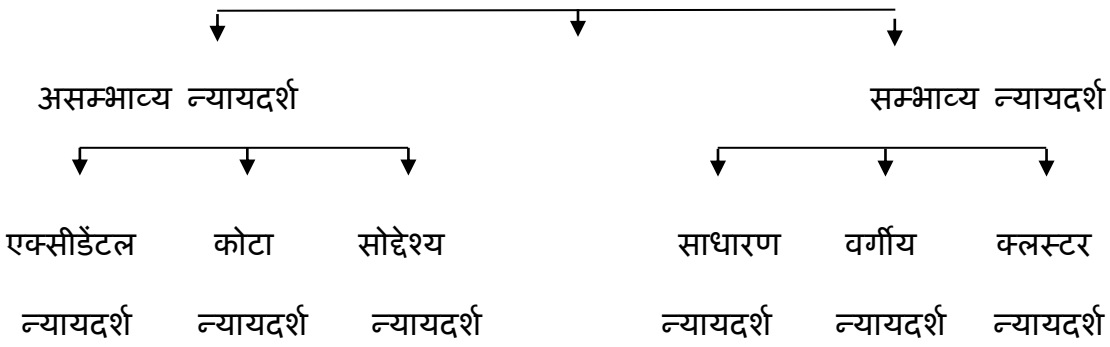

1. लाटरी विधि-यह विधि यादृच्छिक प्रतिदर्श के चयन के लिए सबसे अधिक प्रचलित विधि है। इस विधि में जनसंख्या की सभी ईकाइयों के नाम अथवा उनके लिए निर्धारित संख्याओं को समान आकार के कागज के टुकड़ों पर अलग-अलग लिखा जाता है और उन टुकड़ों से समान गोलियाँ बनाई जाती हैं। इन गोलियों को एक डिब्बे में रखकर इसे अच्छी तरह हिलाया जाता है, ताकि गोलियों में कोई क्रम न रह जाये।

2. अनुक्रमिक सूची विधि- इस विधि में सबसे पहले जनसंख्या अथवा समष्टि की सभी ईकाइयों की सूची बना ली जाती है, फिर किसी पूर्व निर्धारित अनुक्रम के अनुसार उसी सूची से अपेक्षित ईकाइयों का चयन कर लिया जाता है।

3. यादृच्छिक संख्या तालिका विधि- यादृच्छिक प्रतिदर्श के चयन के लिए एक अधिसरल विधि यादृच्छिक संख्या तालिका विधि है।

4. ग्रिड विधि- यादृच्छिक प्रतिदर्श बनाने की एक विधि ग्रिड विधि कहलाती है। सबसे पहले जनसंख्या या समष्टि को भौगोलिक दृष्टि से छोटी-छोटी इकाईयों में विभाजित कर दिया जाता है। इन वर्गों को ग्रिड कहा जाता है।

यादृच्छिक प्रतिदर्श या प्रतिचयन के गुण या लाभ- मनोवैज्ञानिक एवं व्यवहारपरक विज्ञानों के अनुसंधान में यादृच्छिक प्रतिदर्श अथवा यादृच्छिक प्रतिचयन का उपयोग व्यापक रुप से किया जाता है, क्योंकि इसमें कुछ ऐसे गुण हैं, जो किसी दूसरे प्रतिदर्श या प्रतिचयन में कुछ पाये जाते हैं, वे निम्नलिखित हैं-

1. जनसंख्या का वैध प्रतिनिधित्व- यादृच्छिक प्रतिचयन अथवा यादृच्छिक प्रतिदर्श का एक मौलिक गुण यह है कि यह अपनी जनसंख्या का वैध प्रतिनिधित्व करने में सक्षम होता है। यह प्रतिदर्श अपनी जनसंख्या का वास्तविक प्रतिबिम्ब होता है।

2. जनसंख्या की सभी इकाईयों के चयन की समान सम्भावना- करलिंगर, रेबर आदि विद्वानों ने कहा है कि यादृच्छिक प्रतिचयन या प्रतिदर्श में जनसंख्या या समविष्ट की प्रत्येक इकाई को चुने जाने की सम्भावना का संयोग रहता है।

3. पक्षपात से मुक्त- यादृच्छिक प्रतिचयन पक्षपात से मुक्त होता है। इसके आधार पर जिस यादृच्छिक प्रतिदर्श का निर्माण किया जाता है, वह पक्षपातरहित होता है। इसके चयन पर पूर्वधारणा, विवेक, मानसिक वृत्ति आदि पक्षपातों का प्रभाव नहीं पड़ता, क्योंकि प्रतिदर्श के लिए अपेक्षित संख्या में जनसंख्या से इकाईयों का चयन पूरी तरह संयोग पर आधारित होता है।

4. प्रतिचयन-अशुद्धियों का मापन- यादृच्छिक प्रतिचयन पर आधारित यादृच्छिक प्रतिदर्श का एक गुण यह है कि यहाँ इस बात को निर्धारित करना सम्भव होता है कि प्रतिदर्श शुद्ध है अथवा अशुद्ध। इस बात का मापन भी सम्भव होता है कि यदि प्रतिदर्श में अशुद्धी है, तो किस मात्रा

में है।

न्यायदर्श की विशेषताएं- उन किशोर/किशोरियों को शोध अध्ययन में शामिल करेंगे, जिनमें निम्न विशेषताएं हों-

1. वे किशोर-किशोरियाँ जो स्कूल जाते हों,

2. वे एकांकी या एकल परिवार के होने चाहिए।

न्यायदर्श का चुनाव-शोध में कुल 200 किशोर/किशोरियों (100 लड़के एवं 100 लड़कियाँ) जो 13 से 17 वर्ष के बीच के होंगे। एकत्र आँकड़े समान रुप से दो अलग-अलग सामाजिक-आर्थिक स्थिति के होंगे। निम्नलिखित बिंदुओं जैसे- सामाजिक स्तर, शैक्षिक स्तर, व्यावसायिक स्तर, सम्पत्ति स्तर, वार्षिक आय पर आधारित सामाजिक-आर्थिक स्तर करेंगे।

शोध के उपकरण:-

चयनित किए गए किशोर/किशोरियों के आक्रमकता को समझने के लिए निम्नलिखित मापनिय प्रयुक्त किये गये हैं। प्रयुक्त किये गये मापनिय पूर्ण प्रमाणित हैं, जिसे आवश्यकता अनुसार संशोधित किया जाता सकता है।

1. सामाजिक आर्थिक स्तर मापनिय:- चयनित किशोर/किशोरियों सामाजिक आर्थिक स्तर को निर्धारित करने के लिए इस्केल में निम्नलिखित बिंदुओं जैसे समाजिक स्तर, आर्थिक स्तर, व्यवसायिक स्तर, वार्षिक आय, पर आधारित सामाजिक आर्थिक स्तर का अध्ययन किया गया है।

2. बुरस डुरकी स्केल:- इस स्केल के द्वारा किशोर/किशोरियों के आक्रमक व्यवहार को समझने के लिए किया गया है। यह स्केल 67 बिन्दुओं जो आक्रमकता के 8 रूप जैसे - Assault, Indirect Aggression, Irritability, Nagativism, Resentment, Suspicious, Verbal Aggression- Guilt को निर्धारित करने के लिए किया गया है

3. Family Violence Scale:- इस मापनी का उपयोग घरेलु हिंसा के स्वरूप आवृत्ति एवं गम्भिरता को अध्ययन करने के लिए किया गया है। जैसे- शारिरिक हिंसा, भाषायी हिंसा, सामाजिक हिंसा, भावनात्मक हिंसा, मानसिक हिंसा आदि।

4. टेलिविजन देखने सम्बधित प्रश्नावली:- इस प्रश्नावली के प्रयोग से किशोरों/किशोरियों में टी.वी. देखने सम्बंधित व्यवहारिक मापन का प्रयोग किया गया है।

5. स्कूली वातावरण:- इस का प्रयोग किशोरो/किशोरियों द्वारा स्कूल के मानसिक सामाजिक वातावरण को परिभाषित किया गया है, जिसके 70 बिन्दु है जो 6 पहलुओं पर आधारित कर अध्ययन किया गया है। जिसमें - Creative Stimulation, Cognitive Encouragement, Permissiveness, Acceptance, Rejection and Control.

6. सांख्यिकी विश्लेषण एवं प्राप्त आंकड़े:- इसमें इन विधियों का प्रयोग किया गया है - Karl-Pearson Correlation Coefficient, Multiple Regression, Z-test, T-test, Chi-square test, का आवश्यकता अनुसार प्रयोग किया गया है।

7. ग्राफ:- आवश्यकता अनुसार ऑकड़ों के विश्लेषण एवं तालिका के अनुसार बेलन, वृत्त, पाई का प्रयोग कर तथ्यों को समझाने का प्रयास किया गया है।

चतुर्थ अध्याय

प्रदत्त आकड़ों का विश्लेषण

''किशोरावस्था में आक्रामकता: कारक एवं प्रभाव'' नामक प्रस्तुत शोध के चतुर्थ अध्याय में प्रदत्त प्रश्नावली को विश्लेषण के आधार पर 5 भागों में विभाजित किया गया है यथा-

1. आम जानकारी
2. स्कूल वातावरण सम्बन्धित प्रश्नावली
3. दूरदर्शन (टी0वी0) से सम्बन्धित प्रश्नावली
4. घरेलू हिंसा
5. छात्र-छात्राओं के व्यवहार, अनुभूति तथा क्रियाओं से सम्बन्धित प्रश्नावली।

1. आम जानकारी:-

प्रश्नावली में सर्वप्रथम बच्चों (किशोर-किशोरियों) के आम सूचनाओं को एकत्र करने के लिए कुल 14 बिन्दु निर्धारित किये गये है। इन महत्वपूर्ण बिन्दुओं में छात्र छात्राओं की सामान्य जानकारी के अतिरिक्त परिवार का प्रकार (एकल अथवा संयुक्त), घर में कुल सदस्यों की संख्या के साथ उस किशोर अथवा किशोरी का आयु के आधार पर क्रम भी पृच्छा की गयी है। अभिभावकों की शिक्षा, उनका व्यवसाय तथा परिवार की मासिक आमदनी कितनी है की जानकारी भी अपेक्षित है। बच्चे के परिवार में दूरदर्शन (टी0वी0) की उपलब्धता के साथ किशोर के परिवार की वार्षिक आय किस मद से होती है की भी जानकारी प्राप्त करायी गयी है।

प्राप्त प्रश्नावली के अवलोकन के पश्चात् निम्नांकित महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्राप्त हुआ-

(क) परिवार का प्रकार:-

प्रस्तुत शोध में न्यादर्श चयन में प्रदत्त 200 किशोर किशोरियों के परिवारों के विश्लेषण से पता चलता है कि 74 प्रतिशत परिवार एकल परिवार के रूप में

जीविकोपार्जन कर रहे है जबकि 26 प्रतिशत परिवार ही संयुक्त रूप से एक साथ रहकर अपना गुजारा कर रहे है।

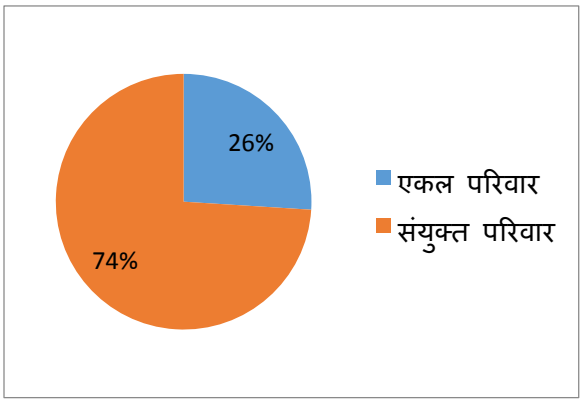

(ख) परिवार में सदस्यों की संख्या:-

अधिकांश परिवारों में कुल सदस्यों की संख्या 5 से 7 के बीच पायी गयी है। ऐसे परिवारों का प्रतिशत विश्लेषण 63 प्रतिशत है। 29 प्रतिशत परिवारों में सदस्यों की संख्या 4 है जबकि 8 प्रतिशत परिवार ऐसे भी है जिनके परिवार में सदस्यों की संख्या 4 से कम है।

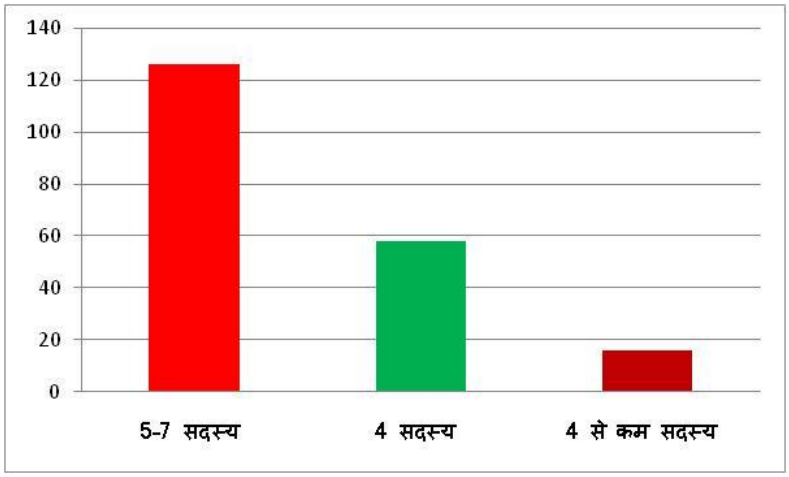

पुरुष अभिभावक

(ग) अभिभावकों की शैक्षिक स्थिति:-

गाजीपुर जनपद कृषि प्रधान जनपद होने के कारण यहां के निवासी कृषि कार्यों में व्यस्त रहते है। ऐसे उनकी शिक्षा अधिक नहीं हो पाती है। प्रदत्त प्रश्नावली में किशोर/किशोरियों के पिता को शैक्षिक स्थिति प्राथमिक से स्नातक स्तर तक की शिक्षा ग्रहण करने का पता चलता है। कुछ ही अभिभावक है जो परास्नातक की शिक्षा प्राप्त किये हुए है। वहीं पर अधिकांश महिला अभिभावक प्राथमिक स्तर की शिक्षा ग्रहण की है। अभिभावकों की शैक्षिक स्थिति निम्नांकित है-

पुरुष अभिभावक	महिला अभिभावक
प्राथमिक स्तर या उससे कम - 23%	प्राथमिक स्तर या उससे कम- 57%
पूर्व माध्यमिक स्तर - 22%	पूर्व माध्यमिक स्तर - 22%
माध्यमिक स्तर - 36%	माध्यमिक स्तर - 18%
स्नातक स्तर - 11%	स्नातक स्तर - 02%
परास्नातक स्तर - 08%	परास्नातक स्तर - 01%

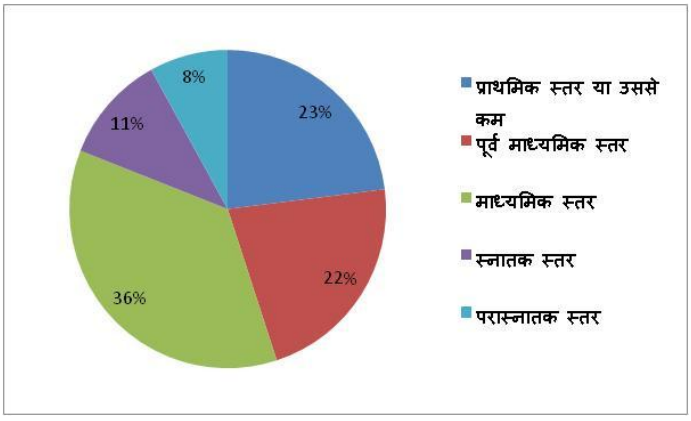

पुरुष अभिभावकों की शैक्षिक स्थिति

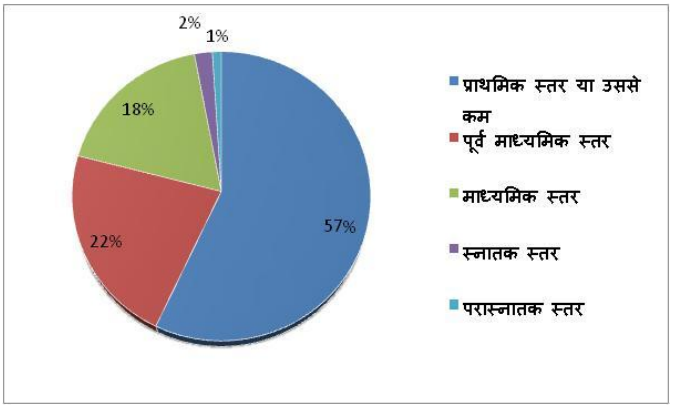

महिला अभिभावकों की शैक्षिक स्थिति

4. अभिभावकों का व्यवसाय:-

जहां तक अभिभावकों के व्यवसाय का प्रश्न है प्रश्नावली का अवलोकन यह दर्शाता है कि अधिकांश पुरूष अभिभावक खेती के कार्यो में व्यस्त रहते है। महिला अभिभावकों में अधिकांश गृहणी ही है। कतिपय पुरूष अभिभावक व्यवसाय से जुड़े है जबकि अतिन्यून मात्रा में नौकरी पेशे में संलग्न है वहीं पर महिलाएं जातिगत व्यवसाय से जुड़ी हुई है। अभिभावकों का व्यवसाय निम्नवत है-

<u>पुरुष अभिभावक</u>		<u>महिला अभिभावक</u>	
खेती	- 57%	गृहणी	- 81%
व्यवसाय	- 29%	व्यवसाय	- 16%
नौकरी	- 5%	नौकरी	- 3%
अन्य	- 9%		

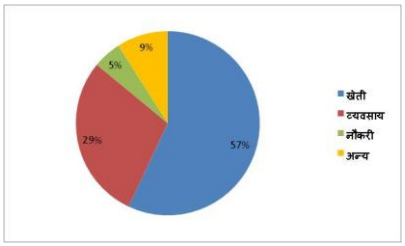

पुरुष अभिभावकों का व्यवसाय

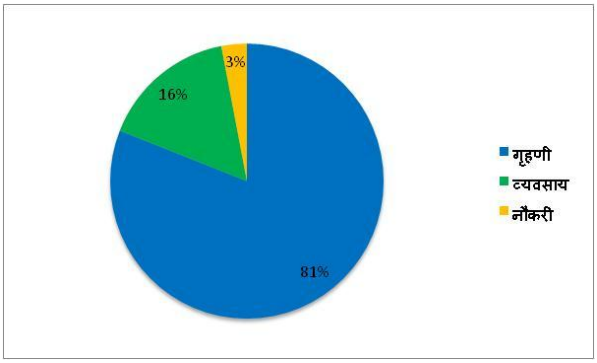

महिला अभिभावकों का व्यवसाय

5. वार्षिक आमदनी का जरिया:-

जनपद गाजीपुर के किशोर एवं किशोरियों को उनके घर से पर्याप्त मात्रा में आर्थिक समानता नहीं मिल पाती है क्योंकि इनके अभिभावकों का प्रमुख व्यवसाय खेती-बारी (कृषि कार्य) ही है। व्यवसाय यहां पर दूसरे स्थान पर आय का जरिया बना हुआ है। शहर में निवास करने वाले लोग किराया के माध्यम से अपना जीविकोपार्जन किया करते है। यहां के अभिभावकों की वार्षिक आमदनी का जरिया निम्नवत है-

नौकरी से	-	5%
व्यवसाय से	-	17%
किराया से	-	12%
खेती बारी से	-	57%
अन्य आमदनी	-	09%

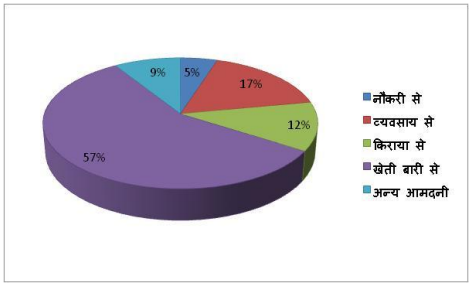

वार्षिक आमदनी का जरिया

(2) स्कूल वातावरण से सम्बन्धित प्रश्नावली:-

स्कूल वातावरण से सम्बन्धित प्रश्नावली में छात्र-छात्राओं को कुल 70 प्रश्न दिये गये थे जिसके माध्यम से किशोर वय के बालक-बालिकाओं के विचारों की जानकारी प्राप्त की गयी। विद्यालयी वातावरण किशोरवद बालक-बालिकाओं को अपनी ओर आकर्षित करता है। विद्यालय में शिक्षक-छात्र, छात्र-छात्र तथा शिक्षक, शिक्षणेत्तर कर्मचारी आदि महत्वपूर्ण सम्बन्ध स्थापित होते है, जिनसे परस्पर संवाद होता रहता है। सामान्यतया विद्यालय को वह स्थान माना जाता है जहां शिक्षकों द्वारा छात्र-छात्राओं को विभिन्न विषयों की जानकारियां प्रदान की जाती है। प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री फ्रोबेल ने विद्यालय को 'बच्चों का उद्यान' (Children's Garden) कहा है। जिस तरह से बाग में माली पेड़-पौधों की खुदाई, निराई तथा सिंचाई करके उत्तम फल-फूल देने के लिए तैयार करता है उसी भांति शिक्षक को बच्चों के सर्वांगीण (शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं नैतिक) विकास के लिए उनका पालन पोषण करना चाहिए।

एस0 बालाकृष्ण जोशी ने कहा है- विद्यालय ईंट और गोरे से बनी हुई इमारत नहीं है, जिनमें विभिन्न प्रकार के छात्र और शिक्षक होते है। विद्यालय बाजार नहीं है, जहां विभिन्न योग्यताओं वाले अनिच्छुक व्यक्तियों को ज्ञान बेचा जाता है। विद्यालय रेलवे प्लेटफार्म नही है जहां विभिन्न उद्देश्यों से विभिन्न व्यक्तियों की भीड़ इकट्ठा होती है। विद्यालय कठोर सुधारगृह नहीं है जहां किशोर अपराधियों पर कड़ी निगरानी रखी जाती है। विद्यालय आध्यात्मिक संगठन है जिसका अपना स्वयं का विशिष्ट व्यक्तित्व है। विद्यालय गतिशील सामुदायिक केन्द्र है जो चारों ओर जीवन और शक्ति का संचार करता है। विद्यालय एक आश्चर्यजनक भवन है जिसका आधार सद्भावना है- जनता की सद्भावना, माता-पिता की सद्भावना, छात्रों की सद्भावना। सारांश में, एक सुसंचालित विद्यालय- एक सुखी परिवार, एक पवित्र मंदिर, एक सामाजिक केन्द्र, लघु रूप में एक राज्य और मनमोहक वृन्दावन होता है जिसमें इन सभी बातों का मिश्रण पाया जाता है।

प्रस्तुत शोध की प्रश्नावली में प्रथम प्रश्न ''शिक्षकों के साथ विषय से सम्बन्धित विवादास्पद मुद्दों पर चर्चा करने के लिए बच्चों का अभिमत मांगा गया जिसमें 82 प्रतिशत छात्रों ने स्वीकार किया कि ऐसे मुद्दों पर बच्चों की शिक्षकों के साथ बात होती है। इसी प्रकार शिक्षक रूचि के अपने क्षेत्रों में विशेष अध्ययन के लिए प्रोत्साहित करते

है। ऐसे शिक्षक 72 प्रतिशत ही है जो सदैव बच्चों को अपना सहयोग प्रदान करते है। 28 प्रतिशत शिक्षक कभी-कभी अथवा बहुत मुश्किल से प्रोत्साहन देने का प्रयास करते है।

एक प्रश्न में पूछा गया कि क्या शिक्षक छात्र से ज्यादा उम्मीद नहीं करते? इस पर बच्चों का जो प्रत्युत्तर प्रश्नावली से प्राप्त हुआ उससे लगा कि सिर्फ 78 प्रतिशत अध्यापक ऐसे है जो अपने छात्रों से ज्यादा की उम्मीद करते है। 22 प्रतिशत शिक्षक जो बहुत मुश्किल से छात्रों की उम्मीदों पर भरोसा रखते है। शिक्षक नये विचार विकसित करने के लिए भी बच्चों को प्रोत्साहित किया करते है। इस प्रकार की गतिविधि में 64 प्रतिशत शिक्षक ऐसे है जो अक्सर छात्रों को प्रोत्साहित करते है जबकि 36 प्रतिशत शिक्षक कभी-कभी अथवा काफी मुश्किल से बच्चों को नवीन विचारों को विकसित करने के लिए प्रोत्साहित करते है।

प्रश्न कोई भी छात्र कक्षा में शिक्षक से कोई भी प्रश्न पूछ सकता है? पर बच्चों की प्रश्नावली कहती है कि 32 प्रतिशत छात्र-छात्रा ही ऐसे है जो सदैव/अक्सर कोई भी प्रश्न अपने शिक्षक से पूछ पाते है। 19 प्रतिशत छात्र कुछ विशेष परिस्थितियों में 21 प्रतिशत छात्र कभी-कभी ऐसे प्रश्नों को पूछ लिया करते है। जबकि 28 प्रतिशत छात्र-छात्राएं बहुत मुश्किल से ही ऐसे प्रश्न कक्षा में पूछते है। क्या शिक्षक बच्चों को शारीरिक दण्ड देते है? इस प्रश्न के उत्तर में 08 प्रतिशत, कभी-कभी तथा 92 प्रतिशत विचार बहुत मुश्किल से ही दण्ड दिये जाने के पक्ष में प्राप्त हुआ।

''शिक्षकों की इच्छा है कि उनके द्वारा सिखाया गया विषय अनिवार्य रूप से सीखा जाना चाहिए'' इसके उत्तर में 81 प्रतिशत सदैव, 9 प्रतिशत कभी-कभी तथा 10 प्रतिशत बहुत मुश्किल से, पर सहमति दिखाई दी। शिक्षक विभिन्न प्रकार के अनुभव प्रदान करते है- इस प्रश्न पर 83 प्रतिशत बच्चों का मानना है कि ऐसा हमेशा शिक्षक चाहते है जबकि 17 प्रतिशत बच्चों ने माना कि विभिन्न प्रकार के अनुभवों को शिक्षक कभी-कभी प्रदान करते है।

''छात्र शिक्षक से प्रोत्साहन के कारण प्रतिस्पर्धी तरीके से काम करते है'' उक्त प्रश्न के उत्तर में प्रश्नावली प्रदर्शित करती है कि 47 प्रतिशत बच्चों ने हमेशा ऐसा करने की जिज्ञासा व्यक्त की है। 23 प्रतिशत छात्र कभी-कभी अपने समूहों/मित्रों/सहपाठियों से प्रतिस्पर्धा की भावना रखते है। 30 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का मानना है कि वे अपने

स्वयं के विचारों से ही कुछ करते अथवा सीखते है उनके लिए प्रतिस्पर्धा बहुत मायने नहीं रखती है।

(1) शिक्षक छात्र परस्पर बातचीत%-

प्रस्तुत शोध में माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययन करने वाले छात्र छात्राओं के मध्य परस्पर बातचीत के लिए उनके अध्यापकों द्वारा सहयोगात्मक प्रयास का विश्लेषण करते हए यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि किशोरावस्था में बच्चे शिक्षकों के साथ अपने विचार को साझा करने से संकोच करते है। प्रश्नावली दर्शाती है कि 15 प्रतिशत बच्चे अपने विचारों को अपने गुरूजनों से सदैव साझा करते है, 20 प्रतिशत छात्राएं ऐसे है जो अक्सर महत्वपूर्ण बिन्दुओं को अध्यापकों के साथ अपनी बातचीत में प्रस्तुत करते है। 20 प्रतिशत छात्र छात्राएं बहुत मुश्किल से अपनी बात अध्यापकों के बीच साझा करते है जबकि 45 प्रतिशत छात्र-छात्राएं कभी-कभी अपनी विचारधारा को गुरूजनों के समक्ष रख पाते है। इस प्रकार यह पता चलता है कि किशोरावस्था में बच्चे अपनी बातों को अपने शिक्षकों के साथ साझा करने हेतु तत्पर रहते है।

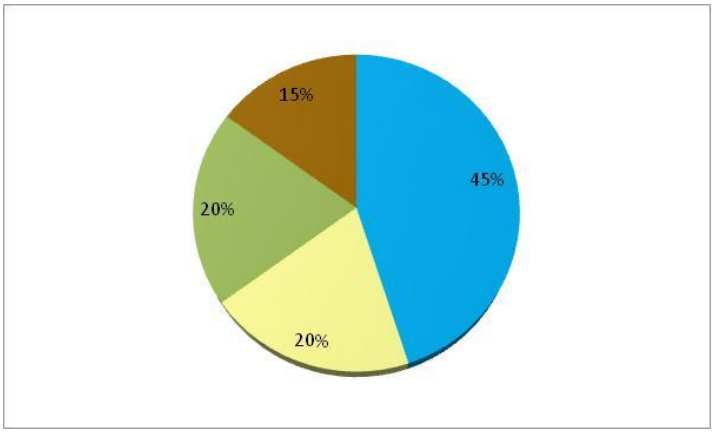

जब बच्चों से यह पूछा गया कि क्या शिक्षक अपने शिक्षण को कई तरीके से दिलचस्प बनाने की कोशिश करते है तो छात्रों की प्रश्नावली से ज्ञात हुआ कि 87 प्रतिशत हमेशा अपने शिक्षण को कई तरीके से दिलचस्प बनाने का प्रयास करते है जबकि 13 प्रतिशत शिक्षक ऐसे है जो कभी-कभी अथवा बहुत मुश्किल से ऐसा कर पाते है।

(2) शिक्षक के विचारों में विरोधाभास पर छात्र प्रतिक्रिया:-

किशोरावस्था में बच्चे विरोधाभास के मुद्दों पर काफी सजग रहते है। प्रायः देखा गया है कि किशोरावस्था में बच्चे विरोधाभासी बहसों पर अपनी प्रतिक्रिया देने से हिचकते नहीं है। स्टेनले हाल ने भी लिखा है- ''किशोरावस्था बड़े संघर्ष, तनाव तथा विरोध की अवस्था होती है।'' किशोरावस्था में संवेगात्मक अस्थिरता, किशोरापराध की प्रवृत्ति, अनुशासनहहीनता की प्रवृत्ति तथा अहम् की समस्या प्रबल होती है। प्रस्तुत शोध यह निष्कर्षित करता है कि 65 प्रतिशत बच्चे शिक्षक के विचारों में विरोधाभास होने पर अपनी प्रतिक्रियाएँ व्यक्त करते है। 35 प्रतिशत छात्र/छात्राएं कभी-कभी अथवा बहुत मुश्किल से ही अपना पक्ष रखते है।

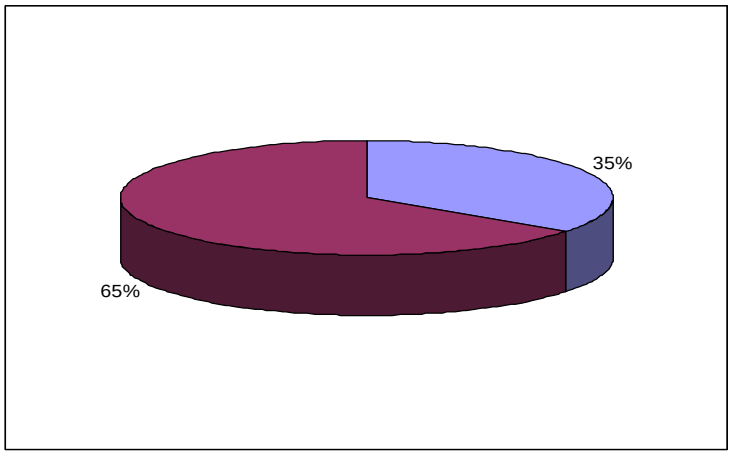

"जब कुछ छात्र अपना घर का काम पूरा नहीं करते है, तो शिक्षक ने उन्हें कक्षा में बैठने की अनुमति नहीं दी'' इस प्रश्न के उत्तर में छात्रों का मानना है कि सिर्फ 3-4 प्रतिशत शिक्षक ऐसे है जो हमेशा ऐसा करते है 96-97 प्रतिशत शिक्षक कभी-कभी अथवा बहुत मुश्किल से अपने छात्रों को गृह कार्य न किये जाने पर कक्षा से बाहर करने की स्थिति उत्पन्न करते है।

"शिक्षक द्वारा सीखी गयी सामग्री को स्थिर करने के लिए अवसर दिया जाता है'' जैसे प्रश्न पर भी छात्र-छात्राओं का अलग-अलग मत प्राप्त हुआ है। 43 प्रतिशत शिक्षक सदैव किशोर-किशोरियों को सीखी हुई सामग्री के लिए अवसर प्रदान करते हैं, 26 प्रतिशत शिक्षक कतिपय कारणोंवश कभी-कभी ऐसे अवसरों के लिए छात्रों को समय देते है जबकि

31 प्रतिशत शिक्षक बड़ी मुश्किल से ऐसा अवसर प्रदान करते है, इसी प्रकार छात्र-छात्राओं को सोचने के लिए अध्यापकों द्वारा प्रोत्साहित किये जाने कभी कुछ इसी तरह का परिणाम प्राप्त हुआ है। 47 प्रतिशत शिक्षक सदैव, 22 प्रतिशत शिक्षक कुछ समय के लिए 13 प्रतिशत शिक्षक कभी-कभी तथा 18 प्रतिशत शिक्षक बहुत मुश्किल से बच्चों को प्रोत्साहित किया करते है।

''क्या शिक्षक छात्रों पर विश्वास करते है?'' जब यह प्रश्न बच्चों के सामने रखा गया जो छात्र-छात्राओं का 73 प्रतिशत जवाब आया कि शिक्षक हमेशा हम पर विश्वास करते है, 27 प्रतिशत शिक्षकों के प्रति छात्र-छात्राओं ने बताया कि वे कभी-कभी अथवा बड़ी मुश्किल से हम पर विश्वास करते है। शिक्षक कई अलग-अलग तरीकों से मुश्किल चीजों को समझाते है, के बारे में बच्चों का रूझान प्राप्त हुआ कि 59 प्रतिशत शिक्षक हमेशा अलग-अलग नई विधाओं का प्रयोग करते हुए हमें ज्ञान प्राप्त करते है अथवा विषय वस्तु पर स्पष्ट समझ बना पाते है। 23 प्रतिशत शिक्षक कभी-कभी नवीनविधाओं का प्रयोग करते है। 18 प्रतिशत शिक्षक ऐसे है जो अपनी तय प्रक्रिया के तहत ही शिक्षण कार्य करते है बहुत मुश्किल से ही वे नये तरीकों का इस्तेमाल कर पाते है।

प्रश्नावली में जब यह पूछा गया कि ''क्या छात्र शिक्षकों की अनुमति से पहले कुछ भी कर सकते है'' तो छात्रों का स्पष्ट उत्तर था कि नहीं, बगैर शिक्षक की अनुमति से छात्र कुछ भी कर पाने की स्थिति में नहीं होते है। ऐसे छात्रों की संख्या 93 प्रतिशत है जबकि 7 प्रतिशत छात्र-छात्राएं कभी-कभी या कुछ समय के लिए बिना शिक्षक की अनुमति लिए कतिपय कार्यो को सम्पादित कर लेते है। शिक्षक छात्रों के दैनिक व्यवहार पर निगाह रखते है'' पर छात्रों का प्रत्युत्तर जो प्राप्त वह निम्नवत रहा-

हमेशा	-	64%
कुछ समय	-	12%
बहुत मुश्किल से	-	17%
कभी-कभी	-	07%

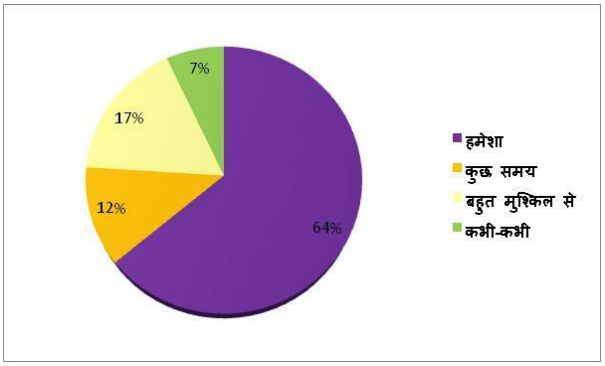

छात्र-छात्राओं की प्रश्नावली बताती है कि 64 प्रतिशत शिक्षक हमेशा हमारे द्वारा किये जाने वाले दैनिक व्यवहार का निरीक्षण करते है अथवा निगाह रखते है। 12 प्रतिशत शिक्षक हमारे दैनिक व्यवहारों पर कुछ समय के लिए ध्यान रख पाते है। 17 प्रतिशत शिक्षक ऐसे भी है जो बहुत मुश्किल से ऐसा कर पाते है वही 07 प्रतिशत शिक्षक कभी-कभार हमारे दैनिक व्यवहारों के प्रति सजग रहते है।

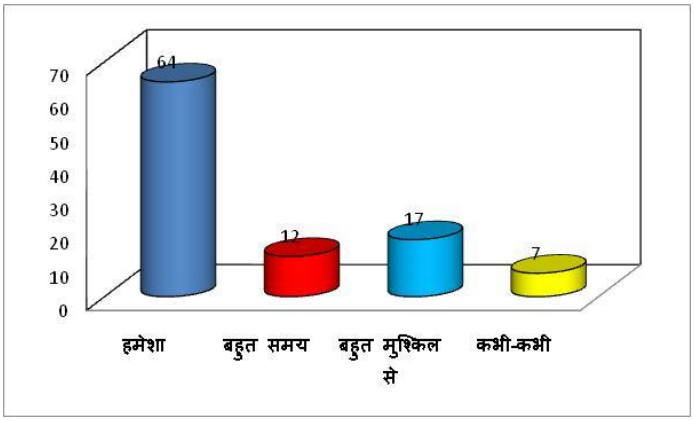

छात्र-छात्राओं के दैनिक व्यवहारों का निरीक्षण

एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह कि ''किसी संस्थान का नियम बनाते हुए क्या छात्रों से भी विचार विमर्श किया जाना चाहिए'' पर बच्चों की जो प्रतिक्रियाएं प्राप्त हुई है उससे यह स्पष्ट होता है कि 76 प्रतिशत बच्चों का मानना है कि हाँ किसी भी संस्थान में यदि कोई नियम पारित किया जाता है तो उसमें हम छात्रों की सहभागिता होनी चाहिए अर्थात् छात्र-छात्राओं से भी विचार-विमर्श किया जाना चाहिए। 24 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का मानना है कि कभी-कभी हम लोगों की राय को भी ऐसे नियमों में स्थान दिया जाना चाहिए।

(3) अध्ययन बिन्दु के अतिरिक्त बिन्दुओं पर विचार-विमर्श

किशोरावस्था में छात्र-छात्राओं के बीच विभिन्न मुद्दों पर भी चर्चा-परिचर्चा होती रहती है। सामाजिक ढांचे में कतिपय महत्वपूर्ण परिस्थितियां उनके दैनिक जीवन में उत्पन्न होती है जहां किशोरों को अपनी अभिव्यक्ति करना अपरिहार्य हो जाता है। बच्चे सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक गतिविधियों के प्रति अपने को समावेशित करते हुए अपनी भावनाओं को व्यक्त करने का प्रयत्न करते हैं। विभिन्न प्रकार की सामाजिक अवधारणाओं, रूढ़ियों एवं किवदन्तियों का बच्चों के बीच उत्पन्न हो जाना स्वाभाविक है, ऐसे में सभी छात्र-छात्राएं उक्त अवसर पर अपनी भावनाएं व्यक्त करने का प्रयत्न करते है। बच्चों/किशोरों पर किया गया शोध यह प्रदर्शित करता है कि 67 प्रतिशत बच्चे अध्ययन बिन्दु के अतिरिक्त विषय पर अपना विचार अक्सर प्रस्तुत करते है, 7 प्रतिशत बच्चे बहुत मुश्किल से इन बिन्दुओं पर कुछ कह पाने का प्रयास करते है जबकि 16 प्रतिशत किशोर एवं किशोरियां ऐसी है जो कभी-कभी अपनी भावनाओं को व्यक्त करने की कोशिश करते है।

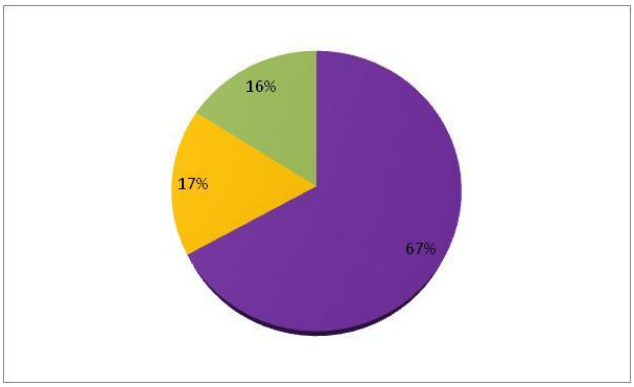

अध्ययन विन्दु के अतिरिक्त विन्दुओं पर छात्रों के विचार-विमर्श का प्रदर्शन चार्ट

''क्या स्कूल में पढ़ाई का अच्छा माहौल है'' पर बच्चों की प्रश्नावली बताती है कि 69 प्रतिशत छात्र यह मानते है कि उनके स्कूलों में पढ़ाई का अच्छा माहौल हमेशा बना रहता है। 13 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का मानना है कि उनके विद्यालय में कभी-कभी अच्छा माहौल बन पाता है। 18 प्रतिशत प्रत्युत्तर यह बताता है कि उनके विद्यालयों में बड़ी मुश्किल से पढ़ाई का अच्छा माहौल बन पाता है।

सबसे आकर्षक और आवश्यक प्रश्न कि ''क्या शिक्षक छात्रों के शैक्षिक विकास में रूचि लेते है'', इस प्रश्न के उत्तर में प्रश्नावली द्वारा विदित होता है कि 75 प्रतिशत शिक्षक

छात्रों के शैक्षिक विकास के प्रति रूचि लेते है। ऐसे शिक्षक हमेशा बच्चों के हित के बारे में सोचते एवं चिन्ता करते है। 16 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का कहना है कि उनके शिक्षक कभी-कभी शैक्षिक उपलब्धियों के प्रति चिन्तित दिखाई देते है जबकि 9 प्रतिशत छात्र-छात्राओं के नअुसार शिक्षक बहुत मुश्किल से ही उनके शैक्षिक विकास के प्रति ध्यान दे पाते है।

''शिक्षक पढ़ाते समय जीवनचर्या से सम्बन्धित विभिन्न उदाहरण भी देते है'' ऐसा प्रायः देखने को मिलता है कि कक्षा शिक्षण के दौरान शिक्षक बच्चों को जीवनचर्या के बारे में यथोचित सुझाव एवं सलाह दिया करते है। बच्चों की प्रश्नावली भी यह स्वीकार करती है कि 87 प्रतिशत शिक्षक कक्षाशिक्षण के दौरान हम सबको जीवनचर्या से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के उदाहरण देकर ज्ञानवर्धन किया करते है। 13 प्रतिशत शिक्षक ऐसे भी है जो सीधे कक्षा में सम्बन्धित विषय पर ही ध्यान केन्द्रित रखते है।

''हमारे शिक्षक ऐसा सोचते है कि छात्रों को स्व-अनुभव से सीखना चाहिए।'' के प्रत्युत्तर में 47 प्रतिशत शिक्षकों द्वारा ऐसा देखने को मिलता है कि वे चाहते है कि बच्चों स्व अनुभव के द्वारा कुछ सीखें। ऐसे शिक्षक हमेशा बच्चों को स्व-अनुभव से सीखने हेतु प्रेरित भी करते रहते है। 24 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का उत्तर यह बताता है कि उनके शिक्षक कभी-कभी ऐसा सोचते है कि बच्चे स्व-अनुभव द्वारा सीखें। वहीं पर 29 प्रतिशत बच्चों ने यह भी प्रदर्शित किया कि कुछ ऐसे भी शिक्षक है जो यह मानते है कि बच्चे को पुस्तकीय ज्ञान एवं लोगों के अनुकरणीय प्रयासों से सीखना चाहिए। वे बहुत मुतिश्कल से यह मानने को तैयार होते है कि बच्चों को स्व-अनुभव से सीखना चाहिए।

(4) शिक्षक-छात्र सम्बन्धः-

प्रायः देखा गया है कि शिक्षक छात्र सम्बन्ध काफी मधुर होता है। प्रत्येक छात्र/छात्रा अपने गुरूजन के प्रति काफी संवेदनशील रहते है वे अपने गुरूओं का सर्वोत्तम सम्मान करते है शायद इसलिए भी कि कबीर जी ने कहा है-

गुरू गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागौ पाय।

बलिहारी गुरू आपनो, गोविन्द दियो बताय।।

प्रत्येक गुरू भी अपने शिष्य को अधिकाधिक ज्ञान भण्डार प्रदान करना चाहता है इसके लिए वह छात्रों से पुत्रवत, मित्रवत तथा कभी-कभी न चाहते हुए भी बच्चों को सीखने-सिखाने के लिए कठोर भी बन जाता है।

गुरू कुम्हार शिष्य कुम्भ है, गढ़ि गढ़ि काढ़े खोट।

अन्तरहाथ सह दे बाहर मारे चोट। ।

इन परिस्थितियों में शिक्षक छात्र सम्बन्ध मधुर होना बहुत ही आवश्यक होता है। प्रस्तुत शोध यह प्रदर्शित करता है कि 79 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का अपने अध्यापक से सदैव ही मधुर सम्बन्ध रहता है। 21 प्रतिशत छात्र छात्राएं कभी-कभी अपने शिक्षक के प्रति मधुरता की स्थिति से दूर हो जाते है।

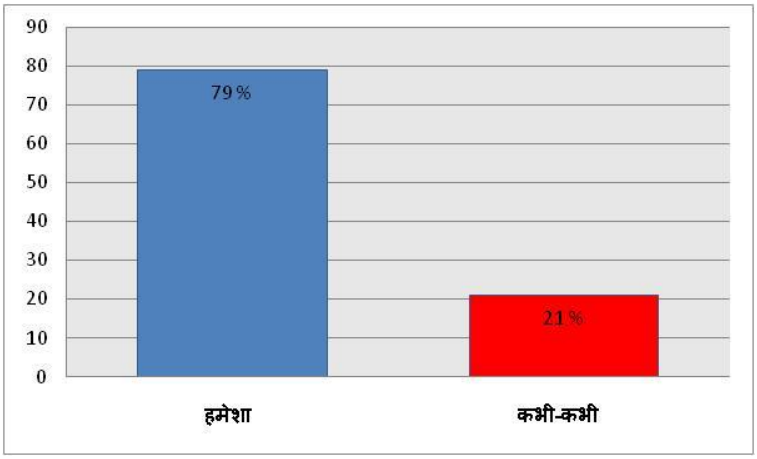

''क्या विद्यालय परिवार के समस्त सदस्य संस्था के नियम-नीतियों और मानदण्डों का अनुपालन करते है?'' प्रस्तुत प्रश्न के प्रति 62 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का मानना है कि विद्यालय परिवार के सदस्य संस्था के नियमों का अनुपालन हमेशा करते है। 29 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का मानना है कि कुछ विद्यालयों के सदस्य संस्था के नियमों-नीतियों और मानदण्डों के प्रति अपने दायित्वों का निर्वहन करते है। 09 प्रतिशत छात्र-छात्राओं ने स्वीकार किया कि उनके विद्यालय परिवार के सदस्य बहुत मुश्किल से संस्था के नियम नीतियों और मानदण्डों का अनुपालन करते है।

(5) छात्रों द्वारा अन्तर्विरोध का प्रदर्शन:-

किशोरावस्था एक ऐसी अवस्था है जाहं पर एक किशोर अपने जीवन के ऐसे पड़ाव पर होता है जहां उसे संवेदनाओं के जद में आना पड़ता है। कभी-कभी सामाजिक परिस्थितियां किशोर भावनाओं को उद्वेलित कर जाती हैं, जो उनके भावना के विपरीत होती है और उनके अन्तरात्मा को कष्टकारक स्थिति उत्पन्न करती है। प्रयुक्त प्रश्नावली से ज्ञात होता है कि 57 प्रतिशत किशोर एवं किशोरियां अक्सर अन्तर्विरोध का प्रदर्शन करते है। 22 प्रतिशत छात्र-छात्राएं कभी-कभी कतिपय विचारों से असहमत होने पर अपना विरोध प्रकट करते है वहीं 21 प्रतिशत छात्र-छात्राएं बहुत मुश्किल से अपना अन्तर्विरोध प्रस्तुत कर पाते है अन्यथा की स्थिति में वे अपनी अभिव्यक्ति प्रदर्शित नहीं कर पाते है।

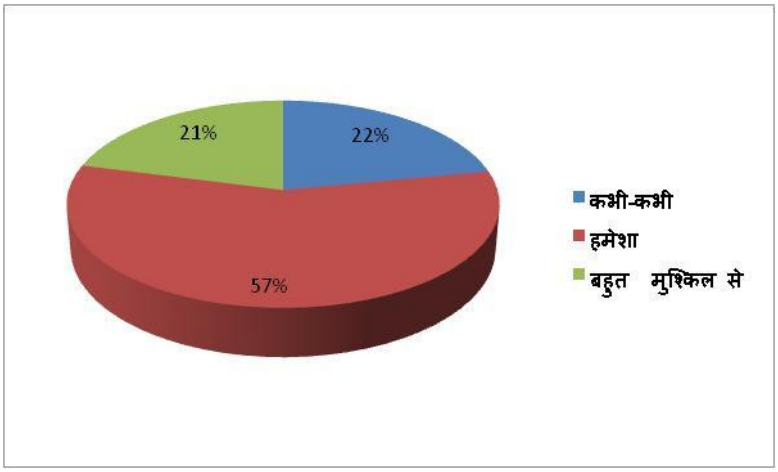

छात्र-छात्राओं द्वारा अन्तर्विरोध का प्रदर्शन चार्ट

''क्या शिक्षकों से हमें कठिन परिश्रम की प्रेरणा मिलती है?'' इस प्रश्न के विश्लेषण पर पता चलता है कि 81 प्रतिशत छात्र-छात्राएं मानते है कि उन्हें शिक्षकों से कठिन परिश्रम की प्रेरणा मिलती है जबकि 19 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का मानना है कि उन्हें कभी-कभी ऐसा लगता है कि वे अपने शिक्षकों से कठिन परिश्रम हेतु प्रेरणा प्राप्त करते है। इसी प्रकार ''शिक्षक छात्रों के साथ विभिन्न क्रिया-कलापों में साथ रहते है'' जैसे विचारणीय प्रश्न पर 76 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का मानना है कि शिक्षक विभिन्न प्रकार की गतिविधियों में उनका साथ देते है। अवशेष 24 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का मानना है कि उनके शिक्षक इस प्रकार की गतिविधियों में कभी-कभी अथवा बहुत मुश्किल से ही समय दे पाते है।

(6) शिक्षक द्वारा छात्रों के गुणात्मक विकास का परीक्षण:-

विद्यालय में छात्र-छात्राओं का सर्वांगीण विकास करने का प्रयास सदैव शिक्षक-शिक्षिकाओं के द्वारा किया जाता है। उक्त के क्रम में बच्चों के गुणात्मक विकास को एक पैरोमीटर के रूप में प्रश्नावली में चिन्हांकित किया गया जिस पर छात्र-छात्राओं की प्रतिक्रियाएँ प्राप्त की गयी। बच्चों में गुणात्मक सुधार लाने हेतु शिक्षकों द्वारा उन्हें प्रेरणा प्रदान किया जाता है। प्रेरणा ही वह अमोध अस्त्र है जिसकी सहायता से बच्चे अपना सर्वाधिक विकास करने में सफलता प्राप्त कर सकते है। प्रस्तुत प्रश्नावली का अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि 73 प्रतिशत शिक्षक बच्चों के गुणात्मक विकास के प्रति सक्रिय रूप से हमेशा प्रेरित करने का प्रयास करते रहते है। 8 प्रतिशत छात्र/छात्राओं का मानना है कि उनके शिक्षक कुछ समय के लिए उनको प्रेरित करते जबकि 11 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का कहना है कि बहुत मुश्किल से शिक्षक हमारे गुणात्मक विकास के प्रति प्रेरित करते है और परीक्षण करते है। 08 प्रतिशत शिक्षक ऐसे भी है जो कभी-कभी बच्चों के गुणात्मक विकास का परीक्षण कर पाते है।

क्या हमारे शिक्षक हमें कार्य करने का मौका प्रदान करते है? प्रश्नावली में इस प्रश्न के उत्तर में बच्चों का जो रूझान प्राप्त हुआ वह निम्नांकित है-

हमेशा - 42%

अक्सर - 41%

कभी-कभी - 08%

बहुत मुश्किल से-09%

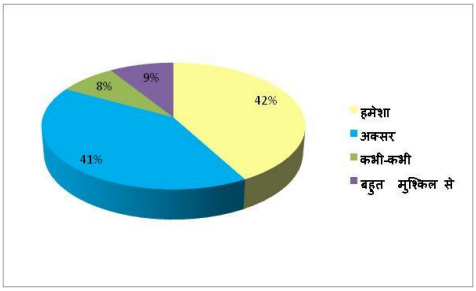

इसी प्रकार ''अध्यापन प्रदान करने वाले शिक्षक, छात्रों की रूचि का कोई ध्यान नहीं देते है'' पर बच्चों की प्रश्नावली प्रदर्शित करती है कि 21 प्रतिशत शिक्षक ऐसे है जो हमेशा छात्रों की रूचि का कोई ध्यान नहीं देते है। 23 प्रतिशत शिक्षक अक्सर बच्चों की रूचियों का अध्यापन के दौरान ध्यान नहीं देते है। 27 प्रतिशत शिक्षक कभी-कभी अपने बच्चों की रूचियों से अनिच्छा जाहिर करते है। 29 प्रतिशत शिक्षक ऐसे है जो बहुत

मुश्किल से अपने अध्यापन प्रक्रिया के दौरान शिक्षार्थियों की रूचियों का कोई ध्यान नहीं देते है।

(7) छात्रों में अनुशासन:-

वर्तमान परिवेश में विद्यालयों में अनुशासनात्मक गतिविधियों में ह्रास दिखाई देने लगा है। छात्र-छात्राओं के जीवन में ज्ञान के विकास के साथ-साथ उनको अनुशासित जीवन जीने की कला भी आनी बहुत जरूरी है। किशोर किशोरियों को एक सुव्यवस्थित समाज का सभ्य नागरिक बनने के लिए अनुशासित होना नितान्त आवश्यक है। टूटते हुए सामाजिक बन्धन, सांस्कारिक मूल्यों के ह्रास और सामाजिक स्वरूप के उत्तरोत्तर नैतिक पतन के कारण आजकल की भावी पीढ़ी गैर अनुशासित होती जा रही है। छात्रों से यह पूछे जाने पर कि क्या वे अपनी कक्षा में पूर्णतः अनुशासित रहते है तो सिर्फ 76 प्रतिशत छात्रों का मानना है कि वे सदैव/अक्सर कक्षा में अनुशासित रहते है। 09 प्रतिशत छात्र/छात्राएं कभी-कभी अनुशासित रहते है, 07 प्रतिशत छात्र कुछ समय तक ही अनुशासित रह पाते है जबकि 08 प्रतिशत छात्र/छात्राओं का मानना है कि वे बहुत मुश्किल से ही अनुशासित रह पाते है।

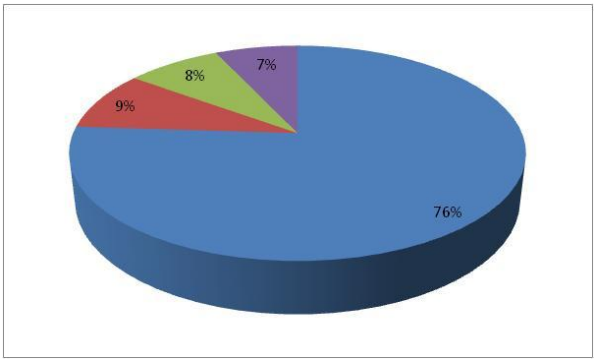

इस महत्वपूर्ण प्रश्न ''क्या शिक्षक छात्रों के स्व-अध्ययन में कोई हस्तक्षेप नहीं करते है?'' बच्चों की प्रश्नावली कुछ विशेष प्रक्रिया प्रदर्शित करती है। 43 प्रतिशत शिक्षक ऐसे है जिस पर शोध यह प्रदर्शित करता है कि जो बच्चों के स्व अधिगम अथवा स्व अध्ययन में कोई हस्तक्षेप नहीं करते है। 23 प्रतिशत शिक्षक छात्रों के स्व अध्ययन में

कभी-कभी हस्तक्षेप करने की कोशिश करते है। 34 प्रतिशत अध्यापक छात्रों के स्व-अध्ययन की प्रक्रिया में हस्तक्षेप करने की कोशिश बड़ी मुश्किल से करते है।

''शिक्षक छात्रों को उनकी क्षमता के अनुसार कार्य करने को प्रेरित करते है'' इस प्रश्न के उत्तर पर किशोर किशोरियों का जो रूझान प्राप्त हुआ है वह यह कि 89 प्रतिशत शिक्षक छात्रों को उनकी क्षमता के अनुसार कार्य करने को हमेशा प्रेरित करते रहते है। 3 प्रतिशत छात्रों का विचार है कि उनके शिक्षक कभी-कभी छात्रों की क्षमता के अनुसार कार्य करने को प्रेरित करते है। जबकि 8 प्रतिशत शिक्षक ऐसे भी है जो बहुत मुश्किल से बच्चों को उनकी क्षमता के अनुसार कार्य करने को प्रेरित करते है।

छात्रों को दैनिक जीवन में विभिन्न प्रकार की समस्याओं से भी दो चार होना पड़ता है। ऐसे में ''जब कभी छात्र-छात्राएं बीमार पड़ जाते है तो क्या उनके शिक्षक चिन्तित हो जाते है? किशोरावस्था में बच्चों को काफी जिम्मेदारियों के साथ अपनी जीवन शैली पूर्ण करनी होती है। ऐसे में विभिन्न प्रकार के क्रिया-कलापों के दौरान उनका अस्वस्थ होना लाजिमी है। प्रश्नावली से ज्ञात होता है कि 46 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का मानना है कि उनके शिक्षक इन परिस्थितियों में हमेशा चिन्तित होते है। 33 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का मानना है कि उनके शिक्षक कभी-कभी अथवा कुछ समय के लिए चिन्ता करते है, जबकि 21 प्रतिशत छात्र-छात्राएं यह मानते है कि उनके बीमारी की दशा में शिक्षक बहुत मुश्किल से ही चिन्ताग्रस्त हो पाते है।

''छात्र-छात्राओं के विचार-विमर्श से सम्बन्धित प्रश्नों'' को भी शिक्षक अपनी गतिविधियों में महत्वपूर्ण स्थान देते है ऐसा प्रस्तुत प्रश्नावली से प्रदर्शित होता है। प्रश्नावली से प्राप्त प्रश्नों के उत्तर दर्शाते है कि 53 प्रतिशत शिक्षक हमेशा छात्र-छात्राओं के विचार-विमर्श से सम्बन्धित प्रश्न पूछते है, 36 प्रतिशत शिक्षक कभी-कभी इस प्रकार के पूछने की कोशिश करते है वही 11 प्रतिशत शिक्षक बहुत मुश्किल से इस प्रकार के प्रश्नों को पूछने का प्रयास किया करते है। ''क्या विद्यार्थी शिक्षक से अनुमति लिए बिना किसी भी प्रश्न का उत्तर दे सकते है,'' उक्त प्रश्न के सम्बन्ध में प्रदत्त प्रश्नावली प्रदर्शित करती है कि 47 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का मानना है कि उनके शिक्षक हमेशा यह चाते है कि बच्चे बिना अनुमति के किसी भी प्रश्न का उत्तर दे सकते है। 38 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का मत है कि बहुत मुश्किल से ही उनके शिक्षक इस बात पर राजी होते है कि उनके छात्र बिना अनुमति के किसी भी प्रश्न का उत्तर दे सके। प्रश्नावली द्वारा यह भी विदित

होता है कि 25 प्रतिशत ऐसे भी छात्र-छात्राएं है जो यह मानते है कि उनके शिक्षक कभी-कभी अथवा कुछ समय के लिए इस बात पर तैयार हो जाते है कि उनके छात्र बिना किसी अनुमति के किसी भी प्रश्न का उत्तर दे सकते है।

एक अत्यन्त ही महत्वपूर्ण प्रश्न ''शिक्षक छात्रों के भविष्य को लेकर चिन्तित नहीं है?'' की बात आयी तो छात्रों का जो विश्लेषण प्राप्त हुआ वह यह प्रदर्शित करता है कि 69 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का मत ऐसे शिक्षकों की ओर है जो हमेशा छात्रों के भविष्य के प्रति चिन्तित रहते है। 12 प्रतिशत छात्र-छात्राएं मानते है कि उनके शिक्षक बहुत मुश्किल से ही हमारे प्रति कभी चिन्तित होते है जबकि 09 प्रतिशत छात्र-छात्राओं के विचार से उनके शिक्षक कभी-कभार ही छात्रों के भविष्य के प्रति चिन्तित रहते है।

(8) शिक्षकों के दृष्टिकोण के विपरीत छात्रों का व्यवहार:-

कक्षा शिक्षण अथवा अन्य किसी भी अवसर पर शिक्षक छात्रों के व्यवहारों के प्रति काफी सजग रहा करते है। प्रत्येक शिक्षक अपने छात्रों से सर्वथा कुशल व्यवहार की ही अपेक्षा करता है। छात्र-छात्राओं का भी सदैव प्रयास रहता है कि वे अपने शिक्षक को किसी भी प्रकार से अमर्यादित व्यवहार की चोट न पहुचाएं। प्रश्नावली में एक प्रश्न यह ''छात्र, शिक्षकों के दृष्टिकोण के विपरीत कुछ भी नहीं करते है?'' उक्त प्रश्न के उत्तर में प्रश्नावली द्वारा इंगित होता है कि 68 प्रतिशत छात्र-छात्राएं ऐसे है जो हमेशा इसके प्रति सजग रहते है कि वे अपने शिक्षक के दृष्टिकोण के विपरीत कुछ भी नहीं करते है। 22 प्रतिशत छात्र-छात्राएं ऐसे भी है जो कभी-कभी शिक्षकों के दृष्टिकोण के विपरीत व्यवहार प्रदर्शित कर बैठते है। 10 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का यह स्वीकारना है कि वे बहुत मुश्किल से ही अपने शिक्षकों के दृष्टिकोण के विपरीत कुछ कह पाने की स्थिति में होते है।

कक्षा शिक्षण के दौरान शिक्षक हमेशा नवीन ज्ञान प्रदान करने हेतु विभिन्न प्रकार की गतिविधियां कराते है तथा इन गतिविधियों के लिए उपयुक्त परिस्थितियों का निर्माण भी करने का प्रयत्न करते है। प्रश्न के रूप में जब यह पूछा गया कि ''शिक्षक नये विचार पेश करने के लिए उपयुक्त वातावरण बनाते है?'' तो छात्र-छात्राओं का जो रूझान प्राप्त हुआ, उसके अनुसार 38 प्रतिशत शिक्षक नये विचार पेश करने के हमेशा उपयुक्त वातावरण बनाते है। 21 प्रतिशत शिक्षक बहुत मुश्किल से ऐसा करते है कि नये विचारों

के लिए वातावरण बनाया जाय वे प्रायः बिना उपयुक्त वातावरण के ही अपने विचारों को साझा किया करते है, इसी प्रकार 41 प्रतिशत शिक्षक ऐसे है जो कभी-कभी अथवा कुछ समय के लिए उपयुक्त वातावरण बनाने का प्रयास करने के पश्चात् ही अपने नवीन विचारों को साझा करते है।

छात्र-छात्राओं द्वारा किये गये प्रदर्शन के प्रति उनके अभिभावक, संगी-साथी, परिवार के सदस्यों के अतिरिक्त उनके गुरूजन अति उत्साही रहते है क्योंकि छात्रों के बेहतर प्रदर्शन से कही-कही उनके भी मान-सम्मान, हर्ष-खुशी आदि की भावनाएं जुड़ी होती है। छात्रों से प्रश्नावली के माध्यम से यह पूछे जाने पर कि क्या ''शिक्षक उच्च अंक प्राप्त करने वाले छात्रों की प्रशंसा करते है?'' तो प्रश्नावली के विश्लेषण से पता चलता है कि 77 प्रतिशत छात्र छात्राएं इस बात से सहमत है कि उनके गुरूजन हमेशा उच्च अंक प्राप्त करने वाले छात्र-छात्राओं की प्रशंसा करते रहते है और उनका अनुकरण किये जाने की भी संस्तुति करते है। 18 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का मानना है कि उनके शिक्षक कभी-कभी ऐसे छात्र-छात्राओं की प्रशंसा किया करते है। 05 प्रतिशत छात्र-छात्राएं ऐसे भी है जिनके गुरूजन बहुत मुश्किल से ही उच्च अंक प्राप्त करने वाले छात्र-छात्राओं की प्रशंसा करते है हालांकि इन छात्र-छात्राओं का मानना है कि उनके गुरूजन हमेशा बच्चों को कक्षा में अच्छा प्रदर्शन करने के लिए प्रेरित जरूर करते रहते है।

''क्या शिक्षक छात्रों की कठिनाईयों को दूर करने के लिए तैयार रहते है?'' इस प्रश्न के उत्तर में 61 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का रूझान यह प्राप्त हुआ कि उनके शिक्षक हमेशा अथवा अक्सर उनकी कठिनाईयों को दूर करने के लिए तैयार रहते है। जहां तक शिक्षकों के कर्तव्य की बात की जाती है तो प्रत्येक शिक्षक प्रायः बच्चों की हर कठिनाईयों को दूर करने के लिए भरसक प्रयत्न करता है। 29 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का मानना है कि उनके शिक्षक कभी-कभी अथवा कुछ समय के लिए उनकी कठिनाईयों को दूर करने के लिए तैयार रहा करते है। वहीं पर 10 प्रतिशत छात्र-छात्राओं के विचार से उनके शिक्षक बहुत मुश्किल से ही उनकी कठिनाईयों को दूर करने के लिए तैयार रहते है।

माध्यमिक स्तर की कक्षाओं में अध्यापक वर्ग कक्षा शिक्षण के दौरान विभिन्न प्रकार की नवाचारी गतिविधियों यथा- कहानी, रोल प्ले, रोचक खेल, उदाहरणों, प्रयोग प्रदर्शन आदि के माध्यम से बच्चों के ज्ञान का विस्तार किया करते है। ऐसे में बच्चों से यह पूछे जाने पर कि ''क्या शिक्षक कहानियों के उदाहरणों, खेल, प्रयोग आदि के बारे में

उनकी राय पूछते है?'' पर बच्चों की प्रश्नावली से प्राप्त उत्तरों का रूझान निम्नवत प्राप्त हुआ-

सदैव (हमेशा) - 43%

अक्सर - 21%

कुछ समय - 08%

बहुत मुश्किल से- 11%

कभी-कभी - 17%

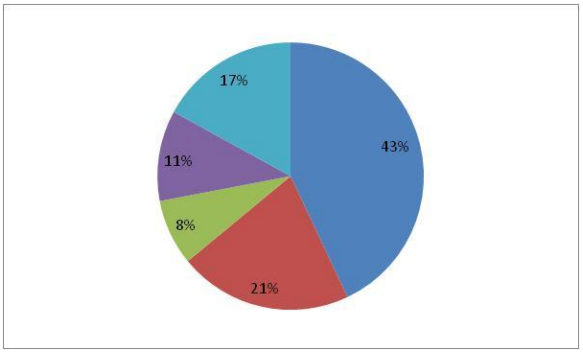

शिक्षक छात्रों के मध्य एक मधुर सम्बन्ध होना बहुत ही आवश्यक होता है क्योंकि एक शिक्षक छात्र के लिए केवल शिक्षक ही नहीं होता वरन् एक मार्गदर्शक, एक संरक्षक एक सहयोग, एक मित्र, एक सुगमकर्ता और न जाने किस-किस रूप में अपनी प्रतिक्रियाएं उपलब्ध कराता रहता है। इस प्रकार शिक्षक छात्र-छात्राओं के अभिभावक के रूप में भी अपनी भूमिका का निर्वहन करता रहता है। उक्त के दृष्टिगत छात्रों की प्रश्नावली में एक प्रश्न- ''हम सब कुछ के बारे में शिक्षकों से बात करते है'' पर उनकी प्रतिक्रिया शोधार्थी द्वारा जानने की कोशिश की गयी तो छात्र-छात्राओं का रूझान काफी रूचिकर प्राप्त हुआ।

उपरोक्त प्रश्न के उत्तर में छात्रों का विश्लेषण यह बताता है कि 32 प्रतिशत छात्र-छात्राएं ही ऐसे है जो अपने शिक्षक-शिक्षिकाओं से सब कुछ के बारे में हमेशा बात करते है। 28 प्रतिशत छात्र-छात्राएं कभी-कभी अपनी अभिव्यक्तियों/सभी बातों को अपने शिक्षकों के समक्ष रख पाते है। 21 प्रतिशत विद्यार्थी कुछ समयों के लिए अपनी सभी बातों/समस्याओं/विचारों/सब कुछ को अपने शिक्षकों/शिक्षिकाओं से कह पाते है जबकि 19 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का मानना है कि वे बहुत मुश्किल से ही अपनी बातों को अपने गुरूजनों से साझा करते है।

''जब शिक्षक छात्रों के सवालों का जवाब नहीं देना चाहते है तो वे छात्रों की राय पर ध्यान नहीं देते है।'' उक्त प्रश्न बच्चों के लिए जब प्रश्नावली में प्रस्तुत हुआ तो बच्चों

का रूझान यह प्रदर्शित कर रहा है कि मात्र 29 प्रतिशत शिक्षक ऐसे है जो हमारे सवालों का जवाब नहीं देने की इच्छा होने पर हमारी राय पर ध्यान नहीं देते है जो हमेशा ऐसा किया करते है। 37 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का मानना है कि हमारे शिक्षक कभी-कभी ऐसा करते है कि जब वे हमारे सवालों का जवाब नहीं देना चाहते है तो हमारी राय पर ध्यान नहीं देते है। अवशेष 34 प्रतिशत विद्यार्थियों का मानना है कि उनके शिक्षक बहुत मुश्किल से ही ऐसा करते है। एक अन्य प्रश्न ''क्या छात्र सही समय पर कक्षा में आते है?'' पर छात्र-छात्राओं का रूझान शत-प्रतिशत सुनिश्चित करता है कि वे हमेशा सही समय से कक्षा में आते है। कुछ छात्र-छात्राएं यदा-कदा कतिपय घरेलू/पारिवारिक/व्यक्तिगत समस्याओं के चलते कक्षा में चन्द लम्हों के विलम्ब हो जाते है परन्तु ऐसी स्थिति लगभग नगण्य ही होती है।

कक्षा शिक्षण करते समय अधिकांश शिक्षकों का प्रयास करता है कि वे अधिगम प्रक्रियाओं के दौरान प्रश्नों, परिभाषाओं, सूक्तियों आदि को छात्रों द्वारा स्वयं लिखवाया जाय। कुछ अध्यापक ऐसा करने के लिए बच्चों को निरंतर प्रेरित भी किया करते है। परन्तु जब कठिन विषय वस्तु का सामना छात्र-छात्राओं को करना पड़ता है तो ऐसे में शिक्षकों की मजबूरी बन जाती है कि वे अपने अधिगमकर्ताओं को विषय वस्तु लिखवाने में उनकी सहायता करें। उक्त समस्याओं की परिस्थितियों से सम्बन्धित प्रश्नावली में एक प्रश्न यह भी रखा गया कि ''क्या शिक्षक छात्रों को उनके जवाब स्वयं लिखने के लिए प्रोत्साहित करते है?'' तो छात्रों का निम्नवत रूझान प्राप्त हुआ-

सदैव (हमेशा) - 40%

अक्सर - 29%

कुछ समय - 11%

बहुत मुश्किल से- 8%

कभी कभी - 12%

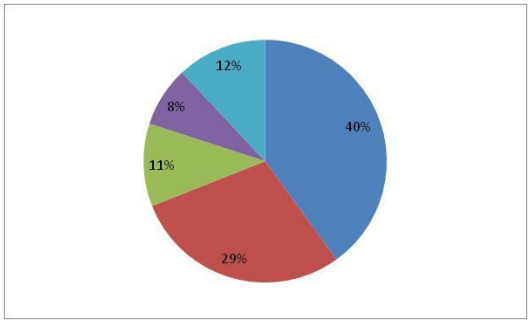

छात्रों से प्रश्नावली में एक उनकी रूचि का प्रश्न पूछा गया कि क्या वे ''अच्छा अंक पाने का प्रयास करते है?'' जाहिर सी बात है कोई भी छात्र ऐसा कब चाहेगा कि उसका

परीक्षाफल कही से भी निम्न स्तर का न होने पाये। उनके प्रश्नावली से प्राप्त उत्तर भी यही दर्शाते है, 97 प्रतिशत छात्र-छात्राओं ने स्वीकार कि उनका अंक अच्छा आये और वह कक्षा में अपने को सर्वश्रेष्ठ साबित करें।

(9) छात्रों द्वारा योजना तैयार किये जाने में शिक्षकों की मदद**:**

विद्यालयों में विभिन्न प्रकार की गतिविधियों/त्योहारों/कार्यक्रमों का संचालन किया जाता रहता है। ऐसे कार्यक्रम साप्ताहिक, दैनिक, पाक्षिक एवं कभी-कभी वार्षिक रूप से सम्पादित किये जाते है। उपरोक्त कार्यक्रमों में छात्रों द्वारा अनेकों प्रकार की योजनाओं का क्रियान्वयन किया जाता है। योजनाओं को तैयार करने में छात्र-छात्राओं को काफी मेहनत करना पड़ता है। इन योजनाओं के लिए उन्हें कतिपय सुझाव/सलाह/मदद की भी आवश्यकता समय-समय पर पड़ती रहती है। प्रश्नावली में इसी विषय से सम्बन्धित प्रश्न ''शिक्षक योजना तैयार करने में क्या छात्रों की मदद करते है?'' के प्रत्युत्तर में 49 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का कहना है कि उनके शिक्षक/शिक्षिकाओं द्वारा हमेशा उनकी योजनाओं के निर्माण में मदद प्राप्त होता रहता है। 23 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का कहना है कि उनके अध्यापकों/अध्यापिकाओं द्वारा बहुत मुश्किल से ही मदद मिल पाती है। 14 प्रतिशत छात्रों का मानना है कि उनकी परियोजनाओं में शिक्षकों द्वारा कभी-कभी मदद प्राप्त होती है जबकि 04 प्रतिशत छात्र-छात्राएं यह स्वीकार करते है कि उनके शिक्षक कुछ समय के लि हमारी योजनाओं को तैयार करने में हमें सहायता प्रदान करते है।

छात्रों के साथ शिक्षकों का घुल मिलकर रहना भी एक अच्छी पहल होती है क्योंकि ऐसी स्थिति में शिक्षक भी अपनी बातों को छात्रों के साथ साझा करने का प्रयास करते है। कतिपय परिस्थितियों में शिक्षक कुछ समस्याओं के समाधान किये जाने हेतु छात्रों के सलाहों/सुझावों को स्वीकार भी करते है। इसी से सम्बन्धित प्रश्न ''क्या शिक्षक महत्वपूर्ण समस्या को हल करने के लिए विधि पूछते है?'' पर 64 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का विचार है कि उनके शिक्षक बहुत मुश्किल से ही किसी विषय परिस्थिति के आने पर छात्रों से समस्या हल किये जाने की विधि पूछते है। 22 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का मानना है कि उनके अध्यापक कभी-कभी उनकी राय शुमारी कर लेते है। जबकि 14 प्रतिशत छात्र/छात्राओं का विचार है कि उनके शिक्षक सदैव/हमेशा उनकी विधियों को समस्याओं को सुलझाने में प्रयोग किया करते है।

एक महत्वपूर्ण प्रश्न ''मेरे शिक्षक मुझे अपने समय का उपयोग अपने तरीके से करने का अवसर प्रदान करते है?'' भी प्रश्नावली में रखा गया। उक्त प्रश्न पर किशोर/किशोरियों का जो रूझान प्राप्त हुआ उससे लगता है कि छात्र-छात्राएं अपने शिक्षकों से इस तरह का अवसर बखूबी प्राप्त करते है। 73 प्रतिशत छात्र/छात्राओं ने स्वीकार किया कि उनके शिक्षक हमेशा/अक्सर उन्हें अपने समय का उपयोग उनके तरीके से करने का अवसर प्रदान करते है। 11 प्रतिशत छात्र/छात्राओं का मानना है कि उनके शिक्षकों द्वारा कभी-कभी ऐसा अवसर प्रदान किया जाता रहा है। वही 16 प्रतिशत छात्र-छात्राओं की स्वीकारोक्ति यह रही कि उनके शिक्षक कुछ समय के लिए ही उन्हें अपने समय का उपयोग अपने तरीके से करने के लिए सुअवसर प्रदान किया करते है।

छात्र/छात्राओं का विचार कभी-कभी बहुत ही आवश्यक एवं महत्वपूर्ण होता है। छात्र अपने शिक्षकों से कतिपय/विभिन्न परिस्थितियों में इन महत्वपूर्ण विचारों को साझा भी किया करते है। कभी-कभी ऐसी भी स्थितियां बन जाती है जब छात्रों की भावनाओं/विचारों/सुझावों/सलाह मशविरा को नजरअन्दाज कर दिया जाता है। कभी-कभी इनके राय/विचारों की प्रशंसा के बजाय आलोचनाएं भी कर दी जाती है। उक्त प्रकरण से सम्बन्धित प्रश्न भी प्रश्नावली में रखा गया यथा- ''क्या शिक्षक छात्रों के राय की आलोचना करते है?'' उत्तर निम्नवत् प्राप्त हुआ-

हमेशा	अक्सर	कुछ समय	बहुत मुश्किल से	कभी-कभी
13%	21%	18%	22%	26%

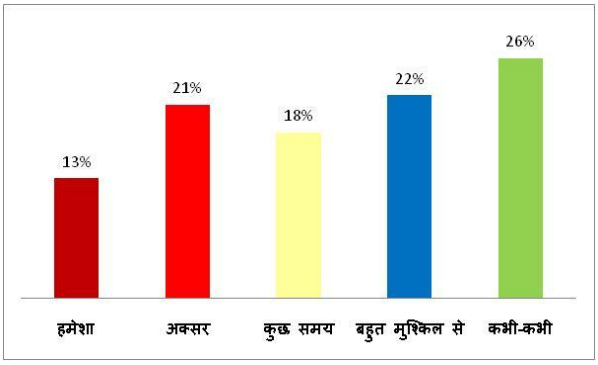

किसी भी संस्था का परिसंचालन संस्था प्रमुख का उत्तरदायित्व होता है। वह अपनी संस्था को बेहतर रूप से संचालित करने के लिए कुशल नेतृत्व प्रदान करता है। एक अच्छे नेतृत्वकर्ता का प्रमुख गुण होना चाहिए कि वह अपनी संस्था के प्रत्येक सदस्य के साथ मधुर एवं सहयोगात्मक व्यवहार रखते हुए उनको अपने कार्यों में मदद किये जाने की अपेक्षा रखे। प्रायः यह देखा गया है कि यदि नेतृत्वकर्ता का व्यवहार मृदुल परस्पर सहयोगी, एक दूसरे के प्रति स्नेह करने का रहा हो तो वह अपने प्रत्येक कार्य को बेहतर ढंग से संपादित करने में सफलता प्राप्त कर पाता है। प्रश्नावली में उक्त तथ्य से सम्बन्धित प्रश्न कि ''क्या विद्यालय परिवार के सभी सदस्य संस्थान के प्रमुख का पालन करते है?'' उक्त के उत्तर में छात्र-छात्राओं की विभिन्न प्रतिक्रियाएं प्राप्त हुई। परिणाम प्रदर्शित करता है कि 68 प्रतिशत छात्र-छात्राओं के अनुसार उनके विद्यालयों में विद्यालय परिवार के सदस्य हमेशा संस्था प्रमुख का पालन करते है। 14 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का विचार है कि उनके विद्यालय के सभी सदस्य संस्था प्रमुख का अनुपालन बहुत मुश्किल से ही कर पाते है। 11 प्रतिशत छात्र-छात्रा यह मानते है कि उनके विद्यालय की स्थिति ऐसी नहीं है क्योंकि इनके परिवार के सदस्य संस्था प्रमुख का पालन कभी-कभी कर पाते है। 07 प्रतिशत छात्र-छात्राओं का कहना है कि उनके विद्यालय में विद्यालय परिवार के सभी सदस्य संस्था प्रमुख का पालन कुछ समय के लिए ही करते है।

माध्यमिक स्तर पर कुछ शिक्षक कक्षा शिक्षण के अतिरिक्त भी शिक्षण सामग्री प्रदान करते रहते है। ऐसा वह अपने विषय में विशेष दक्षता हासिल करने हेतु छात्र-छात्राओं को विशेष प्रकार के नोट (शैक्षिक सामग्री) उपलब्ध कराकर किया करते है। उक्त प्रकरण के दृष्टिगत प्रश्नावली में जब प्रश्न ''शिक्षकों ने उनके द्वारा दिये गये नोटो को जानने के लिए कभी जोर नहीं दिया।'' रखा गया तो छात्र-छात्राओं के प्रत्युत्तर बताते है कि शिक्षकों द्वारा नोट तो प्रदान कर दिये जाते है परन्तु सभी शिक्षक ''इसको छात्र कितना अंगीकृत कर पाये'' यह जानने का प्रयत्न करने पर कभी जोर नहीं दिया। हालांकि कतिपय शिक्षकों ने इसे जानने का भी प्रयास किया। प्राप्त उत्तर निम्नवत प्रस्तुत है-

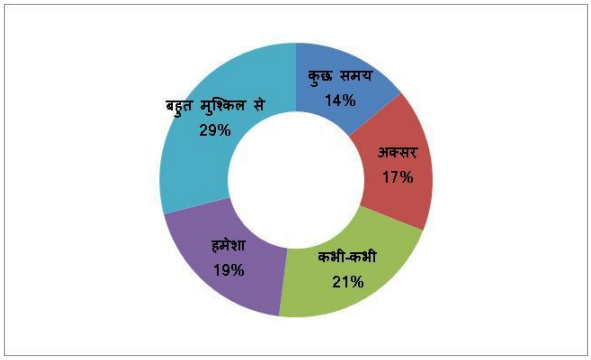

शिक्षक प्रायः ऐसे छात्रों पर विशेष ध्यान देते है जो कक्षा-कक्ष में अधिक सक्रिय रहते है अथवा जिनकी शैक्षिक गुणवत्ता अच्छी होती है क्योंकि ऐसे बच्चों को जो भी कार्य दिये जाते उसे वे बखूबी तौर पर किया करते है। उच्च शैक्षिक क्षमता वाले बच्चे प्रायः नवीन विधियों से अपनी दक्षता को बढ़ाने का प्रयास करते रहते है, जिसके कारण ऐसे बच्चे अपने अध्यापकों को अधिक प्रिय होते है। प्रश्नावली में उक्त से सम्बन्धित प्रश्न ''क्या शिक्षक उच्च शैक्षिक क्षमता वाले छात्रों को अधिक ध्यान देते है?'' बच्चों का उत्तर प्राप्त हुआ उससे पता चलता है कि 22 प्रतिशत शिक्षक ऐसे है जो अच्छी शैक्षिक दक्षता वाले छात्रों पर हमेशा अधिक ध्यान दिया करते है। 27 प्रतिशत शिक्षक कभी-कभी ऐसे छात्रों के प्रति अपनी रूचि अधिक देते है। 29 प्रतिशत शिक्षक ऐसे है जो बहुत मुश्किल से इन छात्रों के प्रति अधिक ध्यान देते है। 17 प्रतिशत शिक्षक ऐसे भी है जो कुछ समय के लिए अधिक गुणवत्ता वाले छात्र-छात्राओं पर अधिक ध्यान देते है। अवशेष 5 प्रतिशत अक्सर ऐसे बच्चों पर अधिक ध्यान देते है।

(10) छात्रों की समस्याओं का निराकरण:-

माध्यमिक शिक्षा में छात्र-छात्राओं की विभिन्न प्रकार की समस्याएं विकसित होती रहती है। छात्र/छात्राएं चूंकि किशोरावस्था से गुजर रहे होते है ऐसे उनकी बहुतायत समस्याओं का निराकरण किया जाना नितान्त आवश्यक हो जाता है। छात्र-छात्राओं की व्यक्तिगत, सामूहिक व अन्य समस्याओं का समय-समय पर पृच्छा के आधार पर उनके शिक्षकों अथवा अभिभावकों द्वारा निदान किया जाना चाहिए। उक्त के परिप्रेक्ष्य में प्रश्नावली में अंकित प्रश्न कि ''शिक्षक छात्रों की समस्याओं को सुनते है?'' के प्रत्युत्तर में छात्रों का जो रूझान प्राप्त हुआ उसके अनुसार 37 प्रतिशत शिक्षक हमेशा छात्रों की समस्याओं को

सुनते है और आवश्यकतानुसार इसका समाधान भी करते है। 19 प्रतिशत शिक्षक छात्र/छात्राओं की समस्याओं को अक्सर सुनते है। 23 प्रतिशत शिक्षक शिक्षिकाएं कभी-कभी, 12 प्रतिशत शिक्षक-शिक्षिकाएं कुछ समय के लिए छात्रों की समस्याओं को सुनते है। 9 प्रतिशत शिक्षक ऐसे भी है जो छात्र-छात्राओं की समस्याओं को बहुत मुश्किल से ही सुन पाते है।

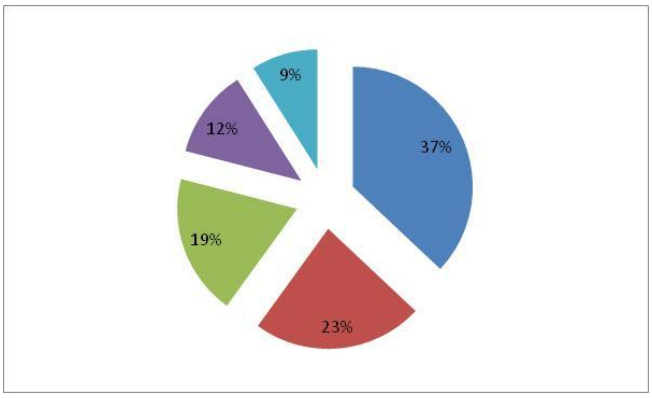

शिक्षा शिक्षण प्रक्रिया में बच्चों को भरपूर अधिगम कराने के लक्ष्य से विभिन्न प्रकार की विधाओं का प्रयोग प्रायः शिक्षक अपनी दैनिक अधिगम शैली में किया करते है। विषय वस्तु को गूढता से सरलता की ओर ले आने के लिए शिक्षक शिक्षिकाएं विभिन्न तरीकों से बच्चों को प्रोत्साहित करते रहते है। प्रश्नावली के प्रश्न क्रमांक 60 पर अंकित प्रश्न ''शिक्षक कई विशिष्ट तरीकों से एक चीज व्यक्त करने पर जोर देते है।'' के अवलोकन से पता चलता है कि 46 प्रतिशत शिक्षक-शिक्षिकाएं हमेशा विशिष्ट तरीके से विषय वस्तु को व्यक्त करने पर जोर देते है। 27 प्रतिशत शिक्षक कभी-कभी विशिष्ट तरीकों का प्रयोग करते है। 14 प्रतिशत शिक्षक कुछ समय के लिए तथा 13 प्रतिशत शिक्षक बहुत मुश्किल से विषय वस्तु को व्यक्त करने हेतु विशिष्ट तरीकों का प्रयोग किया करते है।

''छात्र कई अवसरों पर स्वतंत्र रूप से अपने अलग-अलग विचार व्यक्त करते है'' जैसे प्रश्न के उत्तर में छात्र-छात्राओं की प्रश्नावली प्रदर्शित करती है कि 27 प्रतिशत छात्र-छात्राएं हमेशा अपने विचार व्यक्त करते है, 19 प्रतिशत किशोर-किशोरियां कभी-कभी विभिन्न अवसरों पर स्वतंत्र रूप से अपने विचार प्रस्तुत करने में रूचि दिखाते है। 26

प्रतिशत छात्र-छात्राएं अक्सर ऐसा करते है। 16 प्रतिशत छात्र-छात्राएं कुछ समय के लिए जबकि 12 प्रतिशत छात्र-छात्राएं बहुत मुश्किल से ही कई अवसरों पर स्वतंत्र रूप से अपने अलग-अलग विचार व्यक्त करने का प्रयत्न करते है।

प्रस्तुत शोध में शोधार्थी ने छात्र-छात्राओं से यह जानने का प्रयास कि ''क्या वे स्कूल की विभिन्न गतिविधियों में भाग लेते है?'' निश्चित रूप से विद्यालय की प्रत्येक गतिविधि छात्र-छात्राओं की सहभागिता से ही सम्पादित होती रहती है। राष्ट्रीय पर्व, वार्षिकोत्सव, महापुरूषों के जीवनों से सम्बन्धित वाद-विवाद प्रतियोगिता, खेल-कूद प्रतियोगिता आदि अनेको गतिविधियों में बच्चे बढ़-चढ़ कर हिस्सा लेते है। हाँ इतना अवश्य देखने को मिला कि कतिपय बच्चे अपनी पसन्द की गतिविधियों के आधार पर अपनी सहभागिता सुनिश्चित करते है। प्राप्त प्रश्नावली परिणाम बताता है कि 56 प्रतिशत छात्र-छात्राएं हमेशा, 23 प्रतिशत छात्र-छात्राएं कभी-कभी स्कूल की विभिन्न गतिविधियों में भाग लेते है जबकि 13 प्रतिशत छात्र-छात्राएं कुछ समय के लिए और 8 प्रतिशत छात्र-छात्राएं बहुत मुश्किल से स्कूल की विभिन्न गतिविधियों में प्रतिभाग करते है।

प्रश्न यह कि ''क्या शिक्षक पढ़ाने के दौरान छात्रों से कोई प्रश्न पूछते है?'' प्रश्नावली द्वारा प्राप्त उत्तर यह निर्देशित करता है कि कक्षा शिक्षण के दौरान प्रायः शिक्षक अपने छात्रों से विषय वस्तु से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के प्रश्न पूछते रहते है। कक्षा शिक्षण तभी जीवन्त रहता है जब शिक्षक-छात्र के बीच संवाद होता रहे। यह संवाद विभिन्न प्रकार का हो सकता है यथा वाद-विवाद, चर्चा-परिचर्या, प्रश्नोत्तर, अन्त्याक्षरी आदि। विषय वस्तु की ओर छात्र-छात्राओं की एकाग्रता लाने के लिए तथा महत्वपूर्ण प्रकरण की समझ विकसित किये जाने हेतु प्रश्न पूछना एक अत्यावश्यक गतिविधि है। प्रश्नावली से प्राप्त निष्कर्ष प्रदर्शित करता है कि 64 प्रतिशत शिक्षक हमेशा कक्षा शिक्षण के दौरान छात्र-छात्राओं से विभिन्न प्रकार के प्रश्न पूछते रहते है, 22 प्रतिशत शिक्षक कभी-कभी, 11 प्रतिशत शिक्षक कुछ समय के लिए छात्रों से कक्षा शिक्षण के दौरान प्रश्न पूछते है। प्रश्नावली यह भी प्रदर्शित करती है कि 3 प्रतिशत शिक्षक ऐसे भी है जो बहुत मुश्किल से ही कक्षा शिक्षण के दौरान अपने छात्र-छात्राओं से प्रश्न पूछते है।

प्रायः देखा जाता है कि माध्यमिक शिक्षा के विद्यालयों में पाठ्यचर्या से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार की गतिविधियां संचालित होती रहती है। इन गतिविधियों में वाद-विवाद, नाटक, प्रदर्शनियां, विभिन्न प्रकार की प्रतियोगिताएं आदि प्रमुख है। बच्चे इन पाठ्यचर्या

गतिविधियों में अपनी इच्छानुसार प्रतिभाग किया करते है परन्तु ऐसे छात्रा-छात्राओं की संख्या बहुत कम ही रहती है। ऐसी गतिविधियों में छात्र-छात्राओं को प्रेरित किया जाना बहुत ही आवश्यक है ताकि अधिक से अधिक छात्र लाभान्वित हो सके। उक्त प्रकरण से सम्बन्धित प्रश्न कि ''क्या शिक्षक छात्रों को पाठ्यचर्या गतिविधियों में भाग लेने के लिए प्रेरित करते है?'' पर प्रश्नावली से विदित होता है कि 31 प्रतिशत शिक्षक हमेशा, 24 प्रतिशत शिक्षक अक्सर छात्रों को पाठ्यचर्या गतिविधियों में भाग लेने के लिए प्रेरित करते है। 18 प्रतिशत शिक्षक कभी-कभी तथा 21 प्रतिशत शिक्षक कुछ समय के लिए छात्रों को ऐसी गतिविधियों में प्रतिभाग हेतु उत्प्रेरित करते है। 06 प्रतिशत शिक्षक ऐसे भी है जिनके बारे में प्रश्नावली के अवलोकन से पता चलता है कि वे बहुत मुश्किल से ही बच्चों को विभिन्न गतिविधियों में प्रतिभाग हेतु प्रोत्साहित करते है।

(11) शिक्षकों द्वारा छात्रों की परियोजनाओं में ली गयी रूचि

विद्यालय में छात्र-छात्राओं को विभिन्न प्रकार के प्रोजेक्ट समय-समय पर दिये जाते है जिसे वे निर्धारित पाठ्यवस्तु के आधार निश्चित समयावधि में पूर्ण करते है। इन परियोजनाओं में छात्र-छात्राओं को विभिन्न स्तरों पर शिक्षकों के मार्गदर्शन की आवश्यकता पड़ती रहती है जिसके आधार पर छात्र-छात्राएं अपने प्रोजेक्ट को अमली जामा पहनाने अर्थात् पूर्ण करने में सफलता प्राप्त करते है। प्रायः देखा जाता है कि छात्र एवं छात्राएं अपने प्रोजेक्ट को सामाजिक सन्दर्भो से सम्बन्ध स्थापित करते हुए अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति परिवार के सदस्यों, मित्रों व अन्य लोगों के माध्यम से पूर्ण कर लेते है परन्तु सर्वाधिक मार्गदर्शन एवं सहयोग उन्हें अपने शिक्षक से ही प्राप्त होता है। प्रदत्त प्रश्नावली का अवलोकन प्रदर्शित करता है कि 31 प्रतिशत शिक्षक छात्रों की परियोजनाओं में रूचि लेते हुए उनका सहयोग सदैव किया करते है परन्तु 29 प्रतिशत शिक्षक कभी-कभी से ही रूचि ले पाते है। 14 प्रतिशत शिक्षक कुछ समय के लिए, 21 प्रतिशत शिक्षक अक्सर छात्रों की परियोजनाओं में रूचि लेते हुए सहयोग किया करते है। 7 प्रतिशत शिक्षक बहुत मुश्किल से ही छात्रों को उनकी परियोजनाओं में रूचिपूर्वक सहयोग कर पाते है।

''क्या शिक्षक विभिन्न चीजों/वस्तुओं के उपयोग पर जोर देते है?'' पर प्रश्नावली का रूझान बताता है कि 73 प्रतिशत शिक्षक हमेशा/अक्सर छात्रों को विभिन्न चीजों के

उपयोेग पर जोर देते है जबकि 27 प्रतिशत शिक्षक कभी-कभी अथवा बहुत मुश्किल से बच्चों को विभिन्न वस्तुओं के उपयोग पर जोर देने का प्रयास करते है।

अधिकांशतया देखा जाता है कि विद्यालय में किसी प्रयोजन अथवा विशेष अवसर पर जब कोई अतिथि शिक्षक उपस्थित होते है तो कुछ छात्र-छात्राएं बड़ी रूचि एवं लगन से काम करते है तो कुछ छात्र-छात्राएं काम करने से कतराते है। उक्त के दृष्टिगत प्रश्नावली में समाहित प्रश्न ''जब कुछ अतिथि शिक्षक की उपस्थिति में मुझे कुछ काम करने के लिए कहा जाता है तो मैं ऐसा नहीं करता, अगर मैं इसे करने के लिए तैयार नहीं हूँ।'' यहां प्रश्न यह उठता है कि बच्चे की तैयारी उसे उसके आत्मविश्वास को आगे ले जाती है यदि बच्चा किसी कार्य को करने की तैयारी किया रहता है तो उसे किसी कार्य को करने में किसी भी प्रकार की झिझक महसूस नहीं होती है। प्रश्नावली का उत्तर भी यही प्रदर्शित करता है कि 77 प्रतिशत छात्र/छात्राएं हमेशा किसी कार्य को करने के लिए अपने अतिथि शिक्षक के सामने तैयार नहीं होते है जब उनकी इस हेतु तैयारी नहीं रहती है। 23 प्रतिशत छात्र-छात्राएं कभी-कभी अथवा बहुत मुश्किल से ऐसा करने को तैयार हो पाते है।

प्रश्नावली के अतिसंवेदनशील प्रश्न कि ''जब छात्र किसी विषय में खराब अंक प्राप्त करता है तो शिक्षक उसकी चिन्ता नहीं करते है?'' किसी भी विद्यालय के छात्र-छात्राओं का प्रदर्शन कैसा होता है यह सर्वथा उनके शिक्षकों की कार्य शैलियों पर निर्भर करता है। किसी छात्र का प्रदर्शन खराब होना शिक्षक की कमी/नाकामयाबी को इंगित करता है। ऐसे में प्रत्येक शिक्षक अपने छात्रों की उपलब्धि पर निश्चित यप से अपने को सफल एवं गौरान्वित महसूस करता है। प्रस्तुत प्रश्न का उत्तर यह दर्शाता है कि 23 प्रतिशत शिक्षक कभी-कभी, 16 प्रतिशत कुछ समय के लिए, 18 प्रतिशत शिक्षक अक्सर तथा 22 प्रतिशत शिक्षक बहुत मुश्किल से छात्र/छात्रा के किसी एक विषय में खराब अंक आने पर चिन्ता नहीं करते है।

स्कूल वातावरण सम्बन्धित प्रश्नावली का अन्तिम प्रश्न कि ''मेरी संस्था में कई नियम है? पर छात्रों की राय प्रश्नावली में कुछ इस प्रकार प्राप्त हुआ-

हमेशा - 38%

अक्सर - 31%

कुछ समय - 8%

बहुत मुश्किल से-13%

कभी-कभी - 10%

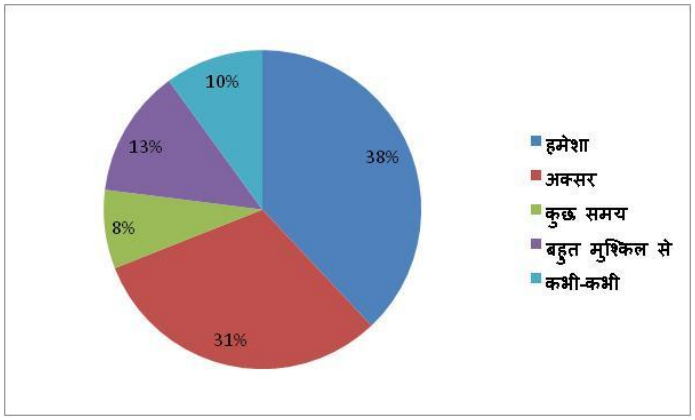

उपर्युक्त प्रश्नावली का अध्ययन यह प्रदर्शित करता है कि विद्यालय का वातावरण एक सुनिश्चित अनुशासित एवं शिक्षा प्रदान करने हेतु एक सुसंगठित वातावरण का निर्माण करता है। कुछ विद्वानों ने विद्यालय को निम्नवत परिभाषित किया है-

टी0पी0नन के अनुसार- विद्यालय को मुख्य रूप से इइस प्रकार स्थान नहीं समझा जाना चाहिए, जहां किसी निश्चित ज्ञान को सीखा जाता है बल्कि वह ऐसा स्थान है जहां बालक-बालिकाओं को क्रियाओं के उन निश्चित रूपों में प्रशिक्षित किया जाता है जो इस विशाल संसार में सबसे महान और सबसे अधिक महत्व वाली है।

जे0एम0 रॉस के अनुसार- विद्यालय वे संस्थाएं है जिनको सभ्य मनुष्य द्वारा इस उद्देश्य से स्थापित किया जाता है कि समाज में सुव्यवस्थित और योग्य सदस्यता के लिए बालक बालिकाओं को तैयारी में सहायता मिले।

जाॅन ड्यूवी के अनुसार- विद्यालय एक ऐसा विशिष्ट वातावरण है, यहां जीवन के कुछ गुणों और कुछ विशेष प्रकार की क्रियाओं तथा व्यवसायों की शिक्षा इस उद्देश्य से दी जाती है कि बालक का विकास वांछित दिशा में हो।

उपरोक्त तथ्यों से विद्यालय की निम्नांकित विशेषताएं परिलक्षित होती है-

1. विद्यालय एक विशिष्ट वातावरण है जिसमें बालकों के वांछित विकास के लिए विशिष्ट गुणों, क्रियाओं तथा व्यवसायों की व्यवस्था की जाती है।

2. विद्यालय वह स्थान है जहां संसार की महान एवं महत्वपूर्ण क्रियाओं को स्थान दिया जाता है।

3. विद्यालय को बालकों के भावी जीवन की तैयारी हेतु स्थापित किया जाता है।

4. विद्यालय को सामुदायिक जीवन का केन्द्र बिन्दु होना चाहिए।

विद्यालय एक लघु समाज या समुदाय है जिसकी स्थापना विशिष्ट लक्ष्यों की पूर्ति हेतु की जाती है। इसमें उन सामूहिक क्रियाओं को स्थान प्रदान किया जाता है जिनमें भाग लेकर बालक स्वयं को सामाजिक रूप से समाज का कुशल सदस्य बना सके। दूसरे शब्दों में वे उत्तम नागरिकता के गुणों को सीख सके और भावी समाज को उन्नति एवं प्रगतिशील बना सके।

उपर्युक्त तथ्य एवं प्रश्नावली से प्राप्त सम्पूर्ण उत्तरों का निष्कर्ष परिलक्षित करता है कि माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययन करने वाले किशोरवय छात्र-छात्राओं में विद्यालय का प्रभाव एक अच्छे मार्गदर्शक के रूप में व्याप्त है। विद्यालय में शिक्षकों का व्यवहार, शिक्षणेत्तर कर्मचारियों द्वारा छात्रों में डाला गया एक मार्गदर्शन, विद्यालय की नियमावली सदैव बच्चों को अनुशासित जीवन जीने और आक्रामकता से दूर रहने के लिए ही प्रेरित करता है।

(3) मनोरंजन के साधन के रूप में दूरदर्शन:-

भारत वर्ष में पिछले दशक से ही दूरदर्शन का विधिवत प्रसार हुआ। पिछले दशकों में रामायण, महाभारत, कृष्णा जैसे धार्मिक सीरियल लोगों में प्रचलित हुए। कुछ ऐसे सीरियल भी आए जो पारिवारिक परिदृश्य से जुड़े थे कुछ सीरियल जासूसी कथा से भी सम्बन्धित लाइव (प्रदर्शित) किये गये। विगत कई वर्षो से दूरदर्शन देखना प्रत्येक परिवार का दैनिक दिनचर्या का एक आवश्यक अंग हो चुका है। वर्तमान समय में वैश्विक महामारी की इस घड़ी में जब लोग सोशल डिस्टेसिंग का पालन करते हुए घर से बाहर नहीं निकल रहे थे तो एक बार फिर दूरदर्शन पर विभिन्न प्रकार के सीरियल प्रसारित

किये जाने लगे। विद्यालय बन्द की स्थिति में ई-पाठशाला के अन्तर्गत माध्यमिक कक्षाओं का संचालन भी टेलीविजन पर होने लगा।

टेलीविजन पर विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों को देखना बच्चों की पहली पसन्द होती है। परन्तु ज्यादा समय टेलीविजन पर व्यतीत करना भी बच्चों के हित में नहीं होता है क्योंकि कार्यक्रम के पात्रों का स्पष्ट प्रभाव बच्चों के दैनिक जीवन में परिलक्षित होता है। वे अपने नायक/पात्र की भूमिका में प्रायः अपने को ढाल लेना चाहते है। सकारात्मक प्रभाव बच्चों को जहाँ एक अच्छे रास्ते पर ले जाते हुए उनको सफल जीवन जीने में कामयाब बनाता है वही पर नकारात्मक प्रभाव बच्चों के जीवन को आक्रामक, कठोर एवं दुःखमय बना देता है। प्रस्तुत शोध में 200 किशोर-किशोरियों का विचार दूरदर्शन से सम्बन्धित प्रश्नावली के माध्यम से जानने का प्रयत्न किया गया। इस विषय पर उनसे 20 प्रश्नों के माध्यम से महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर उनसे राय ली गयी जिसका विश्लेषण यहां प्रस्तुत है-

(3) दूरदर्शन (टी**0**वी**0)** से सम्बन्धित प्रश्नावली:-

दूरदर्शन पर बच्चों द्वारा कितना समय बिताया जाता है यह कोई निश्चित समय नहीं दर्शाता क्योंकि दूरदर्शन देखना बच्चों की रूचि, उनको मिलने वाला समय, अभिभावकों की इच्छा, विद्युत सप्लाई की स्थिति तथा अन्य बहुत सी परिस्थितियां इसके लिए उत्तरदायी होती है। जब बच्चों से यह पूछा गया कि वे एक दिन में कितने घंटे टी0वी0 देखते है तो छात्रों का रूझान प्रश्नावली के माध्यम से निम्नांकित रूप में प्राप्त हुआ-

1)एक घंटे से कम -19%

2)एक घंटा - 16%

3)दो घण्टा - 42%

4)तीन घण्टा - 11%

5)चार घण्टे से ज्यादा-12%

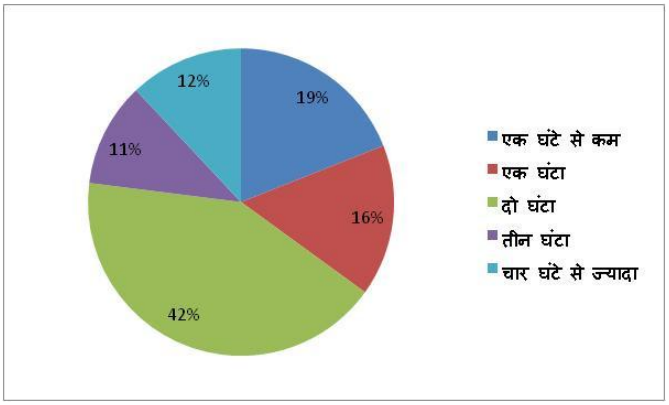

दूरदर्शन पर मनोरंजक, ज्ञानवर्धक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक आदि विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम प्रसारित किये जाते है। किशोर एवं किशोरियां चूंकि अपने जीवन के एक ऐसे पड़ाव से गुजरते है जो अनेको झन्झावतों से भी भरा हुआ होता है। अतः इन परिस्थितियों में इनकी पसन्द भी अलग-अलग तरह की होती है। बच्चों से जब दूरदर्शन से सम्बन्धित प्रश्नावली के माध्यम से पूछा गया कि ''आपको किस तरह के प्रोग्राम दूरदर्शन पर देखना अच्छा लगता है?'' तो उनके द्वारा प्राप्त जो परिणाम दिखाई दिया उसके अनुसार 09 प्रतिशत छात्र-छात्राएं धार्मिक कार्यक्रम, 14 प्रतिशत छात्र/छात्राएं पढ़ाई से सम्बन्धित कार्यक्रम देखना पसन्द करते है। 11 प्रतिशत छात्र-छात्राएं गीत-संगीत, 19 प्रतिशत छात्र-छात्राएं समाचार देखना पसन्द करते है। 21 प्रतिशत छात्र-छात्राएं नाटक एवं फिल्म, 8 प्रतिशत छात्र-छात्राएं लड़ाई झगड़े वाले कार्यक्रम तथा 08 प्रतिशत छात्राएं ऐसे भी है जो अन्य कोई भी कार्यक्रम देखना पसन्द करते है।

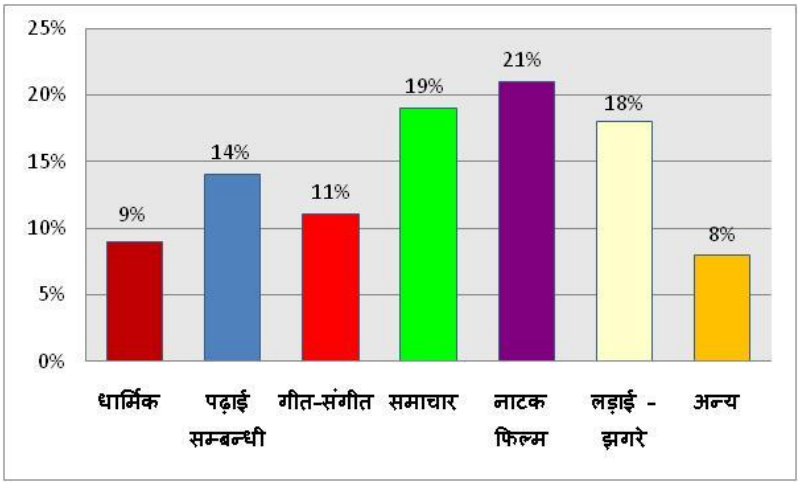

जैसा कि हम सभी जानते है प्रत्येक व्यक्ति/बालक/छात्र-छात्रा अपने में विशिष्ट होता है। उसकी रूचि एवं पसन्द अलग-अलग होती है। वह अपनी पसन्द के अनुसार ही अपने समस्त कार्यो का निष्पादन करता है। कुछ व्यक्ति रचनात्मक कार्यों में ज्यादा रूचि लेते है तो कुछ परम्परागत तरीके से ही अपने कार्यो को पूर्ण करके सन्तुष्ट हो जाते है। दूरदर्शन पर भी लोगों की अपनी अलग रूचि होती है वे अपने पसन्द के अनुसार ही कार्यक्रमों को देखना पसन्द करते है। जब प्रश्नावली के माध्यम से बच्चों से यह जानने का प्रयास किया गया कि ''आप टी0वी0 किसलिए देखते है?'' तो 33 प्रतिशत बच्चों का

उत्तर बताता है कि वे मनोरंजन के लिए टी0वी0 देखते है। 27 प्रतिशत बच्चों का रूझान कुछ सीखने के लिए प्राप्त हुआ। 21 प्रतिशत बच्चों का मानना है कि वे टी0वी0 समय को व्यतीत करने के लिए देखते है जबकि 19 प्रतिशत छात्र-छात्राएं किसी अन्य कारण से टीवी0 देखना पसन्द करते है।

दूरदर्शन पर जितने भी कार्यक्रम प्रसारित किये जाते है उनमें अधिकांश कार्यक्रम ज्ञानवर्धक ही होते है। जैसा कि हम जानते है कार्यक्रम कोई भी अच्छा अथवा खराब लोगों के दृष्टिकोण पर निर्भर करता है। कार्यक्रम की जानकारी को यदि हम सकारात्मक रूप से अथवा सकारात्मक नजरिये से यदि देखना चाहते है तो वह निश्चित रूप से ज्ञानवर्धन साबित होता है परन्तु यदि किसी कार्यक्रम नकारात्मक नजरिये से देखा जाता है तो वह विभिन्न प्रकार की गलत अवधारणाओं को जन्म देता है। इन्ही नजरियों के कारण ही लोगों को अलग-अलग प्रकार के कार्यक्रम भी पसन्द होते है। प्रश्नावली में यह पूछे जाने पर कि आपको किस तरह के फिल्म, नाटक, प्रोग्राम देखना अच्छा ललगता है तो उक्त प्रश्न के प्रत्युत्तर में छात्रों का रूझान निम्नवत प्राप्त हुआ-

1) मारपीट वाले - 23%

2) खेलकूद वाले- 16%

3) जानकारी वाले- 11%

4) गाने/फिल्म वाले-43%

5) कोई अन्य - 07%

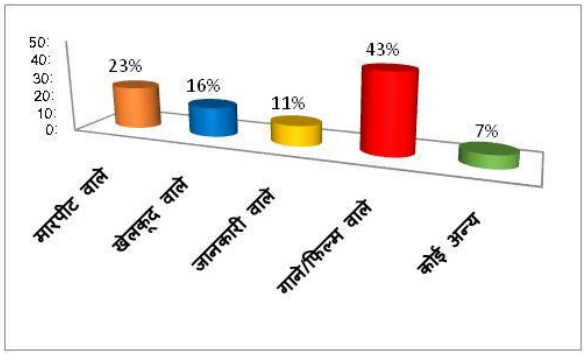

किशोरावस्था एक ऐसी अवस्था होती है जहां पहुंचते-पहुंचते बच्चों के मन में स्वयं को कुछ बनने अथवा समाज में दिखने की भावना प्रबल होने लगती है। बच्चों के मन में किसी व्यक्ति की छाप बनने की भी दशा का रूझान होने लगता है। वह अपना एक नायक अथवा आदर्श भी बनाना प्रारंभ करने लगता है और उसी की भांति खुद को ढालने का भी प्रयत्न करता है। एक रोचक प्रश्न की ''मैं उम्मीद करता हूं कि मेरे पास भी मेरे मनपसंद हीरो/हीरोइन के गुण आ जाएं।'' के उत्तर में प्रश्नावली बताती है कि 36% छात्र-छात्राओं की प्रबल इच्छा होती है कि उनके अंदर उनके पसंदीदा हीरो/हीरोइन के गुण आ जाए। 19% छात्र छात्राओं का मानना है कि ऐसा वे साधारण रूप से चाहते हैं। 15% छात्र/छात्राएं ज्यादातर अपने पसंदीदा हीरो/हीरोइन की तरह बनना चाहते हैं जबकि 30% छात्र/छात्राएं इस तरह भी है जो बहुत कम ही अपने पसंदीदा नायक/नायिका की भांति बनना चाहते हैं। बच्चों से जब यह पूछा गया कि ''क्या वे अपने पसंदीदा हीरो/हीरोइन की नकल करते हैं?'' जो प्रश्नावली के रूझान से पता चलता है कि 23% बहुत ज्यादा, 17% ज्यादा, 34% साधारण तौर पर तथा 26% छात्र बहुत कम ऐसा कर पाते हैं।

प्रायः दूरदर्शन पर मार-धाड़, लड़ाई-झगड़े के कार्यक्रमों को बच्चे अधिक पसंद करते हैं। ऐसे कार्यक्रम कभी-कभी बच्चों को आक्रामकता कबे रास्ते पर भटकाने का प्रयास करने लगते हैं। इनक कार्यक्रमों को बच्चों के बीच उत्पन्न मित्रवत व्यवहार में खटास लाने का उत्तरदायी भी माना जा सकता है। प्रश्नावली में उक्त के दृष्टिगत तीन प्रश्न पूछे गये जिनमें से पहला प्रश्न ''मैं महसूस करता हूं कि लड़ाई झगड़े वाले प्रोग्राम नहीं देखना चाहिए'' पर बच्चों का उत्तर बताता है कि 39% बच्चे बहुत ज्यादा, 21% बच्चे ज्यादा, 18% साधारण तथा 22% छात्र-छात्राएं कम से कम महसूस करते हैं कि उन्हें लड़ाई झगड़े वाले प्रोग्राम नहीं देखना चाहिए। दूसरा प्रश्न ''लड़ाई झगड़े वाले प्रोग्राम देखकर मेरा भी अपने दोस्तों/सहपाठियों के साथ भी उस तरह ही लड़ाई करने जैसा मन हो जाता है'' पर 31% छात्र छात्राओं का मानना है कि बहुत ज्यादा, तौर पर वे अपने मित्रों से लड़ाई कर बैठते हैं। 17% छात्र छात्राएं ज्यादा तौर पर 38% छात्र छात्राएं साधारण तौर पर जबकि 14% छात्र-छात्राएं ऐसे हैं जो बहुत कम ही लड़ाई झगड़ा कर पाते हैं अर्थात् इनके उपर ऐसे कार्यक्रम देखने का कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता है।

इस कड़ी का तीसरा महत्वपूर्ण यह कि ''जिन फिल्मों में लड़ाई-झगड़ा (मार-पीट) होता है वो फिल्म मुझे अच्छा लगता है।'' निश्चित रूप से किशोरावस्था में ऐसी फिल्में ज्यादा पसंद की जाती है। बच्चों का उत्तर भी निम्नवत परिणाम प्रस्तुत करता है-

बहुत ज्यादा-34%

ज्यादा - 31%

साधारण- 19%

कम - 16%

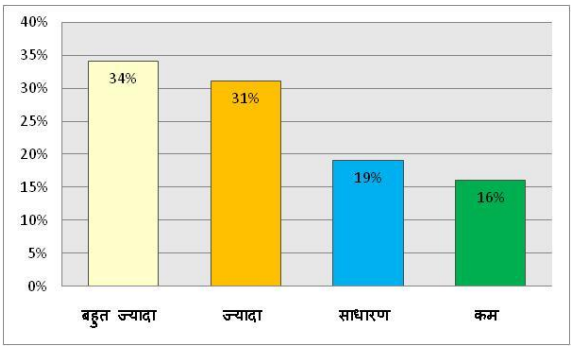

छात्र-छात्राओं से जब यह जानने का प्रयास किया गया कि ''उनके द्वारा टीवी देखते समय मेरे माता-पिता मुझे पढ़ने के लिए या कोई अन्य काम करने के लिए कहते हैं तो वे बुरा महसूस करते हैं'' पर छात्र-छात्राओं के विचारों को प्रश्नावली से अवलोकित करने पर पता चलता है कि 47% छात्र-छात्राओं के माता-पिता अथवा अभिभावक जब उन्हें टीवी देखने से मना करते हैं तो उन्हें बहुत ज्यादा बुरा लगता है। 13% छात्र-छात्राओं को ज्यादा, 11% छात्र-छात्राओं को कम तथा 29% छात्र-छात्राओं को साधारण बात जैसी लगती है जब उनके माता-पिता उन्हें टीवी देखते समय पढ़ने अथवा कोई अन्य काम करने के लिए कहते हैं। बच्चों से जब यह पूछा गया कि ''मैं फिल्मों की नकल अपनी असली जिन्दगी में करना चाहता हूं।'' तो प्रश्नावली से प्राप्त उत्तरों की सूची यह प्रदर्शित करती है कि 23% छात्र-छात्राएं बहुत ज्यादा, 29% ज्यादा तथा 21% छात्र-छात्राएं बहुत कम फिल्मों की नकल अपनी असली जिन्दगी में करना चाहते हैं। 27% छात्र एवं छात्राएं अपने उत्तरों से विदित कराया कि वे साधारण परिस्थितियांे में ही फिल्मों की नकल अपनी असली जिन्दगी में करना चाहते हैं।

''यदि कोई मेरे साथ लड़ाई-झगड़ा करता है तो मैं फिल्मों नाटकों की तरह मार-पीट कर अपनी बात मनवाना चाहता हूँ।'' इस प्रश्न के उत्तर में 43% छात्र-छात्राएं कम; 39% छात्र-छात्राएं साधारण स्थितियांे में किसी के साथ लड़ाई-झगड़ा होने पर फिल्मों की तरह मार-पीट कर अपनी बात मनवाना चाहते हैं। जबकि 10% छात्र छात्राएं

बहुत ज्यादा तथा 8% छात्र-छात्राएं ज्यादा समय ऐसा करते जब उनसे कोई लड़ाई झगड़ा करता है तो फिल्मी स्टाइल में उससे अपनी बात मनवाने का प्रयास करते हैं।

प्रायः बच्चे दूरदर्शन पर जो भी कार्यक्रम देखते हैं उसमें उनके अभिभावकों की सहमति रहती है। कुछ बच्चे ऐसे जरूर हैं जो कभी-कभी बिना माता-पिता अथवा अभिभावकों की रजामंदी के भी टीवी देख लिया करते हैं। बच्चों की प्रश्नावली में जब यह प्रश्न रखा गया कि ''मैं अपने माता-पिता के कहे अनुसार टीवी प्रोग्राम देखता हूं।'' उपरोक्त प्रश्नों के उत्तरों का अवलोकन करने पर पता चलता है कि 67% छात्र-छात्राएं अपने अभिभावकों के कहे अनुसार ही ज्यादा अथवा बहुत ज्यादा बात मानते हैं और उनकी इच्छा के अनुरूप टीवी देखते हैं। 23% छात्र-छात्राएं साधारण परिस्थितियों में तथा 10% छात्र-छात्राएं अपनी इच्छा के अनुसार टीवी देख लिया करते हैं।

बच्चों से जब यह पूछा गया कि-

1. वे फिल्म/नाटक में खलनायक की भूमिका पसंद करते हैं।

2. लड़ाई-झगड़े वाले प्रोग्राम/नाटक/फिल्म कम बनने चाहिए।

3. मैं अदले का बदला करना सही महसूस करता हूं।

4. फिल्म/नाटक में हीरो से ज्यादा गुण्डे से हमदर्दी रखता हूं।

उपरोक्त सभी प्रश्नों के उत्तरों का प्रश्नावली से विश्लेषण करने पर निम्नवत परिणाम प्राप्त हुआ-

मानक	समस्याएं			
	फिल्म/नाटक में खलनायक की भूमिका पसंद करने की स्थिति	लड़ाई-झगड़े वाले प्रोग्राम/नाटक फिल्म कम बननी चाहिए	हीरो से ज्यादा गुण्डे से हमदर्दी	अदले का बदला सही महसूस करना
बहुत ज्यादा	11%	14%	13%	19%
ज्यादा	14%	13%	11%	14%
साधारण	38%	26%	33%	41%
कम	37%	47%	43%	26%

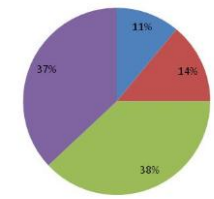

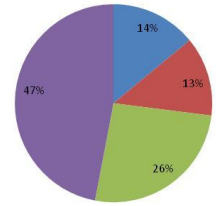

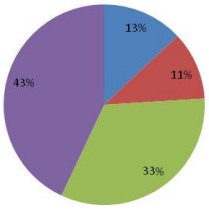

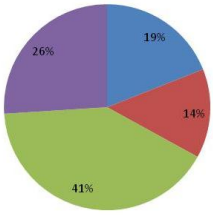

"दूरदर्शन पर लड़ाई-झगड़े (मारपीट) वाले प्रोग्राम आते हैं तो चैनल बदल देता हूं।" उक्त प्रश्न का परिणाम प्रश्नावली के अवलोकन से पता चलता है कि 83% छात्र-छात्राएं बहुत ज्यादा बार ऐसा करते हैं कि जैसे ही लड़ाई-झगड़े (मारपीट) वाले कार्यक्रम चैनल पर आते हैं वे टीवी चैनल बदल देते हैं। 13% छात्र-छात्राएं साधारणतया ऐसे प्रोग्राम देख लेते हैं जबकि 09% छात्र-छात्राएं यह स्वीकार करते हैं कि वे लड़ाई झगड़े वाले कार्यक्रम आने पर चैनल बहुत कम ही बदलते हैं।

दूरदर्शन टीवी भारत समाज में एक ऐसा मनोरंजक एवं ज्ञानवर्धक संसाधन है जिसका प्रदर्शन नियमित रूप से भारतीय बहुतायत परिवारों में किया जाता रहा है। वर्तमान समय में भी विभिन्न प्रकार के शैक्षिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम टेलीविजन पर प्रस्तुत किये जा रहे हैं जो समाज को एक उचित मार्गदर्शन में जीवन की उत्तम परिस्थितियां निर्मित करने का प्रयास कर रहे हैं।

शोधार्थी द्वारा प्राप्त करायी गयी प्रश्नावली में टीवी सीरियलों एवं धारावाहिकों, तथा विभिन्न प्रकार के चैनलों से बहुत से ज्ञानवर्धक कार्यक्रमों से संबंधित प्रश्नों पर छात्र-छात्राओं के व्यक्तिगत विचारों को प्राप्त किया गया। छात्र-छात्राओं के उत्तरों से शोधकर्ता इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि दूरदर्शन का प्रभाव बच्चों को कहीं से भी आक्रामकता की ओर नहीं ले जाता है। इसका परिणाम हमेशा से सकारात्मक ही रहा है।

घरेलू हिंसा:-

भारतीय जीवन शैली में परिवार एक अहम सामाजिक बंधन में बंधा हुआ संगठन है जो सभी सदस्यों को संस्कार एवं व्यवहार प्रदान करता है। परिवार ही दैनिक जीवन की इकाई माना जाता है। किसी भी परिवार में बालक-बालिका उनके माता-पिता तथा दादा-दादी का रिश्ता अमूमन देखने को मिलता है। बालकों के माता-पिता ही वास्तविक रूप से परिवार के संचालनकर्ता होते हैं। विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों में परिवार की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति की जिम्मेदारी इनके ही उपर रहती है। दैनिक, साप्ताहिक, पक्षिक, मासिक तथा वार्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विभिन्न प्रकार के कार्य, गतिविधियां, व्यवसाय आदि का संचालन बच्चों के माता-पिता को करना पड़ता है।

माता-पिता परिवार रूपी गाड़ी के दो पहिए होते हैं जिसमें दोनों का चलना (सक्रिय रहना) अति आवश्यक होता है। यदि दोनों में कोई एक रूक जाता है अथवा निष्क्रिय भूमिका पैदा करने लगता है तो परिवार में विभिन्न प्रकार की समस्याएं उत्पन्न होने लगती है। माता जहां गृहकार्य मंे दक्ष होती हैं और परिवार की भोजन, वस्त्र व अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति करती रहती है वहीं पर पिता आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए तत्पर रहते हैं। जब तक दोनों एकमत रहकर मधुर व्यवहार के साथ कार्य करते हैं परिवार खुशहाल रहता है और तनाव से कोसों दूर रहता है। परन्तु विभिन्न प्रकार के परिवारों में बच्चो के माता-पिता के बीच तालमेल नहीं हो पाता है। इन परिवारों में नित्य प्रति कुछ न कुछ अनबन होती रहती है। प्रायः लड़ाई-झगड़ा, मारपीट के साथ अन्य अप्रत्याशित घटनाएं भी दोनों के मध्य होती रहती है जिसे घरेलू हिंसा भी कहा जाता है। घरेलू हिंसा एक ऐसा अभिशाप है जो पूरे परिवार को कलंकित कर देता है। व्यक्ति सामाजिक परिवेश में अपने को अलग-थलग महसूस करने लगता है। समाज के लोग भी ऐसे परिवारों से दूरी बनाने लगते हैं। घरेलू हिंसा से पीड़ित परिवार के बच्चों के अन्दर भी हीन भावना आने लगती है। वे अपने साथी दोस्तों,

शिक्षकों, रिश्तेदारों से कट कर रहने के आदी होने लगते हैं जो उन्हें सामाजिक ढांचे से अलग करने का कारण बन जाती है।

घरेलू हिंसा सामान्यतया 4 प्रकार की होती है-

1. शारीरिक हिंसा, 2. सामाजिक हिंसा,

3. भावनात्मक हिंसा, 4. बौद्धिक हिंसा

(I). शारीरिक हिंसा:-

घर में कभी-कभी माता-पिता में अनबन हो जाने पर कहासुनी हो जाती है। बातों-बातों में स्थिति यदि बढ़ती गयी तो वे आपस में मार-पीट, गाली-गलौज, एवं धक्का-मुक्की भी करने लगते हैं। यही नहीं थप्पड़ मारना, चिकोटी काटना, दांत काटना, बाल खींचना, गन्दे-गन्दे शब्द बकना आदि प्रतिक्रियाएं भी एक-दूसरे के प्रतिक्रिया करते हैं।

किशोर छात्र एवं छात्राओं को दी गयी प्रश्नावली में जब घरेलू हिंसा के अंतर्गत शारीरिक हिंसा से संबंधित कुछ 16 प्रमुख बिन्दुओं पर उनकी प्रतिक्रिया जानने के लिए प्रश्न निर्माण कर प्रस्तुत किया गया तो बच्चों का निम्नलिखित रूप में विचार प्राप्त हुआ-

क्रमांक	शारीरिक हिंसा के प्रकार	स्थितियां		
		कभी-कभी	ज्यादा बार	कभी नहीं
1.	धक्का मारना	19%	66%	15%
2.	थप्पड़ मारना	22%	13%	65%
3.	मुक्का मारना	14%	18%	68%
4.	दांत काटना	22%	17%	61%
5.	चुटकी काटना	33%	61%	06%
6.	पैर मारना	46%	36%	18%
7.	डण्डा से मारना	22%	27%	51%
8.	एक-दूसरे पर सम्मान फेंकना	38%	21%	41%
9.	गला घोंटने की कोशिश	07%	03%	90%

	करना			
10.	खून निकाल देना	19%	11%	70%
11.	खाना नहीं देना	43%	37%	20%
12.	सिगरेट से जख्मी कर देना	11%	21%	68%
13.	झिंझोड़ना	39%	43%	82%
14.	बाल खींचना	19%	27%	54%
15.	गन्दे शब्द बोलना	42%	36%	22%
16.	धमकाना	21%	73%	06%

(II).. सामाजिक हिंसा:-

घरेलू हिंसा के समय बालक-बालिकाओं के माता-पिता कुछ ऐसी भी गतिविधियां करते हैं जो नहीं करनी चाहिए क्योंकि इन गतिविधियों से उनकी समाज में बदनामी होती है। माता-पिता द्वारा की गयी वह सभी अनैतिक गतिविधियां जिससे उनका सामाजिक पतन होता है, सामाजिक हिंसा के अंतर्गत आती है। कभी-कभी माता-पिता में विवाद की स्थिति सार्वजनिक स्थानों पर, घर के अन्य सदस्यों, रिश्तेदारों उनके मित्रों/सहेलियों के सामने घटित हो जाती है। गुस्से में वे एक-दूसरे पर आरोप-प्रत्यारोप करते हैं, विभिन्न प्रकार की भली-बुरी बातें भी ऐसे समय पर एक-दूसरे के बारे में करते हैं। इन क्रिया-कलापों से माता-पिता की स्थिति समाज में अच्छी न होकर दिन ब दिन खराब होती जाती है। समाज इनको गिरी निगाहों से देखने लगता है। ऐसे परिवारों के बच्चे किशोरावस्था तक पहुंचते-पहुंचते अपने को समाज में कुछ अलग ही महसूस करने लगते जो शायद उनके लिए अच्छा नहीं लगता। उक्त विचारों के दृष्टिगत शोधकर्ता ने प्रश्नावली में माता-पिता द्वारा सामाजिक हिंसा से संबंधित क्रिया-कलापों पर जानकारी एकत्र की है जिसका विवरण निम्नांकित रूप में प्रस्तुत है- ''तुम्हारे माता पिता या पिता माता के साथ बुरा व्यवहार करते हैं'' यथा-

क्रमांक	सामाजिक हिंसा के प्रकार/रूप	कभी-कभी	ज्यादा बार	कभी नहीं
1.	सार्वजनिक स्थानों पर	16%	09%	75%
2.	घर के सदस्यांे के सामने	29%	41%	30%
3.	रिश्तेदारों के सामने	21%	36%	43%
4.	पड़ोसियों के सामने	33%	21%	46%
5.	मित्रों/सहेलियों के सामने	24%	37%	39%

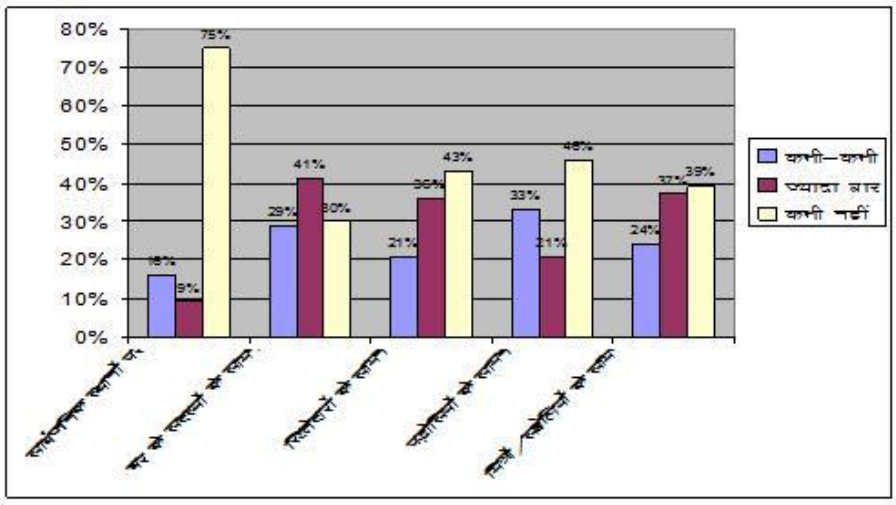

(III) भावनात्मक हिंसाः-

घर में कभी-कभी पारिवारिक संबंधों में इसलिए भी कड़वाहट आ जाती है जब वे आपस में एक-दूसरे का सम्मान नहीं करते हैं। माता-पिता में भी यह बातें सामान्यतया दिखाई देती हैं। कभी-कभी कतिपय कारणोंवश माता-पिता के बीच एक-दूसरे को प्यार नहीं कर पाते हैं अथवा एक-दूसरे की इज्जत नहीं कर पाते हैं तो उनके बीच तनाव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि किसी अच्छे कार्य संपादित करने के बाद भी उनकी प्रशंसा नहीं की जाती है तो वे भावनात्मक हिंसा से ग्रसित हो जाते हैं क्योंकि मानव स्वभाव प्रशंसा, प्रोत्साहन एवं पुरस्कार का प्रेमी होता है किसी कार्य के प्रति यदि उसका सम्मान बढ़ा दिया जाए उसे किसी भी प्रकार का प्रोत्साहन/प्रशंसा प्रदान कर दिया जाता है तो उसे असीम खुशी प्राप्त होती है और वह नवीन ऊर्जा के साथ अपने कार्य को और बेहतर ढंग से करने का प्रयत्न करता है। इसी प्रकार से कई ऐसी परिस्थितियां है जब माता-पिता आपस में भावनात्मक हिंसा के शिकार हो जाते हैं। प्रस्तुत शोध में तुम्हारे माता-पिता के साथ या पिता-माता के साथ-

1. प्यार और इज्जत नहीं देते हैं।

2. प्रशंसा नहीं करते हैं।

3. ध्यान नहीं देते हैं या हमदर्दी नहीं रखते हैं

4. सहारा नहीं देते हैं

5. खुशी की बात या हंसी मजाक नहीं करते हैं

उक्त प्रश्नों के प्रत्युत्तर का अवलोकन करने पर जो रूझान बच्चों द्वारा प्राप्त हुआ है वह निम्नलिखित रूप में प्रदर्शित किया जा रहा है-

क्रमांक	भावनात्मक हिंसा के प्रकार/रूप	कभी-कभी	ज्यादा बार	कभी नहीं
1.	माता-पिता अथवा पिता-माता को प्यार और इज्जत नहीं देते	08%	13%	79%
2.	प्रशंसा नहीं करते	25%	11%	64%

3.	ध्यान नहीं देते या हमदर्दी नहीं रखते हैं	33%	09%	58%
4.	सहारा नहीं देते हैं	22%	07%	71%
5.	खुशी की बात या हंसी मजाक नहीं करते हैं	12%	12%	76%

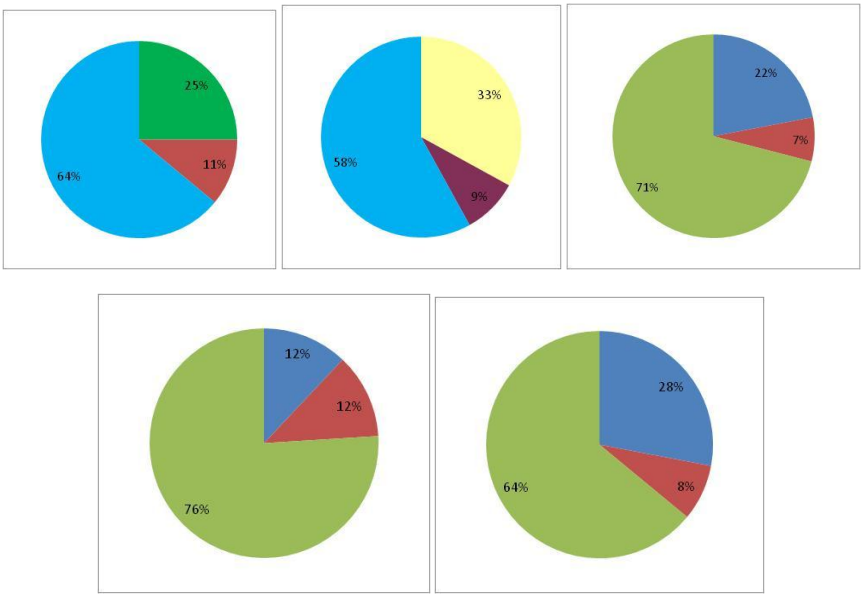

(IV) बौद्धिक हिंसा:-

किसी भी परिवार में उसके सभी सदस्यों के बीच में सलाह मशविरा तथा विचारों का आदान-प्रदान किया जाना बहुत ही महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि आपसी सलाह मशविरा अथवा विचार-विमर्श से कोई भी निर्णय अपनी पूर्णता को प्राप्त करता है। बिना सलाह-मशविरा के कभी-कभी अच्छा कार्य भी खराब स्थिति में पहुंच जाता है। प्रायः हम जिस परिवेश में रहते हैं वह दो भागों में विभाजित किया गया है ;पद्ध शहरी परिवेश, ;पपद्ध ग्रामीण परिवेश। चूंकि यह शोधकार्य गाजीपुर जनपद के शहरी विद्यालयों से संपादित किया जा रहा है जहां अधिकांश छात्र-छात्राएं शहर से संबंधित है। शहरी परिवेश में आधुनिकीकरण, जनसंख्या का तीव्र गति से विकास और रोजगार तथा मूलभूत आवश्यकताओं की उपलब्धता पायी जाती है। ऐसे में यहां निवास करने वाले छात्र-छात्राओं के माता-पिता निश्चित रूप से विभिन्न गतिविधियों क्रियाकलापों के आयोजन से पूर्व

विचारों का आदान प्रदान किया करते हैं। कभी-कभी कुछ जानकारियां भी आपस में साझा किया करते हैं। उक्त को दृष्टिगत रखते हुए घरेलू हिंसा से संबंधित प्रश्नावली में बौद्धिक हिंसा के क्रम को निम्नांकित 6 प्रश्न छात्र छात्राओं के समक्ष रखा गया-

क्या तुम्हारे माता-पिता के साथ अथवा पिता-माता के साथ

1. सलाह मशविरा नहीं करते हैं?
2. विचारों का आदान-प्रदान नहीं करते हैं?
3. कोई भी जानकारी लेते या देते नहीं हैं?
4. हर बात पर बहस करते हैं?
5. घर के खास मसलों पर राय नहीं लेते हैं?
6. अपनी समस्याओं का हल नहीं पूछते हैं?

उपरोक्त प्रश्नों के प्रश्नावली द्वारा प्राप्त उत्तर निम्नवत परिणाम प्रदर्शित करते हैं-

क्रमांक	बौद्धिक हिंसा के प्रकार/रूप	कभी-कभी	ज्यादा बार	कभी नहीं
1.	सलाह मशविरा नहीं करते हैं।	28%	08%	64%
2.	विचारों का आदान प्रदान नहीं करते हैं।	16%	12%	72%
3.	कोई भी जानकारी लेते या देते नहीं है।	17%	24%	59%
4.	हर बात पर बहस करते हैं।	11%	11%	78%
5.	घर के खास मसलों पर राय नहीं लेते हैं।	17%	19%	64%
6.	अपनी समस्याओं का हल नहीं पूछते है।	10%	14%	76%

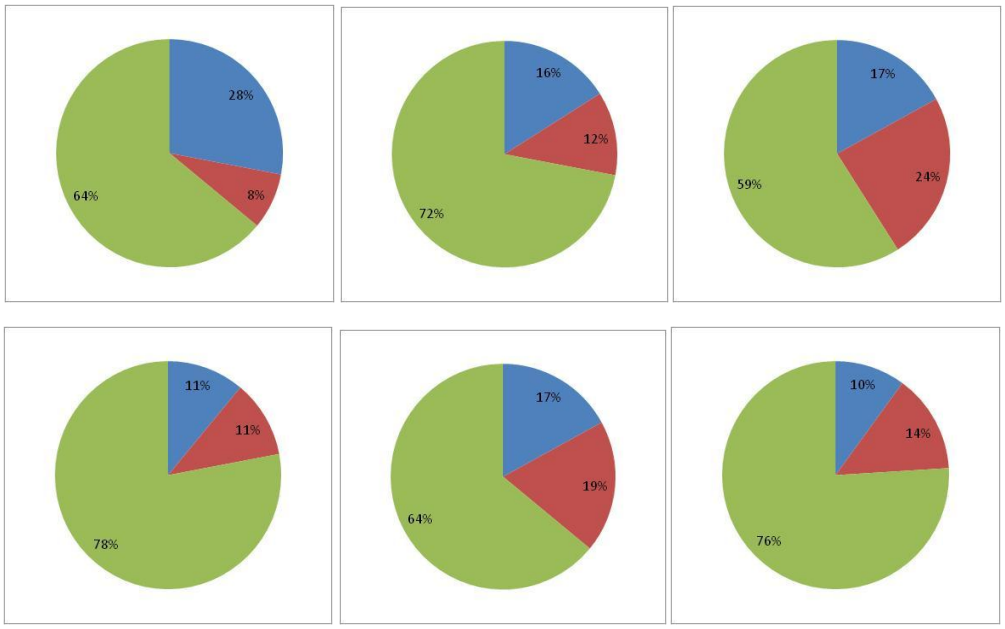

जैसा कि प्रश्नावली प्रदर्शित करती है कि छात्र-छात्राओं से घरेलू हिंसा पर उनके विचार जानने का प्रयास किया गया है। छात्रों के परिवार में क्या-क्या मंथन हो रहा है कैसी विचारधाराएं इनके परिवारों में उत्पन्न होती हैं कि जानकारी प्राप्त करने की कोशिश की गयी यह भी जानने का प्रयत्न किया गया कि उक्त परिवारों कितना और क्या-क्या प्रभाव बच्चों पर पड़ रहा है।

जहां तक वर्तमान परिवारों का प्रश्न है आज का परिवार बड़ी विषम परिस्थितियांे से जूझ रहा है। परिवार के बड़े बुजुर्गों का आचरण बालकों पर असर डालने लगा है। आज के अधिकांश माता-पिता स्वयं के बारे में इतने चिंतित रहते हैं कि उनहें चाहते हुए भी बालक के संतुलित विकास हेतु कुछ करने का अवसर ही नहीं मिलता। बड़े-बड़े शहरनों में माताओं को नौकरी आदि करने तथा गांव की महिलाओं का खेती व अन्य कार्यों में व्यस्त रहना बालकों को मातृत्व के उचित आश्रय से वंचित कर दे रहा है। बजाय इन परिस्थितियों के छात्राओं एवं छात्रों को अपने परिवारों से अभिन्न प्रेम व लगाव है वे अपनी तमाम समस्याओं को अपने तरह से पूरित करने का प्रयत्न करते हैं क्योंकि किशोरावस्था इन समस्याओं को बहुत तवज्जो नहीं देती है। अर्थात् निष्कर्षतः बालक बालिकाओं पर घरेलू हिंसा का बहुत प्रभाव नहीं पड़ता है वे घरेलू हिंसा के कारणों से आक्रामक नहीं बनते हैं जैसा शोध प्रश्नावली द्वारा भी प्रदर्शित हो रहा है।

(4) किशोर-किशोरियों का व्यवहार**,** अनुभूति एवं क्रियाएं**:-**

शिक्षाविदों का मानना है कि किशोरावस्था में बुद्धि का विकास पूर्ण हो चुका होता है। शायद इसीलिए किशोरावस्था को बुद्धि में स्थिरता लाने वाली अवस्था भी कहा जाता है। इस अवस्था में बालक और बालिकाओं मंे विभिन्न प्रकार की मानसिक शक्तियां यथा-संवेदना, प्रत्यक्षीकरण, अवधान स्मृति विस्मृति, कल्पना, चिंतन तर्क और समस्या समाधान का पूर्णतया विकास हो चुका होता है। किशोर-किशोरियों में चिंतन में नवीनता एवं स्वाभाविकता का आना प्रारंभ हो जाता है। इस उम्र में वे सामाजिक रूढ़ियों, परम्पराओं, रीति-रिवाजों एवं अंधविश्वासों आदि का विरोध करता है और कुछ नये मापदण्डों का प्रयोग भी युवाओं द्वारा किया जाता है।

किशोरावस्था में कल्पनाशक्ति का बाहुल्य रहता है। कभी-कभी वे अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए दिवास्वप्न भी देखा करते हैं। जहां तक कल्पनाशक्ति का प्रश्न है इसके द्वारा युवाओं को सही मार्गदर्शन देकर उन्हें कला, संगीत, खेल, साहित्य अथवा अन्य किसी भी क्षेत्र में रचनात्मक कार्यों में सफलता दिलाया जा सकता है। शिक्षाविदों का मानना है कि कल्पनाशक्ति की प्रचुरता बालिकाओं में बालकों की अपेक्षा अधिक पायी जाती है। उक्त बिन्दुओं के अतिरिक्त किशोरावस्था में रूचियों का विकास भी बड़ी ही तीव्र गति से होता है।

किशोरावस्था में युवाओं में संवेगात्मक विकास भी बड़ी तीव्र गति से होता है। प्रायः यह उम्मीद की जाती है कि किशोरावस्था में प्रवेश करने पर किशोर एवं किशोरियां अनुशासित जीवन व्यतीत करेंगे परन्तु ऐसा शायद देखने को बहुत कम ही मिल पाता है। किशोरावस्था में स्थायित्वता, व्यक्तित्व निर्माण, सामाजिक सम्मान, चेतना और जागरूकता, काम प्रवृत्ति की तीव्रता, व्यावहारिक अस्थिरता जैसे महत्वपूर्ण संवेगात्मक विकास को प्रभावित करने वाले कारक भी उत्पन्न हो जाते हैं। इन कारकों में बालक-बालिकाओं का स्वास्थ्य, उनका परिवार, उनके माता-पिता एवं अभिभावकों का व्यवहार, परिवार की निर्धनता, उनके प्रति उनके शिक्षकों का व्यवहार, विद्यालय का वातावरण, मानसिक योग्यता, माता-पिता की सामाजिक स्थिति, साथी दोस्तों के प्रति एक-दूसरे का व्यवहार, उनकी कार्यशैली एवं थकान की अवस्था आदि प्रमुख हैं।

यह सर्वविदित तथ्य है कि किशोरावस्था मानवीय जीवन की अनोखी अवस्था होती है। इस अवस्था का बालक-बालिकाओं के सामाजिक विकास पर अत्यंत ही महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। किशोरावस्था में आत्म प्रेम, समलिंगीय समूह जैसी प्रवृत्तियां प्रबल हो जाती है। इस अवस्था में सामाजिक चेतना का उदय यथा - समूह भावना तथा आस्था और त्याग का व्यापक रूप देखने को मिलता है।

किशोरावस्था में छात्रों में कतिपय व्यवहारों में विसंगतियां भी उत्पन्न हो जाती हैं। इस अवस्था में इनके मानवीय संबंधों में अस्थिरता, शारीरिक आवेग एवं तनाव की स्थिति प्रायः कम होने लगती है और मित्रता के व्यवहार के प्रति स्थिर होने लगते हैं। किशोरावस्था में संवेगों की तीव्र अभिव्यक्ति होती हो युवा अपनी इच्छाओं और आकांक्षाओं को निश्चित मापदण्डों के बिना पूरा करना चाहते हैं जिसको समाज कभी मान्यता नहीं देता हो ऐसी स्थिति में युवा अपना समायोजन सही रूप में नहीं कर पाते हैं। कभी-कभी ऐसा भी देखने को मिलता है कि किशोर व किशोरियां वे अपने दमन अथवा स्वतंत्रता हनन के प्रति विद्रोह की स्थिति में आ जाते हैं। सामाजिक दायरे में रहकर छात्र-छात्राएं अपनी किशोरावस्था में समूह के माध्यम से भी बहुत कुछ सीखते हैं। समाजशास्त्री हरलाक महोदय का भी मानना है कि समूह के प्रभाव के कारण बालक सामाजिक व्यवहार का ऐसा महत्वपूर्ण प्रशिक्षण प्राप्त करता है जो समाज द्वारा निश्चित की गयी दशाओं में उतनी कुशलता से प्राप्त नहीं किया जा सकता है।

निष्कर्षतः यह कहना है कि छात्र-छात्राओं को किशोरावस्था में विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। इनके व्यक्तित्व के विकास सामाजिक, मानसिक एवं मनोगत्यात्मक विकास को बहुत से कारक प्रभावित करते हैं। उपरोक्त के अतिरिक्त परिवार के रीति रिवाज, धार्मिक संस्थाएं, भाषा, फिल्म, नाटक, कहानी, रेडियो, दूरदर्शन, समाचार पत्र पत्रिकाएं, राष्ट्रीय पर्व, शिक्षा के अनौपचारिक कई साधन तथा विभिन्न प्रकार की सामाजिक प्रतियोगिताएं भी इनके व्यक्तित्व, में परिवर्तन लाती हो इस शोध में किशोरों के दैनिक जीवन से जुड़ी विभिन्न प्रकार की अनुभूतियां क्रियाएं एवं व्यवहार की जानकारी प्राप्त किये जाने के क्रम में प्रश्नावली के चतुर्थ भाग में कुछ प्रमुख वक्तव्यों को दिया गया जिसका उत्तर छात्र-छात्राओं को सही और गलत के रूप में प्रदर्शित किया गया है। यहां प्रश्नावली के उन्हीं वकत्वयों का अभिलेखीय विश्लेषण करने का प्रयास शोधार्थी द्वारा किया जा रहा है।

प्रश्नावली में छात्र छात्राओं की अनुभूति क्रिया एवं व्यवहार से संबंधित प्रथम प्रश्न कि ''किसी के द्वारा पहले प्रहार करने पर भी शायद ही कभी मैं बदले में हाथ उठाता हूँ।'' के जवाब में 83% छात्र छात्राओं ने सही करार दिया है जबकि 17% छात्र-छात्राएं उपरोक्त प्रश्न को गलत स्वीकार किया हो।

''जिन्हें मैं पसन्द नहीं करता, उनके बारे में कभी कभी अफवाहें फैलाता हूँ।'' जैसे प्रश्न कि छात्र-छात्राओं का जहां 67% समुदाय सही मान रहा है वही 33% छात्र-छात्राओं का जवाब सही में प्राप्त हुआ। अर्थात् एक तिहाई छात्र-छात्राओं का समुदाय इस बात को स्वीकार नहीं करता कि वे अपने नापसंद के व्यक्तियों के बारे में किसी भी प्रकार की अफवाहें फैलायी जाय। छात्रों से प्रश्नावली के माध्यम से जब यह पूछा गया कि किसी द्वारा दिये गये कार्य को किस प्रकार से किया करते हैं अर्थात् किसी के दायित्व बोध के प्रति उनका नजरिया क्या है? प्रश्न कुछ इस प्रकार से दिया गया जब तक कि कोई मुझे अच्छे ढंग से नहीं कहे, मैं वह नहीं करूंगा, जो वह चाहता है।'' उक्त पर छात्रों की प्रतिक्रिया 46% यह स्वीकार करती है अर्थात् कथन को सत्य मानती है जबकि 54% छात्र-छात्राओं की प्रतिक्रिया वक्तव्य के विपक्ष में ही प्रदर्शित हो रही है।

छात्रों को यह वक्तव्य दिया गया कि ''मुझे जल्द ही गुस्सा आता है लेकिन उस पर तुरंत ही काबू पा लेता हूँ'' के प्रत्युत्तर में 34% छात्र-छात्राएं इसे गलत मानते हैं जबकि 66% छात्र-छात्राओं का विचार इसकी सत्यता को परिलक्षित करता है। इसी प्रकार जब प्रश्नावली में यह प्रश्न रखा गया कि ''मेरे साथ क्या होने वाला है, मैं नहीं समझ पाता।'' पर छात्रों के रूझान सत्य एवं असत्य के प्रति लगभग आधा-आधा प्राप्त हुआ। प्रायः यह देखा भी गया है अचानक ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न हो जाती हो कि व्यक्ति नहीं समझ पाता कि उसके साथ क्या होने वाला है। इसको वही व्यक्ति भांप पायेगा जो पूर्व से ही ऐसी स्थितियों के लिए सजग और तत्पर रहता है।

युवाओं में दोस्तों के प्रति रूझान की भावना अधिक प्रबल होती है। वे एक-दूसरे से भावनात्मक रूप से जुड़कर अपने हित एवं अहित के बारे में काफी सजग हो चुके होते हैं। अपने मित्र की कुशलता की कामना-प्रत्येक युवा के अंदर पायी जाती है। प्रत्येक युवा चाहता है कि उनका मित्र कभी अनुचित व्यवहार न करे। हालंाकि वह अपने मित्र को अनुचित व्यवहार किये जाने पर कभी कभी टोकना भी चाहता है परन्तु कतिपय परिस्थितियों में ऐसा नहीं कर पाते हैं। प्रश्नावली में यह पूछे जाने पर कि ''जब मैं दोस्तों

के व्यवहार को अनुचित समझता हूँ तो स्पष्ट रूप से कह देता हूँ।'' छात्र-छात्राओं के जवाब से पता चलता है कि 39% छात्र-छात्राएं ही ऐसे हैं जो इस वक्तव्य को सही ठहराते हैं और अधिकांश छात्र-छात्राएं (61%) इसे गलत ठहराते हैं अर्थात् वे ऐसा नहीं कर पाते हैं।

बच्चों से यह पूछा गया कि मित्रों को या अन्य किसी व्यक्ति को धोखा देना किसी प्रकार से ठीक नहीं होता है या तुम यह कभी सोचते हो कि जब मैंने कभी धोखा दिया है तो मुझे असह्य पश्चाताप हुआ है। उक्त वक्तव्य पर छात्र-छात्राओं का सही अथवा सकारात्मक उत्तर 81% प्राप्त हुआ है और 19% छात्र-छात्राओं ने नकारात्मक उत्तर दिया है। ''कभी-कभी मैं दूसरों को हानि पहुँचाने की इच्छा पर नियंत्रण नहीं कर पाता हूँ।'' पर प्रश्नावली इंगित करती है कि 39% छात्र-छात्राएं ऐसा नहीं कर पाते हैं जबकि 61% छात्र-छात्राएं उक्त वक्तव्य से पूर्णतया सहमत है।

एक महत्वपूर्ण वक्तव्य कि ''गुस्से में कभी मैं इतना पागल नहीं हो जाता कि चीजों को उठाकर फेंकने लगूँ।'' गुस्से में प्रायः व्यक्ति बेकाबू हो जाता है किशोरावस्था मे गुस्सा करना निःसंदेह युवाओं में कुछ ज्यादा ही होता है परन्तु ऐसा गुस्सा कि लोग पागलों की तरह चीजों को उठाकर फेंकने लगे शायद कभी-कभी ही कोई व्यक्ति करता है। यही स्थिति छात्र-छात्राओं की प्रश्नावली भी प्रदर्शित करती है। प्रश्नावली बताती है कि 87% बालक बालिकाएं ऐसा नहीं कर पाते हैं जबकि 13% छात्र-छात्राओं का मानना है कि वे इस वक्तव्य से सहमत हैं।

''कभी-कभी मेरे आस-पास लोगों के इकट्ठा होने पर मुझे चिढ़ होती है।'' इस वक्तव्य पर प्रश्नावली बताती है अधिकांश लोग इस प्रवृत्ति केे होते हैं जो एकल रहना अधिक पसंद करते हैं। उन्हें भीड़ भाड़ भरा वातावरण पसंद नहीं है। परन्तु कुछ लोग ऐसे भी हैं जिन्हें भीड़ भाड़ अधिक पसंद है। प्रश्नावली का उत्तर निम्न लिखित रूप से प्राप्त हुआ-

सत्य - 87%

असत्य - 13%

छात्र-छात्राओं की पसंद और नापसंद पर भी जानने का प्रयास इस शोध के माध्यम से करने का प्रयत्न किया गया है। बच्चे अपने पसंद की वस्तुओं को जहां पाना

चाहते हैं वहीं वे अपनी नापसंद वस्तुओं को अपने से दूर करना चाहते हैं। प्रश्नावली में प्रदत्त वक्तव्य ''जो मुझे पसंद नहीं है मुझे उसे तोड़ने की इच्छा होती है।'' इस वक्तव्य को 73% छात्र-छात्राओं ने सही ठहराया है जबकि 27% छात्र-छात्राएं इसे गलत मानते हैं। ''मुझे ऐसा लगता है कि दूसरे लोग मुझसे हमेशा जीत जाते हैं।'' पर शोध प्रश्नावली के अवलोकन से पता चलता है कि 46% लोग इस वक्तव्य के पक्षधर हैं अर्थात् इसे सत्य मानते हैं जबकि 54% लोग इस वक्तव्य से सहमत नहीं है। सतर्कता पर विशेष दृष्टि रखते हुए एक वक्तव्य ''मैं ऐसे लोगों से हमेशा सतर्क रहता हूँ जिनका मेरे साथ व्यवहार आशा से अधिक मित्रतापूर्ण होता है।'' कभी कभी ऐसा भी देखा जाता है कि जिन लोगों से मित्रतापूर्ण व्यवहार काफी अधिक होता है। उनसे हानि की सम्भावना प्रबल रहती है। अतः इस स्थिति में ऐसे मित्रों से सावधान होना अत्यंत आवश्यक हो जाता है। प्रश्नावली द्वारा विदित होता है कि उपरोक्त वक्तव्य 77% लोगों द्वारा सही माना गया है जबकि 23% लोग इसे गलत स्वीकार करते हैं।

समाज में कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जिनकी विचारधारा लोगों से इतर रहती है वे हमेशा लोगों की बातों पर अपनी असहमति जताते हैं। जबकि लोगों को चाहिए कि सर्वप्रथम बातों अथवा विचारों का गहराई से अध्ययन करके ही उसपर अपनी असहमति व्यक्त करनी चाहिए। यहां प्रश्नावली बताती है कि 69% छात्र-छात्राएं अपनी सहमति नहीं स्वीकार करते हैं जब उनके सामने यह वक्तव्य रखा गया कि ''दूसरों से अक्सर मेरी असहमति रखती है।'' प्रश्नावली के उत्तर से यह भी पता चलता है कि 31% छात्र-छात्राएं इस वक्तव्य को स्वीकार नहीं करते हैं।

''कभी-कभी मेरे मन में बुरे विचार आते हैं जिससे मैं लज्जित महसूस करता हूँ।'' निश्चित रूप से ऐसा प्रत्येक व्यक्ति अथवा किशोर-किशोरियों के साथ होता होगा। और यही जानने का प्रयत्न भी इस प्रश्नावली के माध्यम से किया गया है। प्रश्नावली से प्राप्त छात्र-छात्राओं का रूझान कहता है कि 76% छात्र-छात्राएं इस वक्तव्य को सही मानते हैं जबकि 24% छात्र-छात्राएं इसे गलत मानते हैं। इसी प्रकार प्रश्नावली में वक्तव्य दिया गया कि ''मैं दूसरों पर कभी प्रहार करने का कोई उचित कारण नहीं सोच पाता हूँ'' तो छात्र-छात्राओं ने इस वक्तव्य को सही ठहराते हुए 81% सकारात्मक स्वीकृति प्रदर्शित की। मात्र 19% छात्र-छात्राओं ने माना कि दूसरों पर कभी प्रहार करने का उचित कारण वे सोच पाते हैं।

व्यक्तियों में क्रोध का आना एक स्वाभाविक प्रक्रिया होती है जब भी व्यक्ति के मन के विपरीत उसकी इच्छा के प्रतिकूल कोई परिस्थिति बनती है तो उसे गुस्सा आ जाता है। गुस्से में व्यक्ति या तो बहुत क्रोधित होकर भला-बुरा कहने लगता है अथवा कभी-कभी ऐसा भी होता है कि व्यक्ति चुप रह जाता है। हालांकि चुप रह जाना बड़ा ही जटिल कार्य है जबकि व्यक्ति क्रोध की अवस्था में रहता है। यहां पर जो वक्तव्य छात्र-छात्राओं को प्रदान किया गया वह इसी विषय वस्तु से संबंधित है यथा- ''जब में क्रोधित होता हूँ तब कभी कभी चुप हो जाता हूँ।''

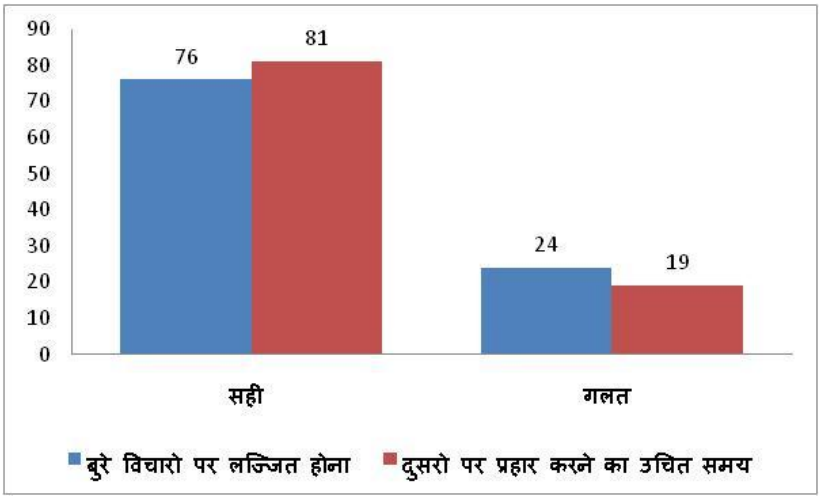

उपरोक्त वक्तव्य निश्चित रूप से व्यक्ति के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है क्योंकि यह स्थिति ही बहुत जटिल है। छात्र-छात्राओं का उत्तर बताता है कि 43% किशोर-किशोरियां ही ऐसे हैं जो क्रोधित होने पर चुप हो जाने की बात को स्वीकार करते हैं साथ ही एक बड़ी संख्या अर्थात् 57% छात्र-छात्राएं इस तथ्य को स्वीकार नहीं करते हैं। अग्रांकित वक्तव्य ''जब कोई रौब दिखाकर काम लेना चाहता है तो मैं उसकी इच्छा के विपरीत काम करता हूँ।'' के बारे में छात्र-छात्राओं की परिस्थितियां उल्लेखित करती हैं कि कोई भी युवा कदापि नहीं चाहता कि वह किसी के रौब दिखाने पर काम करे। क्योंकि युवावस्था/किशोरावस्था अपने आपमें स्वयं एक रौबदार स्थिति होती है वह किसी के दबाव को सहन कर सकती है। उक्त प्रश्नावली के वक्तव्य के समर्थन में 74% छात्र छात्राओं ने अपने को अग्रांकित किया है और 26% छात्र-छात्राओं ने स्वीकार किया कि दिया गया वक्तव्य उनके अनुसार गलत है।

मानव स्वभाव विभिन्न तरीकों से अपने को समायोजित करने का प्रयत्न करता है। व्यक्ति के सामने आने वाली चुनौतियां उसकी मनोदशा को रूपांतरित कर देती है। युवाओं के विचारों को परखने के लिए प्रश्नावली में दिये गये वक्तव्य ''लोग जितना सोचते हैं उससे कहीं ज्यादा खीझ मुझे होेती है'' को 63% छात्र-छात्रा सही मानकर अपना मत व्यक्त किये जबकि 37% छात्र-छात्राओं ने इसे गलत मानते हुए इसके विपक्ष में अपना उत्तर प्रस्तुत किया। व्यक्ति की भावनाएं एवं उसकी अंतरात्मा की मनोवृत्ति सदैव उदारता को परिलक्षित करनी चाहिए परन्तु समाज में विभिन्न प्रकार के लोग पाये जाते हैं जो किसी भी व्यक्ति से नफरत करने लगते हैं अर्थात् सामाजिक व्यवहारों में दो प्रकार के व्यक्ति पाये जाते हैं (एक) ऐसे लोग जो प्रत्येक व्यक्ति के साथ प्रेम एवं सौहार्द्र की भावना रखते हैं और हमेशा लोगों के प्रिय होते हैं। (दो) ऐसे लोग जो किसी भी व्यक्ति के साथ हमदर्दी नहीं रखते बल्कि नफरत करते हैं। उक्त के परिप्रेक्ष्य में दिये गये वक्तव्य ''मैं ऐसे किसी व्यक्ति को नहीं जानता जिससे मैं बिल्कुल नफरत करता हूँ।'' के उत्तर में 59% छात्र-छात्राओं ने इस वक्तव्य को सही करार दिया है और 41% छात्र छात्राओं ने वक्तव्य को सिरे से खारिज कर दिया।

''मुझे ऐसा लगता है कि ऐसे बहुत से लोग हैं जो मुझे बिल्कुल पसंद नहीं करते।'' सामान्यतया व्यक्ति को ऐसा लगता जरूर है परन्तु होता बिल्कुल नहीं। व्यक्ति के अंदर किसी क्रिया अथवा प्रतिक्रिया पर लोगों की भावनाएं सर्वथा प्रतिकूल ही नहीं रहती है बल्कि बहुत बार अनुकूल परिस्थिति भी बनती है। लोग व्यक्ति विभिन्न मानकों के आधार पर पसंद करते हैं। यही बातें बालक-बालिकाओं द्वारा दिये उत्तरों से भी पता चलता है क्योंकि वक्तव्य को सही मानने वाले लोग मात्र 31% है जबकि गलत की श्रेणी में 69% लोग अपनी सहमति प्रदान किये हैं।

कतिपय परिस्थितियां ऐसी भी उत्पन्न हो जाती हैं जब व्यक्ति को लगता है कि लोग उसकी बातों से सहमत नहीं हो पा रहे हैं। साधारणतया हर व्यक्ति यह सोचता है कि लोग उसकी बातों को पसंद करें भले ही वह उसके लिए फलदायी न रहे। जाहिर सी बात है कि कोई भी व्यक्ति अपनी पसंद नापसंद का स्वामी होता है, यदि उसे बात समझ में नहीं आ रही है अथवा उसका हित नहीं सध पा रहा है तो वह असहमत हो जाता है। प्रश्नावली के उत्तरों से ज्ञात होता है कि इन परिस्थितियों से संबंधित वक्तव्य ''जब लोग मेरी बातों से असहमत होते हैं तो बहस करने से मैं अपने आपको नहीं रोक सकता'' को

सही पर सहमति देने वाले 34% छात्र-छात्राएं मिले जबकि अपनी असहमति प्रदान करने वाले छात्र छात्राओं की संख्या 66% प्राप्त हुई। एक अन्य वक्तव्य यथा- ''जो लोग काम करने से जी चुराते हैं उन्हें अपने आपको अवश्य दोषी समझना चाहिए'' पर छात्र-छात्राओं ने बताया कि उनकी बहुलता/बहुतायत संख्या वक्तव्य के पक्ष में है अर्थात् 76% छात्र छात्राओं ने सही स्वीकार किया है। 24% छात्र छात्राओं ने इस तथ्य/वक्तव्य को गलत स्वीकार करने में अपनी सहमति जतायी है। ''जब क्रोध से मैं पागल हो जाता हूँ तो कभी-कभी दरवाजों को धड़ाक से बंद करता हूँ।'' बहुत से किशोर किशोरियां ज्यादातर ऐसी प्रवृत्ति के शिकार हो जाया करते हैं क्योंकि वे अपने गुस्से पर शायद काबू नहीं कर पाते हैं। यह स्थिति इसलिए स्वीकार किया जा रहा है क्योंकि 84% छात्र छात्राओं ने इस वक्तव्य को सही माना है। वक्तव्य को न मानने अथवा गलत की श्रेणी में रखने वाले छात्र छात्राओं की संख्या मात्र 16% ही प्राप्त है।

व्यक्ति को हमेशा धैर्यवान होना चाहिए। जब भी कठिन परिस्थितियों से उसका सामना पड़ता है तो उसे घबराना नहीं चाहिए बल्कि धैर्यपूर्वक अपने कार्य संपादित करना चाहिए। कभी-कभी ऐसी परिस्थितियां आ जाती हैं जब कोई व्यक्ति किसी समस्या से जूझ रहा होता है तो साथी, मित्र अथवा सहयोगी व्यक्ति को चाहिए कि वह धैर्यपूर्वक यथासंभव उसकी सहायता करने में अपनी भूमिका का निर्वहन करें। उक्त के दृष्टिगत दिये गये वक्तव्य ''मैं दूसरों के प्रति हमेशा धैर्य से काम लेता हूँ।'' को 84% छात्र छात्राएं सही करार देते हैं जबकि 16% छात्र छात्राएं इसे सिरे से नकार में कोई संकोच नहीं करते हैं। इसी तरह एक वक्तव्य कि ''कभी-कभी जब किसी पर बहुत क्रुद्ध होता हूं तो चुप्पी साध लेता हूँ।'' के प्रत्युत्तर में छात्र का जवाब वक्तव्य संख्या 17 में प्राप्त उत्तर से ही मिल चुका है जिसमें 43% छात्र-छात्राएं सही और 57% छात्र छात्राएं गलत स्वीकार करते हैं। इसी प्रकार ''जब मैं गौर करता हूँ कि मुझ पर क्या बीती है तो थोड़ा खिन्न हो जाता हूँ।'' के उत्तर में 63% छात्र छात्राएं इसे सही मानते हैं जबकि 37% छात्र छात्राएं गलत के रूप में स्वीकार करते हैं। वक्तव्य यह कि ''मुझे लगता है कि बहुत से ऐसे लोग हैं जो मुझसे इष्र्या करते हैं'' का उत्तर उस वक्तव्य से बिल्कुल मिलता हुआ प्राप्त हुआ जो वक्तव्य क्रमांक 21 ''मुझे ऐसा लगता है कि ऐसे बहुत से लोग हैं जो मुझसे नफरत करते हैं।'' इस वक्तव्य को जहां सही मानने वाले 31% छात्र छात्राएं हैं वहीं 69% छात्र छात्राएं वक्तव्य को गलत की श्रेणी मे रखते हैं।

इसी प्रकार ‘‘जो कोई भी मुझको या मेरे परिवार को अपमानित करता है, वह मुझसे लड़ाइयां मोल लेना चाहता है।‘‘ किसी भी व्यक्ति के साथ या उसके परिवार के किसी सदस्य के साथ किसी भी दशा में अपमानित किया जाना सर्वथा अनुचित होता है। अपमान की स्थिति में व्यक्ति विद्रोह की भी कल्पना तक उतर सकता है अतः यह एक अतिसंवेदनशील प्रश्न है जिसके उत्तर में 87% छात्र छात्राओं ने स्वीकार किया कि वक्तव्य बिल्कुल सही है जबकि 13% छात्र छात्राओं की मनोदशा गलत सहमति की ओर इंगित करती है।

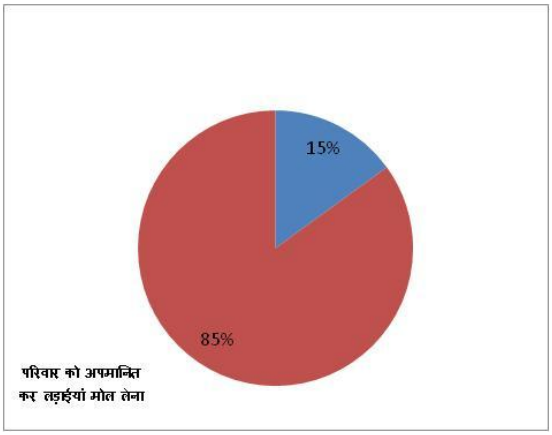

इस अनुच्छेद में छात्रों के व्यवहार, अनुभूति और क्रियाओं से संबंधित निम्नांकित 5 वक्तव्यों पर विश्लेषण का प्रयास किया गया जो वक्तव्य निम्नवत है-

1. मैं सचमुच का मजाक कभी नहीं करता।
2. जब कोई मेरा मजाक उड़ाता है तब मेरा खून खौल जाता है।
3. जब लोग रौब जमाते हैं तो मैं उन्हें नीचा दिखलाने के मौके की तलाश में रहता हूँ।
4. मुझे कभी-कभी ऐसा लगता है कि दूसरे लोग मेरी हंसी उड़ा रहे हैं।
5. क्रोधित होने पर भी मैं कड़े शब्दों का प्रयोग नहीं करता।

सामाजिक जीवन मंे व्यक्तियों को विभिन्न परिस्थितियांे से गुजरना पड़ता है। वे अपने दैनिक जीवन में कभी-कभी हंसी मजाक करते रहते हैं। मजाक करने की प्रथा बहुत प्राचीन काल से चली आ रही है परन्तु आज भी कुछ ऐसे लोग हैं जो वास्तविक रूप से मजाक करने के पक्ष में नहीं रहते हैं क्योंकि मजाक करने की स्थिति कभी कभी व्यक्ति को परेशानी में डाल देती है। किसी व्यक्ति विशेष पर किया गया मजाक उसकी अवहेलना के रूप में परिलक्षित होने पर व्यक्ति आग बबूला हो जाता है और वह किसी भी परिस्थिति से अपने को निपटने के लिए तैयार कर लेता है।

समाज में कुछ ऐसे भी व्यक्ति पाये जाते हैं जो दूसरों पर रौब जमाते हैं ताकि वे अपने को सुपर दिखाने के प्रयास में सफल हो सके। परन्तु उन व्यक्तियों को हमेशा इनके प्रति नकारात्मक रवैया बना ही रहता है और वे इन्हें नीचा दिखाने के अवसर के सर्वथा तलाश में रहा करते हैं जिनके साथ वे अपना रौब जमाते हैं। कभी-कभी ऐसी भी भ्रम की स्थितिि उत्पन्न हो जाती है जब व्यक्ति को लगता है कि लोग उसकी हंसी उड़ा रहे हैं। ऐसी स्थितियां व्यक्ति की सोच पर भी कभी कभी निर्भर करती है। जब व्यक्ति यह मानकर कार्य करता है कि वह जो भी कर रहा है उसमें कहीं न कहीं कमी पायी जा रही है तो निःसंदेह वह लोगों के हंसी का पात्र बन सकता है परन्तु यदि वह जो भी कार्य कर रहा है उसे इस भावना से करता है कि मैं सही रूप से कार्य कर रहा हूँ। तो उसे पूर्ण विश्वास का आभास होता है और यह कभी नहीं मानेगा कि लोग उसकी हंसी उड़ा रहे हो इसी प्रकार क्रोध की स्थिति भी बड़ी भयावह होती है लोग क्रोधित होने पर विभिन्न प्रकार की कई प्रतिक्रियां यथा-वस्तुओं को उठाकर फेंकना, वस्तुओं को तोड़ना, दरवाजों को पीटना, धड़ाक से बंद करना, चुप्पी साध लेना, कड़े शब्दों का प्रयोग करना आदि। इन परिस्थितियों में व्यक्ति अपने को बहुत ही असहज महसूस करता है। उपर्युक्त सभी (5 वक्तव्यों) का अवलोकन करने पर प्रश्नावली निम्नलिखित रूप में उत्तर प्राप्त करती है-

क्रमांक	वक्तव्य	सही% में	गलत% में
1.	मैं सचमुच का मजाक कभी नहीं करता।	71	29
2.	जब कोई मेरा मजाक..... खौल जाता है।	64	36
3.	जब लोग रौब जमाते.....रहता हूँ	67	33

4.	मुझसे कभी कभी.....हंसी उड़ा रहे है।	84	16
5.	क्रोधित होने पर.....नहीं करता	57	43

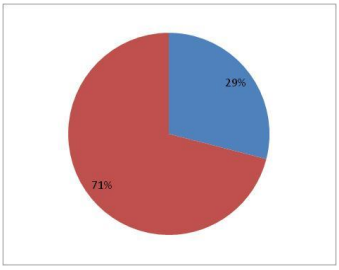

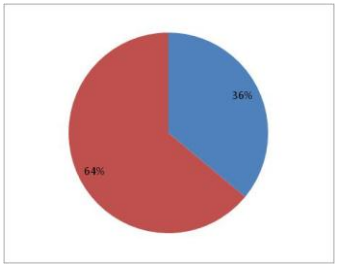

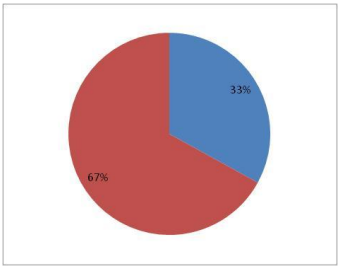

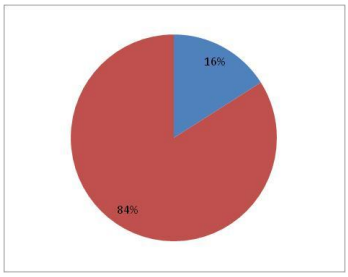

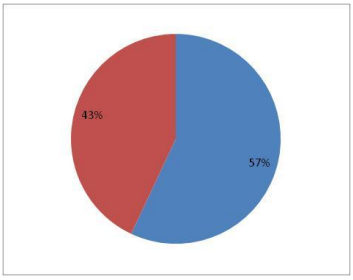

अग्रिम पांच वक्तव्य जिसपर छात्र-छात्राओं की प्रतिक्रियाएं प्राप्त हुई हैं वह उनके व्यवहारों से संबंधित अति महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर निर्भर करती है। वक्तव्य निम्नलिखित है-

1. मैं अपने गुनाहों को माफी के लिए चिन्तित रहता हूँ।

2. जो लोग अक्सर मुझे तंग करते हैं वो मार खाने का काम करते हैं।

3. जब मेरा बस नहीं चलता तो मेरा मुंह लटक जाता है।

4. अगर कोई मुझे परेशान करता है तो उससे मैं अवश्य ही कह देता हूँ कि उसके बारे में क्या विचार है।

5. मैं कभी-कभी ईष्र्या से जल उठता हूँ यद्यपि उसे प्रकट नहीं करता।

जहां तक गुनाहों के उत्पन्न होने की बात आती है तो लोग उसके बारे में पश्चाताप अवश्य ही करते हैं भले ही उसे प्रकट करने में झिझकते हैं। परन्तु कतिपय परिस्थितियां ऐसी भी आती हैं जब गुनाह करने वाला व्यक्ति अपनी माफी के लिए नहीं सोचता है। प्रश्नावली का उत्तर उक्त वक्तव्य को सही की श्रेणी में साबित करने वाले छात्र छात्राओं की 56 प्रतिशत मात्रा पर सहमति प्रकट करता हुआ प्रतीत होता है जबकि 44

प्रतिशत छात्र छात्राओं की निगाहों में यह वक्तव्य गलत प्रतीत होता है। जीवन की गतिविधियों में बहुत बार ऐसी परिस्थितियां भी आती है जब व्यक्ति किसी के द्वारा तंग किया जाता है अथवा परेशान होता रहता है। प्रायः व्यक्ति ऐसे लोगों को निरादर की भावना से ही देखता है। वक्तव्य यह कि ''जो लोग अक्सर मुझे तंग करते हैं वो मार खाने का काम करते हैं'' के पक्ष में 78% छात्र छात्राएं सही करार देते हैं और 22% छात्र छात्राएं गलत करार देते हैं। ''जब मेरा बस नहीं चलता तो मेरा मुंह लटक जाता है'' पर भी 77 प्रतिशत छात्रों ने सही का सिममबल प्रदान किया है जबकि 23% छात्रों ने इसपर असहमति जतायी है। ''अगर कोई मुझे परेशान करता है तो उससे मैं अवश्य ही कह देता हूँ कि उसके बारे में मेरे क्या विचार है?'' जाहिर तौर पर किसी भी प्राणी को उसे परेशान करने वाला व्यक्ति फूटी आंख भी नहीं सुहाता। वह भला उसे क्यों पसंद करेगा हां कतिपय लोग इस बात को व्यक्त नहीं कर पाते जबकि कुछ लोग उस भावना प्रकट करने से गुरेज नहीं करते हैं। छात्र-छात्राओं की प्रश्नावली बताती है कि 69% युवाओं ने इस वक्तव्य को सही तथा 31% युवाओं ने गलत को पसंद किया है। ठीक यही प्रतिक्रिया उस व्यक्ति के साथ भी होती है जो इष्र्या करता है। हालांकि कुछ लोग ऐसे होते हैं जो इष्र्या करते हैं परन्तु उसे प्रकट नहीं करते हैं ऐसे लोग प्रश्नावली में 73% है। 27% लोग इस वक्तव्य के विपरीत अपनी संस्तुति प्रदान करते हैं।

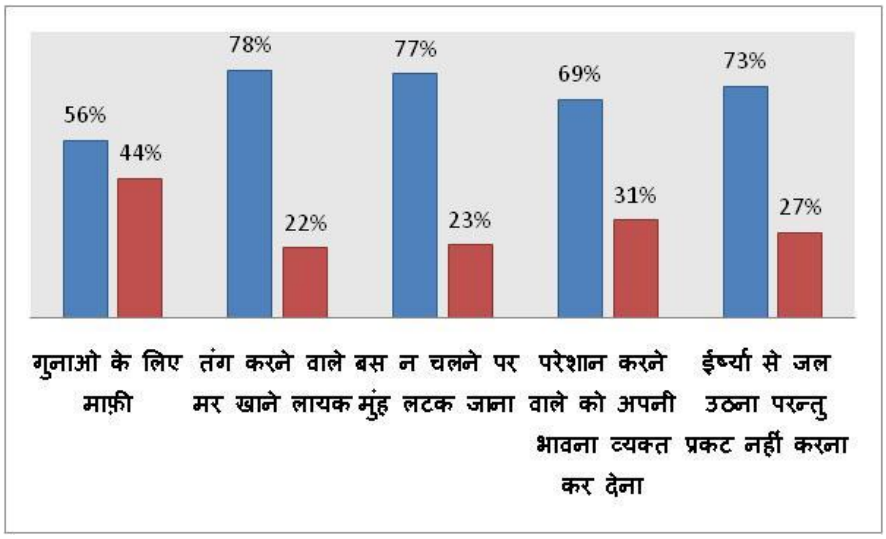

वक्तव्यों की अगली कड़ी में अजनबियों पर विश्वास करने की स्थिति पर छात्र-छात्राओं की राय शोधार्थी द्वारा जानी चाही तो शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत प्रश्नावली में जो उत्तर प्राप्त हुआ वह सही के रूप में 88% छात्र छात्राओं द्वारा स्वीकार किया गया जबकि 12% छात्र छात्राओं ने गलत रूप में इसे स्वीकार किया है। जब बच्चों से पूछा गया कि ''मैं बहुत से ऐसे काम करता हूँ जिससे बाद में मुझे पछतावा होता है।'' पर 43% छात्र छात्राओं ने स्वीकार करते हुए सही माना है, जबकि 57% छात्र छात्राओं ने इसके विरोध में अपनी इच्छा जताते हुए गलत के रूप में स्वीकार किया है। क्रोधित होने पर थप्पड़ मार देने की प्रक्रिया पर इस प्रश्नावली में एक बार पुनः उनकी प्रतिक्रिया जानने का प्रयत्न किया गया तो उनके द्वारा उत्तर 34% सही के रूप में तथा 66% गलत के रूप में प्राप्त हुआ है।

एक महत्वपूर्ण वक्तव्य कि ''दस वर्ष की उम्र के बाद मुझे कभी भी क्रोधावेश नहीं हुआ।'' यह एक ऐसी स्थिति है, जिसपर किसी का भी बस नहीं चलता। व्यक्ति भावावेश में बहुतायत व्यग्र हो सकता है। वह उद्वेलित होने पर अपने को संभाल नहीं पाता है क्योंकि प्रश्नावली का उत्तर बताता है कि सिर्फ 21% छात्र छात्राओं द्वारा इस वक्तव्य को सही माना गया है जबकि 79% छात्र छात्राएं इसे गलत मानते हैं। ''क्रोध'' में पागल होने पर मैं गन्दी बातें बोलने लगता हूँ'' उक्त बातें एक बार पुनः उनके विचारों को जाने के दृष्टिकोण से पूछी गयी। वक्तव्य के प्रत्युत्तर में छात्र-छात्राओं का रूझान पूर्व के क्रोध संबंधी वक्तव्यों के स्मरण ही प्राप्त हुआ। इस वक्तव्य के समर्थन में 64% छात्र छात्राओं का मत प्राप्त हुआ है तथा इसके विपरीत 36% छात्र-छात्रा ने अपना मत रखा है।

प्रश्नावली के वक्तव्यों में क्रमांक 46 पर वक्तव्य कि ''मैं कभी कभी चुनौती के लिए तैयार रहता हूँ।'' पर बच्चों की प्रतिक्रियाएं भी विशेष रूप से प्राप्त होती है। छात्र-छात्राओं को जीवन में बहुत से अवसर प्राप्त होते हैं जब उन्हंे विभिन्न प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। छात्र-छात्राएं वही सफलता प्राप्त करते हैं जो समय रहते चुनौतियों के प्रति सजग होकर अपनी कार्यशैली को बेहतर कर पाते हैं। 87% छात्र-छात्राओं ने वक्तव्य को सही मानते हुए पक्ष में अपना उत्तर दिया है जबकि 13% छात्र छात्राओं ने इसे गलत स्वीकार किया है जो शायद सफलता के प्रति उतने उत्साहित नहीं है। ''मैं अगर लोगों को अपनी भावनाएं जानने दूं तो लोग ऐसा सोचेंगे कि मेरा साथ निभाना उनके लिए मुश्किल होगा।'' शायद यह प्रश्न लोगों को प्रेरित न कर सके परन्तु

मेरा मानना है कि कतिपय युवा इस प्रवृत्ति के होते हैं जिसकी भावनाएं और लोगों की भावनाओं से कहीं मिसमैच करती रहती है। और यह अवस्था अन्य लोगों के सामंजस्य स्थापित नहीं कर पाती है। इसी तार्किक प्रवृत्ति के कारण छात्र-छात्राओं की भावनाएं भी अपने उत्तर में व्यक्त करने की कोशिश की है। सकारात्मक दिशा में जहां इस वक्तव्य को 73% छात्र छात्राओं ने स्वीकार किया है वही 27% छात्रों ने नकारात्मकता को इंगित किया है।

''मैं अक्सर ऐसा सोचा करता हूँ कि कौन से ऐसे गुप्त कारण हैं जिनके चलते लोग मेरी भलाई करते हैं।'' नायक शीर्षक से वर्णित इस वक्तव्य को 49% छात्र-छात्राओं ने सही साबित किया है जबकि 51% छात्र-छात्राओं का रूझान इसको गलत मानने की ओर है। अग्रेतर वक्तव्य कि ''असफलता के चलते मुझे पश्चाताप का अनुभव होता है।'' असफलता व्यक्ति को निश्चित रूप से विद्यालय, शिक्षक, माता-पिता से कहीं अधिक सीख प्रदान करती है। व्यक्ति असफलता को प्राप्त करने पर सफलता से वंचित होने के सभी कारणों से अवगत हो जाता है अर्थात् असफलता व्यक्ति का सर्वोत्तम गुरू होता है जो उसे देर से ही सही परन्तु शिखर तक ले जाता है। छात्रों की प्रश्नावलियों के अवलोकन से पता चलता है कि इस वक्तव्य को 93% छात्र छात्राओं ने सही मानते हुए अपनी स्वीकारोक्ति प्रदान की है जबकि 7% छात्र छात्राओं ने वक्तव्य को गलत स्वीकार किया है। एक संवेदनशील वक्तव्य कि ''मैं अन्य व्यक्तियों की तुलना में ज्यादा लड़ाई झगड़ा नहीं करता।'' प्रत्येक व्यक्ति चाहता है कि वह विवाद से बचे परन्तु किशोरावस्था एक विद्रोह की अवस्था होती है। छात्र-छात्राओं का इगो अर्थात् खुद्दारी उसे आक्रामक बनाने का प्रयत्न भी करती है। इसी कारण छात्रों का रूझान कुछ अलग प्रदर्शित करता है छात्र-छात्राओं का रूझान इस वक्तव्य के प्रति सही और गलत के पक्ष में क्रमशः 62% और 38% प्राप्त हुआ।

प्रश्नावली के क्रमांक 51 से 55 तक कुल 5 वक्तव्यों का रूझान छात्रों द्वारा जानने का प्रयास किया गया जिसमें क्रोधित होने पर चीजों को तोड़ने, अक्सर धमकियां देने पर जबकि उनका इरादा धमकी देने का न रहा हो, युवा जिनको नापसंद करते हैं उनके प्रति रूखा व्यवहार करने के लिए अपने को रोक न पाना, जिन्दगी में उन्हें सख्त बर्ताव महसूस करना/मिलना तथा व्यक्तियों की सत्यता की बातों पर विचार दिये गये हैं।

क्रोध एक ऐसी अवस्था होती है जिसमें व्यक्ति कुछ भी कर सकता है परन्तु उसका विवेक उसे ऐसा करने से रोक लेता है। व्यक्ति न चाहते हुए भी अपने को उद्वेलित

कर लेता है। इसी प्रकार व्यक्ति गुस्से में अथवा किसी अपरिहार्य स्थिति के कारण सामने वाले को धमकियां भी देने की कोशिश कर लेता जबकि उसका इरादा ऐसा नहीं रहता हैै। लोग अपनी जीवन शैली अपनी सोच एवं विचारधारा के अनुक्रम में व्यतीत करना चाहते हैं परन्तु व्यवहार की कटुता, आक्रामकता के कारण लोगों की पसंद से बाहर हो जाता है। और जब लोग पसंद करना छोड़ देते तो व्यक्ति का व्यवहार रूखा होने लगता है जो उसे समाज से दूर कर देता है।

कभी-कभी व्यक्तिगत जीवन को विभिन्न परिस्थितियां कष्टमय कर देती है। ऐसा कतिपय विचारों, आलोचनाओं एवं कुछ लोगों के सख्त व्यवहार/बर्ताव के कारण देखने को मिलता है। सीधा-साधा इंसान बहुत ही भावुक होता है वह लोगों के बारे में साधारणतया उदारता की भावना से पेश आता है परन्तु जब उसे पता चलता है कि लोग सिर्फ दिखावे के रूप में अपनी भाव भंगिमा प्रस्तुत करते हैं तब उसे लगता है कि लोग सच बोलते जरूर हैं परन्तु ज्यादातर लोग सच नहीं बोलते हैं। उपरोक्त बिन्दुओं पर चर्चाओं के क्रम में प्रश्नावली द्वारा प्राप्त उत्तर निम्नवत परिलक्षित होता है-

क्रमांक	वक्तव्य	सही	गलत
1.	कभी मैं इतना क्रोधित होता हूँ कि अपने नजदीक की चीजों को उठाकर तोड़ दी।	47%	53%
2.	मैं अक्सर ऐसी धमकियां देता हूँ जिसे वास्तव में करने का इरादा नहीं रखता	72%	28%
3.	जिन लोगों को मैं नापसंद करता हूँ उनके प्रति थोड़ा रूखा व्यवहार करने से अपने आपको नहीं रोक पाता हूँ	84%	16%
4.	कभी कभी मैं यह महसूस करता हूँ कि जिन्दगी में मुझे सख्त बर्ताव मिला है।	69%	31%
5.	मैं सोचता था कि ज्यादातर लोग सच बोलते होंगे पर अब मैं जान गया कि बात ऐसी नहीं है।	79%	21%

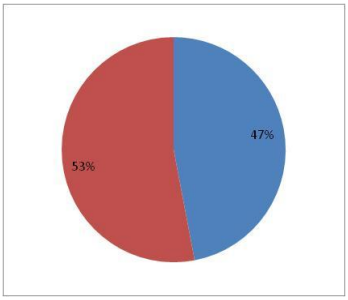

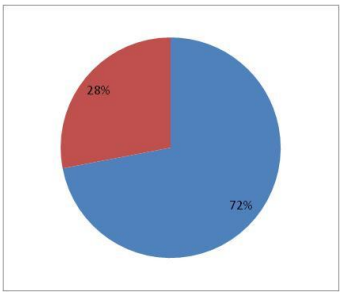

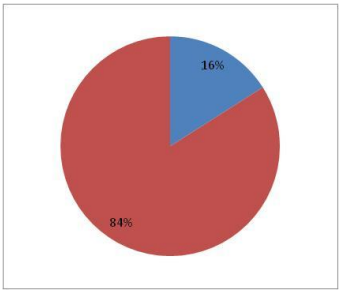

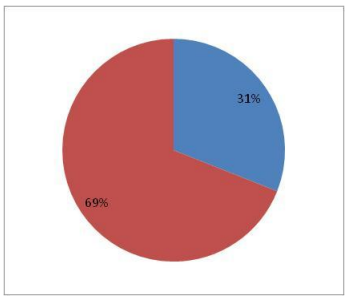

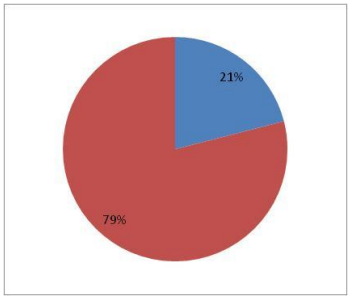

सबसे नैतिक वक्तव्य ''मैं जब गलती करता हूँ तो मेरी आत्मा धिक्कारती है।'' शायद यह वक्तव्य ऐसा है जो किशोरवय बालक-बालिकाओं को अपने किये पर पश्चाताप् एवं सोचने पर विवश करता है। क्योंकि व्यक्ति भावनाओं में अभिभूत होकर अथवा उत्साह से ओत प्रोत होते हुए कमोबेश ऐसी गतिविधियां कर बैठता है जो शायद उसे नहीं करनी चाहिए।

छात्रों को अपनी रक्षा के लिए अधिकारों का प्रयोग करना पड़ता है परन्तु कभी कभी अधिकारों की रक्षा के लिए कतिपय हरकतें भी करनी पड़ती हैं जो उचित नहीं होती परन्तु करना उस वक्त की मजबूरी होती है। व्यक्ति कभी कभी अधिकारों की रक्षा के लिए शारीरिक हिंसा पर भी उतर आता है।

कुछ व्यक्ति ऐसे भी होते हैं जो किसी की भावनाओं और विचारों से कोई सरोकार नहीं रखते हैं। उन्हें जो भी कार्य पसंद होता है उसे बिना किसी परवाह के करते रहते हैं। उनका मानना है कि लोगों का क्या कहना है इस पर ध्यान न देकर मुझे जो अच्छा लगता है वह करता हूँ। ऐसे लोगों के साथ यदि कोई ठीक से व्यवहार नहीं करता है तो भी वे उसके लिए परेशान नहीं होते है।

''मैं अक्सर दूसरों के प्रति हीन विचारों को छिपा लेता हूँ'' उक्त वक्तव्य भी एक उत्तम वक्तव्य है जो व्यक्ति को निःसंदेह उच्च आदर्शों के पथ पर ले जाता है। इसी प्रकार यह वक्तव्य कि ''मेरा कोई शत्रु नहीं है जो वास्तव में हानि पहुँचाता हो।'' व्यक्ति यदि सरल स्वभाव का है। वह दूसरों के प्रति सदैव ऐसा व्यवहार करता है जैसा कि वह स्वयं के लिए दूसरों से चाहता है। तो निश्चित रूप् से उसको किसी के हानि नहीं प्राप्त होगी। उपयुक्त सभी वक्तव्यों से संबंधित प्रश्नावली में वर्णित वक्तव्य संख्या 56 से 60 के प्रत्युत्तर निम्नांकित रूप से अवलोकन में पाये गये-

क्रमांक	वक्तव्य	सही%में	गलत%में
1.	मैं अक्सर दूसरों के प्रति अपने हीन विचारों को छिपा लेता हूँ	63	37
2.	जब मैं गलती करता हूँ तो मेरी अंतरात्मा मुझे धिक्कारती है	58	42
3.	अगर मुझे अपने अधिकारों की रक्षा के लिए शारीरिक हिंसा पर उतरना पड़े तो मैं निश्चित रूप से ऐसा करूंगा	47	53
4.	यदि कोई मेरे साथ ठीक व्यवहार नहीं करता है तो मैं उसके लिए परेशान नहीं होता	36	64
5.	मेरा कोई शत्रु नहीं है जो वास्तव में हानि पहुंचाता हो	52	48

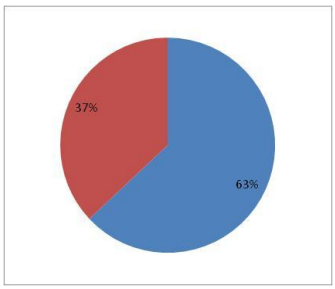

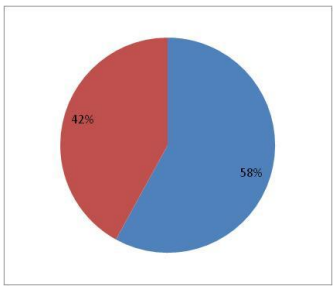

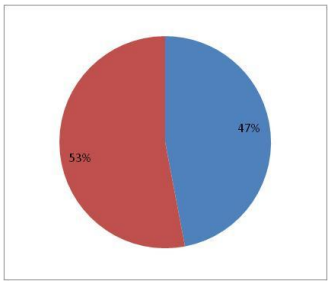

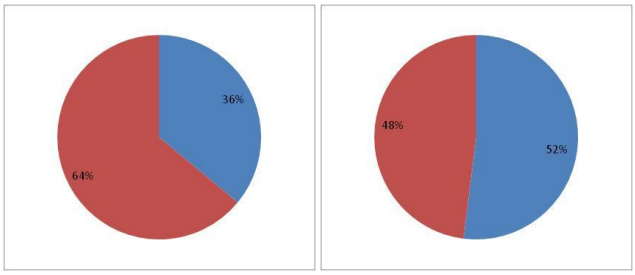

कुछ ऐसे भी वक्तव्य होते हैं जहां व्यक्ति के सार्वजनिक स्थानों पर की जाने वाली प्रतिक्रियाओं का परस्पर क्रियान्वयन परिलक्षित करता है। जैसे एक वक्तव्य कि ''बहस करते समय मैं ऊँची आवाज में बोलने लगता हूँ।'' पर छात्र-छात्राओं की विचारधाराएं भी अलग-अलग अंदाज में प्राप्त होती है हालांकि यहां पर भी बहुसंख्यक छात्र-छात्राएं वक्तव्य को सत्य ही मानते हैं और ऐसे छात्र छात्राओं की संख्या 73% है। 27 प्रतिशत छात्र एकमत से तथ्य को गलत मानते हैं।

मानव का जन्म इस धरातल पर सबसे बुद्धिमान प्राणी के रूप में हुआ है, बुद्धिमान होने के कारण इसे प्रकृति में विशेष स्थान प्राप्त है। अन्य जन्तुओं की तुलना में मानव सुव्यवस्थित तरीके से अपने नित्य प्रति के कार्यों को अंजाम देते हुए एक उत्तम जिन्दगी जीने का प्रयत्न करता है। परन्तु कुछ व्यक्ति अपने को सफलतम रूप से जीवन व्यतीत करने वालों की श्रेणी में नहीं मानते हैं। उक्त तथ्य से संबंधित प्रश्नावली में दिये गये वक्तव्य यथा- ''मैं अक्सर ऐसा महसूस करता हूँ कि मैंने उचित प्रकार की जिन्दगी नहीं बिताई है।'' पर 33% छात्र छात्राओं ने सही मानकर अपनी संस्तुति प्रदान की जबकि 67% छात्र छात्राओं ने इसे गलत माना है। मानव स्वभाव कुछ इस तरह का है कि वह किसी बात को बर्दाश्त नहीं कर पाता है। ऐसा तब अधिक आक्रामक स्थिति में पहुंच जाता है जब व्यक्ति किसी के द्वारा परेशान किया जाता है। प्रश्नावली का वक्तव्य यह प्रदर्शित करता है कि (ऐसे लोगों को मैं जानता हूँ जिन्होंने मुझे यहां तक परेशान किया है कि मैं मारपीट पर उतर आया) 87% छात्र छात्रा कभी इस प्रकार की स्थिति में नहीं आये हालांकि 13% छात्र छात्राएं इस वक्तव्य को स्वीकार करते हैं।

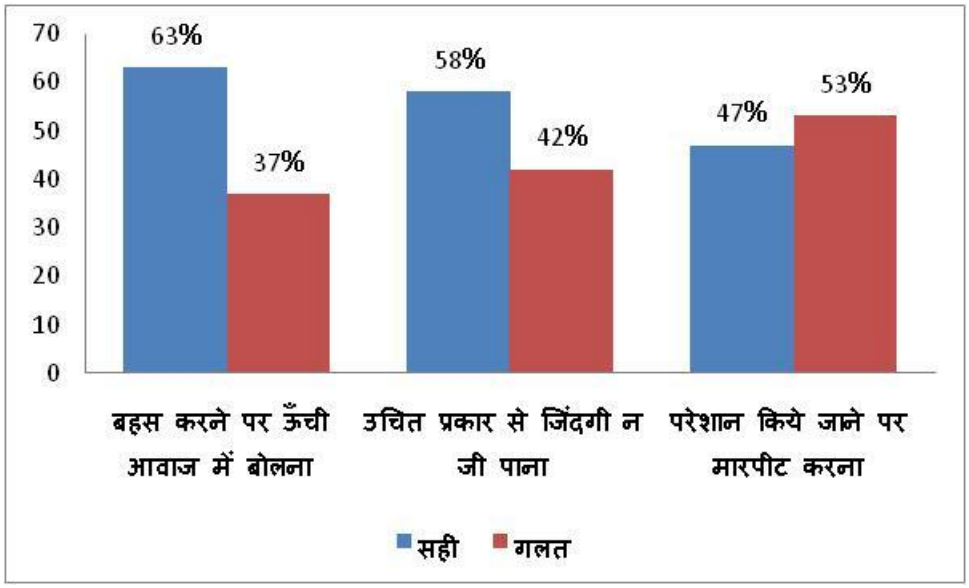

बहुत से व्यक्तियों का स्वभाव स्वतंत्र, बिन्दास एवं तनावमुक्त होता है। इस तरह के लोग किसी की बातों की फिक्र नहीं करते कि लोग क्या कहेंगे। यदि अनावश्यक बातों के पीछे व्यक्ति पड़ता है तो वह निश्चित रूप से परेशान होता है। प्रकृति में दोनों प्रकार के व्यक्ति पाये जाते हैं। उक्त संदर्भित वक्तव्य ''मैं बहुत सी अनावश्यक बातों से अपने को परेशान नहीं करता हूँ।'' पर प्रश्नावली पर छात्र छात्राओं का निम्नवत रूझान प्राप्त हुआ-

सही - 54%

गलत - 46%

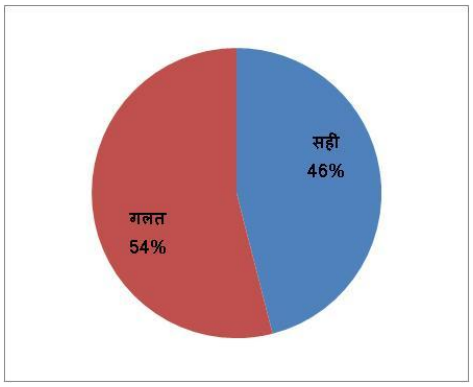

एक महत्वपूर्ण तथ्य ''मैं ऐसा बहुत कम अनुभव करता हूँ कि लोग मुझे गुस्सा दिलाने या अपमानित करने की कोशिश कर रहे हैं।'' उक्त तथ्य पर छात्र छात्राओं का सही और गलत के पक्ष में क्रमशः 43% और 57% उत्तर प्राप्त हुआ। वही यह तथ्य कि ''मैं किसी बात पर बहस करने की बजाय उसे मान लेना चाहूँगा।'' बहुत कम ही लोग इस तथ्य को सही मानते हैं क्योंकि वे यह कतई स्वीकार नहीं कर सकते कि आपका कथन बिल्कुल सही है सबसे पहले वे उस तथ्य पर अपनी बातों बहस के माध्यम से रखेंगे तत्पश्चात् वे उस पर अपनी असहमति अथवा सहमति प्रकट करेंगे। इस वक्तव्य को सही गलत के रूप में क्रमशः 64% और 36% छात्र छात्राओं ने स्वीकार किया है। प्रश्नावली का अंतिम प्रश्न (वक्तव्य) ''कभी कभी मैं अपना गुस्सा टेबल पर हाथ पटक कर प्रदर्शित करता हूँ।'' प्रायः सभी लोग अपने गुस्से को प्रकट करने के लिए कुछ इस प्रकार की गतिविधियां किया करते हैं। बहुत कम ही लोग होते हैं जो अपने गुस्से को प्रकट नहीं कर पाते हैं उक्त वक्तव्य का उत्तर प्रश्नावली से निम्नांकित रूप मंे प्राप्त हुआ-

सही - 84%

गलत - 16%

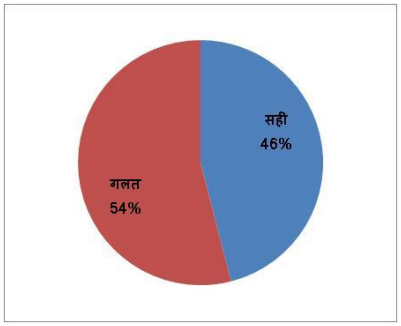

सांख्यिकीय प्रविधियां-

प्रस्तुत शोधकार्य में उपकरणों से प्राप्त प्रदत्तों के निर्वाचल तथा विश्लेषण करने के लिए माध्ययान मानक विचलन तथा सहसम्बन्ध क्रान्ति अनुपात सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग किया गया है।

प्रदत्तों का विश्लेषण तथा व्याख्या -

शोध के उद्वेश्यों को ध्यान में रखते हुए शोध के उपकरण के रुप में दो उपकरणों का चयन किया गया है-

मजूमदार द्वारा वैज्ञानिक रचनात्मकता तथा के0सी0 मिश्रा द्वारा विद्यालय वातावरण अन्वेषकों को जिसका प्रयोग स्कूल के मानसिक, सामाजिक वातावरण को परिभाषित करने के लिए किया गया है। इनके अनुसार 70 बिन्दु हैं जो निम्न 6 पहलूओं पर आधरित हैं- रचनात्मक उत्तेजना, संज्ञानात्मक प्रोत्सास स्वीकार, सहनशीलता अस्वीकार तथा नियंत्रण।

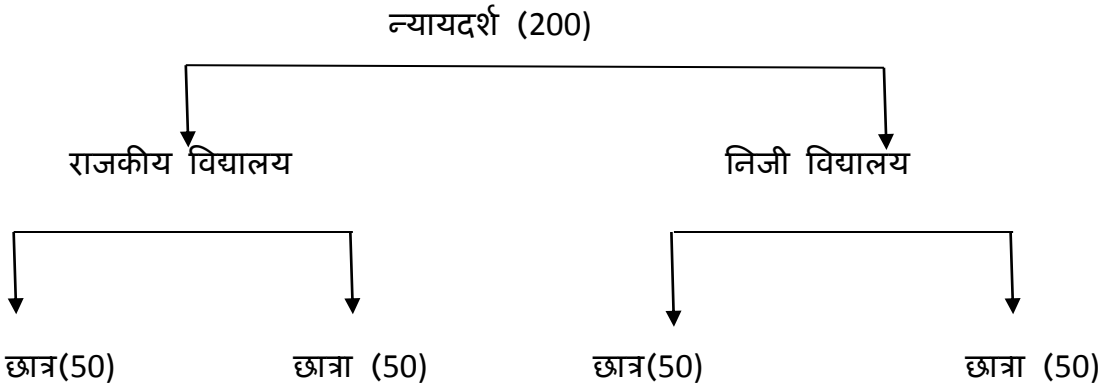

परिकल्पना-

1-विद्यालय के सकारात्मक वातावरण एवं किशोर/किशोरियों के सृजनात्मक मनोवैज्ञानिक/सामाजिक रचनात्मक व्यवहार के मध्य सार्थक तथा महत्वपूर्ण सम्बन्ध होता है।

2-विद्यालय के सकारात्मक वातावरण एवं किशोर/किशोरियों के सृजनात्मक मनोवैज्ञानिक/सामाजिक रचनात्मक व्यवहार के मध्य सार्थक तथा महत्वपूर्ण सहसम्बन्ध नहीं होता है।

आश्रित चर	सहसम्बन्ध	स्वतंत्र चर
रचनात्मक उत्तेजक	मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक रचनात्मकता	0.00162261
संज्ञानात्मक प्रोत्साहन	मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक रचनात्मकता	0.019459
स्वीकार	मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक रचनात्मकता	0.010185
सहनशीलता	मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक रचनात्मकता	0.0103981
अस्वीकार	मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक रचनात्मकता	.0.03365
नियंत्रण	मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक रचनात्मकता	0.01456
रचनात्मक उत्तेजक	मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक रचनात्मकता	0.00162261

तलिका 1- विद्यालीय सकारात्मकवातावरण तथा किशोर/किशोरियों के सृजनात्मक मनोवैज्ञानिक व्यवहार के मध्य सम्बन्ध

तलिका2-निजी तथा सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत् किशोर छात्र/ छात्राओं के मनोव्यवहारिक रचनात्मक दोषों में सार्थक अन्तर।

न्यादर्श (द)	मध्य	प्रमाप विचलन	टी-मूल्य (परीक्षण)	सार्थकता स्तर
निजी लड़के/लड़किया विद्यालय (N=100)	92.63	36.38	4.19	सार्थक
सरकारी लड़के/ लड़किया विद्यालय (N=100)	76.37	13.44		

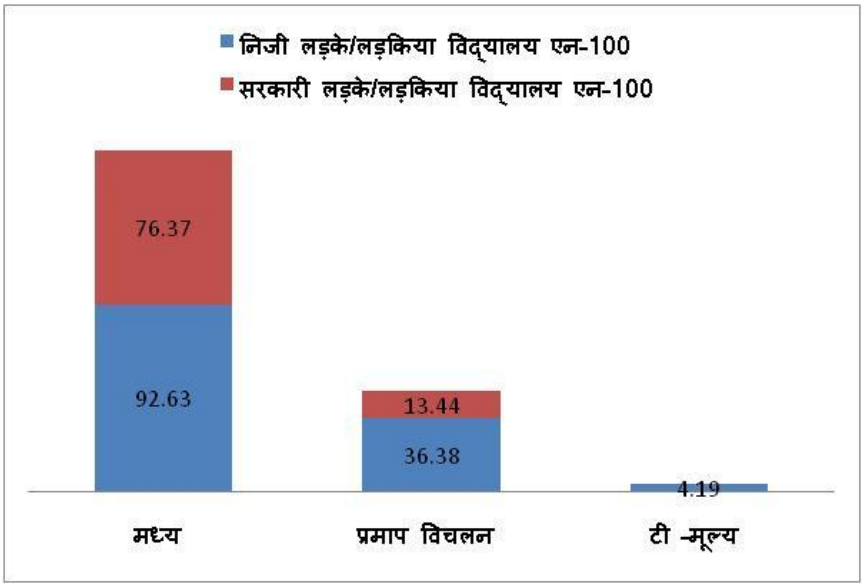

तलिका 3-छात्र तथा छात्राओं के मध्य वैज्ञानिक रचनात्मकता तथा विद्यालीय वातावरण के बीच सार्थ अन्तर।

न्यादर्श (द)	मध्य	प्रमाप विचलन	टी-मूल्य (परीक्षण)	सार्थकता स्तर
छात्र (N=100)	82.21	29.32	1.13	सार्थक नहीं
छात्राएँ (N=100)	86.79	27.70		

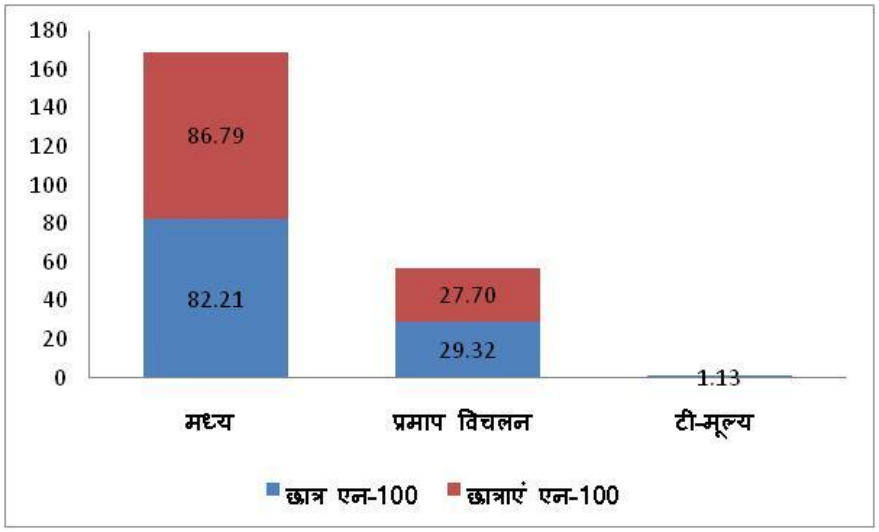

अवधारणाएँ-

तालिका 1- मध्यमान मानक विचलन तथा कार्ल-पियासन सहसम्बन्ध के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि विभागीय वातावरण तथा वैज्ञानिक/मनोवैज्ञानिक व सामाजिक रचनात्मकता के बीच धनात्मक सहसम्बन्ध है। अतः उपर्युक्त परिकल्पना को स्वीकार किया जाता है तथा शून्य परिकल्पना को स्वीकार किया जाता है।

तालिका 2- मध्यमान मानक विचलन तथा टी-परीक्षण के आधार पर यह कहा जाता जा सकता है कि निजी तथा सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत् छात्र/छात्राओं के मध्य व्यवहारिक दोषों में सार्थक अन्तर पाया जाता है। अतः शून्य परिकल्पना अस्वीकार हो जाती है।

तालिका 3- मध्यमान मानक विचलन तथा टी-मूल्य के परीक्षण के आधार पर यह कहा जाता जा सकता है कि वैज्ञानिक रचनात्मकता तथा विद्यालीय वातावरण का छात्र/छात्राओं के मध्य सार्थक अन्तर होता है।

सामाजिक आर्थिक स्थिति

प्रवाह चित्र : न्यायदर्श का चयन

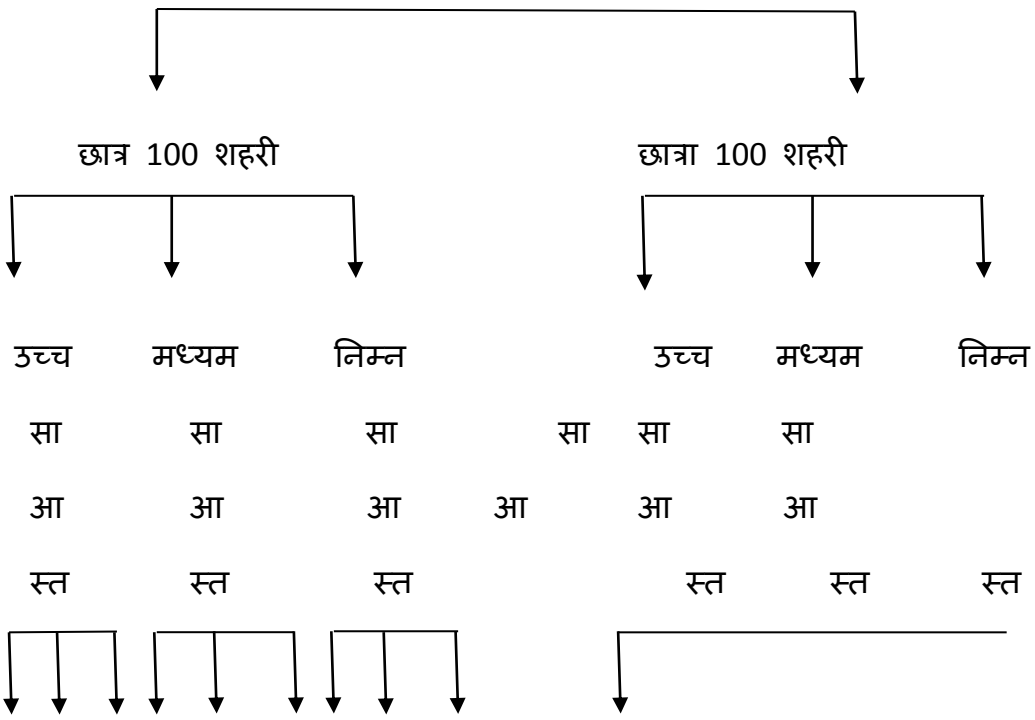

उ0 उच्च, म0 मध्य, नि0 निम्न, सा0 सामाजिक, आ0 आर्थिक वा0 वातावरण, स्त0स्तर

तालिका क्रमांक-1

किशोर/किशोरियों में आक्रामकता एवं घरेलू हिंसा के मध्यमान, मानक विचलन एवं टी-परीक्षण की तालिका

	मध्यमान	मानक विचलन	स्वतंत्र्यांश	'टी' परीक्षण का मूल्य	सार्थकता स्तर
किशोर (N=100)	2.13	0.86	198	4.1868	$p<0.05$
किशोरियाँ (N=100)	2.59	0.68			

- 0.05 स्तर पर सार्थक

किशोर/किशोरियों के आक्रामक व्यवहार पर घरेलू हिंसा का प्रभाव ज्ञात करने के लिए निर्मित की गई शून्य परिकल्पना ''किशोर/किशोरियों के आक्रामक व्यवहार पर घरलू हिंसा का प्रभाव नहीं पाया जाता'' की सत्यता के परीक्षण के लिये टी-परीक्षण का उपयोग किया गया। तालिका से स्पष्ट है कि किशोरों के आक्रामकता का मध्यमान 2.13 है जो कि किशोरियों के आक्रामकता के मध्यमान 2.59 की तुलना में कम है। टी-परीक्षण का परिगणित मूल्य 0.05 स्तर पर सार्थक है। अत: शून्य परिकल्पना अस्वीकृत होती है। इससे सिद्ध होता है कि किशोर/किशोरियों के आक्रामक व्यवहार पर घरेलू सिंहा का प्रभाव पाया जाता है। चूंकि किशोरियों की आक्रामकता का मध्यमान किशोरों के आक्रामकता के मध्यमान की तुलना में अत्यधिक है। इसलिये किशोरियों की आक्रामकता पर घरेलू हिंसा का प्रभाव किशोरों की तुलना में अधिक पाया गया।

तालिका क्रमांक-2

किशोर/किशोरियों के आक्रामक व्यवहार पर टी.व्ही. के प्रभाव के मध्यमान, मानक विचलन एवं 'टी' परीक्षण की तालिका

	मध्यमान	मानक विचलन	स्वतंत्र्यांश	'टी' परीक्षण का मूल्य	सार्थकता स्तर
किशोर (N=100)	3.20	1.24	198	0.2308	p<0.05
किशोरियाँ (N=100)	3.16	1.24			

- 0.05 स्तर पर सार्थक

किशोर/किशोरियों के आक्रामक व्यवहार पर टी.वी. का प्रभाव ज्ञात करने के लिये निर्मित की गई शून्य परिकल्पना ''किशोर/किशोरियों के आक्रामक व्यवहार पर टी.वी. का प्रभाव नहीं पाया जाता'' की सत्यता की जाँच करने के लिये टी-परीक्षण का उपयोग किया गया। तालिका से स्पष्ट होता है कि किशोरों के आक्रामकता का मध्यमान 3.20 है जो किशोरियों के आक्रामकता के मध्यमान 3.16 की तुलना में अधिक है। टी-परीक्षण का परिगणित मूल्य 198 स्वतंत्र्यांश पर 0.2308 है जो कि सार्थक है। इसलिये शून्य परिकल्पना अस्वीकृत होती है। इससे सिद्ध होता है कि किशोर/किशोरियों के आक्रामकता पर टी.वी. का प्रभाव पाया जाता है। प्रस्तुत शेध में किशोरों के आक्रामकता पर टी.वी. का प्रीाव किशोरियों की तुलना में अधिक पाया गया है क्योंकि के आक्रामकता का मध्यमान किशोरियों के आक्रामकता के मध्यमान की तुलना में अत्यधिक है।

तालिका क्रमांक-3

किशोरावस्था में आक्रामकता व विद्यालयीन वातावरण में सह-सम्बन्ध की तालिका

विद्यालय के विविध आयाम	आक्रामकता के विविध आयाम								कुल
	हलमा	अप्रत्यक्ष आ0	चिड़चिड़ापन	वास्तविकता से	नराजगी	संदेह	मौखिक आ0	आयाम	आक्रामकता
रचनात्मक	0.026	-0.078	-0.024	-0.041	0.059	-0.047	-0.064	-0.021	-0.045

संज्ञानात्मक प्रोत्साहन	-0.020	* -0.095	-0.024***	-0.029	-0.040	- 0.009	-0.064	-0.057	-0.051
स्वीकार	-0.002	*** -0.131	0त्र009	-0.029	-0.053	- 0.060	* -0.087	0.011	**-0.095
सहनशीलता	** 0.106	-0-013	-0.045	-0.028	0.046	- 0.043	** -0.101	0.057	0-041
अस्वीकार	** 0.113	0-025	0.008	0.020	*** 0.125	0.047	0-046	-0.002	** 0.115
नियंत्रण	0-079	** -0.117	0.080	-0.068	0-031	- 0.024	0-022	0.007	-0-014
कुल	0-035	* -0.097	0.002	-0.048	0.016	- 0.047	-0.065	0.017	-0.052

* 10 प्रतिशत सार्थकता स्तर

** 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर

*** 1 प्रतिशत सार्थकता स्तर

उपर्युक्त तालिका में किशोरावस्था में आक्रमकता तथा विद्यालयी वातावरण के बीच सहसम्बन्ध को प्रदर्शित किया गया है। मारपीट का व्यवहार तथा स्कूल छोड़ने के बीच घनात्मक तथा महत्वपूर्ण सहसम्बन्ध ($r=0.113$, $p<0.05$) पाया गया। वही मारपीट का व्यवहार तथा स्वीकार्यता में ऋणात्मक तथा महत्वपूर्ण सहसम्बन्ध ($r=0.106$, $p<0.05$) पाया गया। अप्रत्यक्ष आक्रमकता सम्बन्धी व्यवहार तथा रचनात्मक उत्तेजना ($r=0.0.095$, $p<0.10$) संज्ञानात्मक प्रोत्साहन ($r=0.131$, $p<0.01$) तथा नियन्त्रण ($r=0.1173$, $p<0.05$) यह सम्बन्धी विद्यालयी सकारात्मक वातावरण के बीच ऋणात्मक तथा महत्वपूर्ण संगति पाई गई। स्पष्ट है कि स्कूल के सकारात्मक वातावरण तथा शिक्षकों के प्रोत्साहन सह शैक्षणिक कार्यों में भागीदारी का किशोरावस्था और आक्रात्मकता में सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

अत: किशोरावस्था में आक्रमकता तथा विद्यालयीन वातावरण के बीच सह-सम्बन्ध ज्ञात करने क लिए निर्मित की गई शून्य परिकल्पना ‘‘किशोरावस्था में आक्रामकता तथा विद्यालयीन वातावरण के बीच सह-सम्बन्ध नहीं पाया जाता है’’ अस्वीकृत होती है।

तालिका क्रमांक-4

किशोरावस्था में आक्रामकता के व्यवहार के आयाम

आयाम	स्तर	निम्न	सामाजिक	आर्थिक परि0	उच्च	सा0 आ0 छात्राएँ	परिकल्पना Z मान्य	कुल छात्र	कुल छात्राएँ	Z मात्रा
	छात्र	छात्राएँ	Z मान्य	छात्र	छात्राएँ					
हमला	निम्न माध्यम उच्च	10 (10) 66 (66)	11 74 15	-023 -123 1.61	11 75 14	23 66 11	-2.26 1.40 064	21 141 38	34 140 38	-1.35 0.077 1.157
अप्रत्यक्ष	निम्न माध्यम उच्च	11 77 12	9 86 5	0.47 -1.64 1.77	8 60 32	9 64 27	*** -0.25 -0.58 -0.78	19 137 44	18 150 32	0.122 1.021 1.081
चिड़चिड़ापन	निम्न मध्यम् उच्च	5 78 17	15 73 12	-2.36 0.82 1.00	12 79 9	10 64 26	*** 0.45 2.35 -3.16	17 157 26	25 157 38	&0- 923 1-602 1-157
वास्तविकता से इन्कार	निम्न मध्यम उच्च	13 43 44	34 60 6	-3.50 1.48 2.44	26 52 22	15 61 24	1.39 -1.28 ** -0.34	39 122 39	49 121 30	0-853 0-072 0-842 **
राराजगी	निम्न मध्यम उच्च	8 84 8	10 41 49	0.66 0.29 -0.71	12 46 53	7 40 53	1.21 0.86 * -1.56	25 89 86	17 81 102	0.923 ** 0.572 1.133
संदेह	निम्न मध्यम	22 50	13 75	-1.51 1.58	15 84	10 83	1.07 0.19	23 168	23 158	0 0.911

	उच्च	28	12	-0.94	1	7	** -2.17	9	19	**
मौखिक आक्रामकता	निम्न मध्यम उच्च	17 75 8	29 62 9	1.14 1.17 3.46	24 61 15	30 53 17	0.96 1.14 -0.39	46 111 43	59 115 26	-045 -0285 1.591
कुल आक्रामकता	निम्न मध्यम उच्च	10 74 16	21 61 18	-2.15 1.96 -0.38	12 72 16	14 53 19	-0.42 2.78 -0.56	22 146 32	35 114 37	-1.315 2.372 -0.465

P मान्य *=0.10.**=0.05.***=0.01 क्रमश:

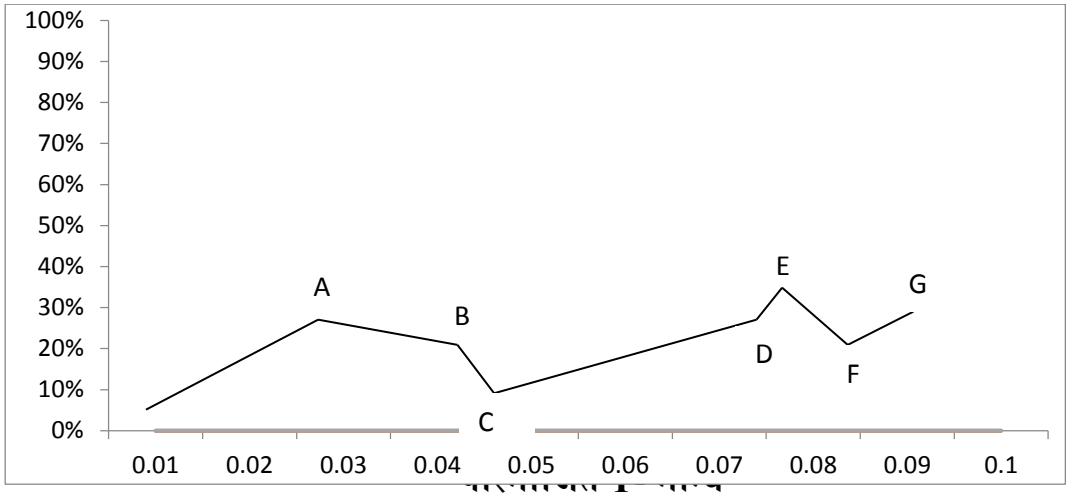

तालिका-5

माध्य उत्क्रमणिकता के विभिन्न आयाम व्यस्क छात्र एवं छात्रा लिंग

आक्रामकता के आयाम	**छात्र (मध्य स्कोर)**	**छात्राएँ (मध्य स्कोर)**	**F-मान्य**	**SEM**	**परसपर अन्तर**
आक्रमकता	5.30	4.90	5. 223**	0.101	280
चिड़चिड़ापन	4.39	4.20	1.899	0.097	NS

वास्तविकता से इन्कार	7.09	4.20	586	0.097	NS
नाराजगी	2.53	2.34	2.765*	0.079	219
संदेह	3.38	3.55	1.18	0.110	NS
मौलिक आक्रमकता	5.23	5.54	3.766*	0.115	319
अपराध	4.48	4.23	4.082*	0.096	243
आत्मग्लानि	6.01	6.19	2.117	0.087	NS
कुल आक्रमकता	35.39	35.21	.107	0.389	NS

p मान्य * = 0.10

** =0.05

*** = 0.01

NS = महत्वपूर्ण नहीं

तालिका-6

द्विपक्षीय अन्तरिम अन्वेशन		सामाजिक आर्थि स्तर × लिंग विभेदन में आक्रामकता के आयाम			
आयाम	सामाजिक आर्थिक स्तर	छात्र	छात्राएँ	F- मान्य	SEM
अप्रत्यक्ष	म0 नि0	5.47/5.13	5.21/4.74	0.209	0.142
चिड़चिड़ापन	म0 नि0	4.02/4.76	3.86/4.54	0.047	0.138
वास्तवकता से इन्कार	म0 नि0	4.13/4.05	4.01/4.38	2.690	0.137
नाराजगी	म0/नि0	2.67/2.38	2.03/2.65	16.724	0.111
संदेह	म0/नि0	3.35/3.40	3.48/3.61	0.066	0.156
मौखिक	म0/नि0	5.42/5.03	5.64/5.44	0.343	0.162
अपराध	म0/नि0	4.63/4.33	4.23/4.23	1.217	0.136
आत्मग्लानि	म0/नि0	5.85/6.16	6.23/6.14	2.614	0.124
कुल	म0/नि0	35.54/35.24	34.69/35.73	1.497	0.557

मध्यमान

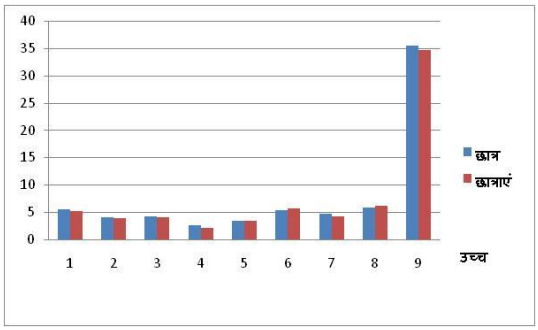

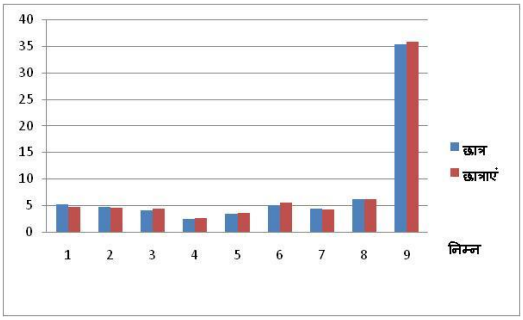

A = अप्रत्यक्ष B = चिड़चिड़ापन C = वास्तविकता से इंकार D = नाराजगी E = संदेह F = मौखिक आक्रमकता G = अपराध H = आत्मग्लानि I = कुल

तालिका-7

मध्यमान एवं t-मान/स्कूलों में आक्रामकता

क्र.सं.	**स्कृत वातावरण**	**छात्र (N 100**	**छात्राएँ (N 100**	**अन्य**			
	आयाम	**माध्य**	**माध्य**	**SD**	**माध्य**	**SD**	**t-मान्य**
1.	प्रतिद्वन्द्व	35.95	25.96	6.65	54.05	7.57	**0.80***
2.	सहनशीलता	30.05	46.25	4.95	31.35	2.24	**0.41*****
3.	परिग्रह	25.25	40.15	7.07	28.80	5.12	**1.82****
4.	जिद्दिपन	17.0	9.96	3.74	21.75	3.17	**3.96***
5.	अस्वीवीकार्यता	9.90	11.25	3.22	16.30	4.85	**4.92***
6.	संयम	15.85	36.18	3.74	27.65	5.19	**0.25***

P मान्य * = 0.10 ** = 0-05

*** = 0-01

उपर्युक्त तथ्यों, वक्तव्यों से छात्र-छात्राओं के व्यवहारों, अनुभूतियों एवं क्रियाओं के बारे में समुचित व यथोचित जानकारियाँ प्राप्त हुई जो निष्कर्षत: यह परिणाम प्रदर्शित करती है कि किशोरावस्था में युवाओं के जीवन में विभिन्न प्रकार की परिस्थितियाँ उनको आक्रामक बनाने का प्रयत्न करती है परन्तु किशोर एवं किशोरियों अपने को उस परिस्थिति से बचाने में कामयाब रहते हैं।

***

पंचम अध्याय

निष्कर्ष एवं सुझाव

उपसंहार

किशोरावस्था में आक्रामकता: कारक एवं प्रभाव नामक इस शोध में स्वयं द्वारा समग्र रुप से यादृच्छिक विधि से चयनित 200 छात्र -छात्राओं पर किये गये अध्ययन के फलस्वरुप जो निष्कर्ष मुझक प्राप्त हुआ वह बहुत ही सारगर्भित है। यह शोध किशोर व किशोरियों के आक्रात्मक व्यवहार का अध्ययन, उनके ऊपर घरेलू हिंसा के प्रभावों, विद्यालय सम्बन्धी वातावरण के प्रभाओं तथा दूरदर्शन (टी0वी0)का किशोर-किशोरियों के आक्रामक प्रभावों का उद्वेश्य लेकर प्रारम्भ किया गया।

चयनित किशोर/किशोरियों के आक्रामकता को समझने के लिए सामाजिक आर्थिक स्तर मापनी का प्रयोग किया गया। उपर्युक्त मापनी में सामाजिक स्तर शैक्षक स्तर, व्यवसायिक स्तर, सम्पत्ति स्तर एवं वार्षिक आय पर आधारित सामाजिक आर्थिक स्थिति का प्रयोग किया गया । प्रस्तुत मापनी के प्रयोग के आधार निष्कर्ष बताया है कि विभिन्न समुदायों में रहने वाले किशोर एवं किशोरियां एकल एवं संयुक्त दोनों ही परिवारों से सम्बन्धा रखते है। अधिकांश अभिभावक प्राथमिक स्तर की शिक्षा प्राप्त कर सके हो हांलाकि परास्नातक तक शिक्षा कई अभिभावकों ने ग्रहण की है। अभिभावकों का व्यवसाय बच्चों की शैक्षणिक स्थिति एवं उनकी आक्रामकता को जरुर प्रभावित करता प्रतीत हुआ। वार्षिक आमदनी यहा के अभिभावकों को बहुत अच्छी नही होने के कारण बच्चों की शिक्षा दीक्षा पर प्रभावित करता हुआ नजर आया। परन्तु यह सर्व विदित तथ्य की अभावों में ही प्रभाएं पिखरती है'' के आधार पर यदि देखा जाय तो गाजीपुर जनपद के इन किशोर किशोरियों पर उपयुक्त परिस्थितियों का कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा

अर्थात इन परिस्थितियों का उनकी आक्रामकता पर कियसी भी प्रकार का प्रभाव देखने को नही मिला ।

विद्यालय वातावरण सम्बधी मापनी में किशोर-किशोरियों द्वारा स्कूल के मानसिक सामाजिक वातावरण को परिभाषित किया गया । इन मुद्दों से सम्बन्धित प्रश्नावली में विद्यालीय वातावरण को रेखाकिंत करते हुए कुल 70 प्रश्न बच्चों के समक्ष प्रस्तुत किया गया। सभी 70 प्रश्न 6 मूलभूत अवधारणाओं पहलुओं से सम्बन्धित है। यथा-सृजनशीलता, प्रोत्सहन ज्ञानात्मक साहसपूर्ण अनुज्ञात्मक स्वीकारणीय अस्वीकृति एवं नियंत्रण प्रयुक्त शोध प्रणाली द्वारा जो निष्कर्ष प्राप्त हुआ वह यह कि विद्यालय एक अतिविशिष्ट संस्थान है जहां छात्र-छात्राओं के विशिष्ट लक्ष्यों की पूर्ति सम्भव हो पाती है। विद्यालय सम्बधी उल्लिखित 70 प्रश्नों को प्रश्नावली के अवलोकन एवं प्रदत्त आंकड़ों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि विद्यालयों वातावरण छात्रों को आक्रामक बनने से बचने हेतु निरंतर प्रयास करता है। विद्यालय का योगदान छात्र-छात्राओं को आक्रामकता से बचाने में ही है न कि आक्रामता को बढावा देने में।

टेलीविजन देखने सम्बंधी प्रश्नावली के प्रयोग द्वारा किशोर- किशोरियों के टी0वी0 देखने की व्यवहारिकता का मापन किया गया । प्रश्नावली के मध्यम से टी0वी0 देखने की अवधि, पसंदीदा टी0वी0 कार्यक्रम एवं पसंदीदा अभिनय पात्रों के आधार पर अध्ययन किया गया। परिणामतः दूरदर्शन भारतीय समाज में मनोरंजक ज्ञानवर्धक एवं साहित्यक सांस्कृति व नैतिक ज्ञान भण्डारों से परिदर्श सामग्री प्रदान करते हुए बालक-बालिकाओं का विकास करता है। आमकता पर दूरदर्शन के प्रभाव को नाकारा तो नहीं जा सकता परन्तु इसका प्रभाव युवाओं पर घातक रुप से कही भी परिलक्षित नहीं होता है।

घरेलू हिंसा के स्वरुप, आवृत्ति एवं गम्भीरता का अध्ययन, को सहायता से किया गया घरेलू हिंसा के 5 प्रमुख प्रकारों यथा शारीरिक हिंसा, भायीय हिंसा, सामाजिक हिंसा भावनात्मक हिंसा एवं बौद्विक (मानसिक) हिंसा का अध्ययन किया गया। प्रदत्त विश्लेषण द्वारा परिणाम जो प्राप्त हुआ वह निर्देशित करता है। कि घरेलू हिंसा का छात्रों के आक्रामक व्यवहार पर अति न्यून प्रभाव पड़ता है। जिसका कोई औचित्य नहीं समझ में आता अर्थात यह माना जाता है। कि किशोर एवं किशोरियों पर घरेलू हिंसा का व्यापक प्रभाव नहीं पड़ता है।

छात्रों/छात्राओं की अनुसूचियों क्रियाओं एवं व्यवहारों का आंकलन द्वारा किया गया। इस में 67 बिन्दुओं पर पर छात्रों की विचार धाराओं का विश्लेषण किया गया। प्रस्तुत प्रश्नावली के विश्लेषण से निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि युवाओं के जीवन की कतिपय परिस्थितिां उनकी रुची, उनका व्यवहार एवं क्रियाकलाप उन्हें यदा-कदा आक्रामकता की ओर उन्मुख कर देती हैं जिससे वे कभी कभार विचलित हो जाते है।

उपर्युक्त परिस्थितिया ही छात्रों पर अपना कुछ प्रभाव परिलक्षित करती ह जिसे आक्रामक परिस्थितियों को पैदा करने का कारक बन जाती है।

समायोजन की समस्याएँ सभी के जीवन में पाई जाती है। व्यक्ति स्वस्थ बने रहने तथा जीवन को खुशहाल एवं गत्यात्मक बनाये रखने के लिए समस्यायों का समाधान ढूढने का प्रयास करता रहता है। ऐसा करना आवश्यक भी है। अन्यथा जीवन का बोझ बन जायेगा अगर व्यक्ति समस्यायों की चक्की में पिसता रहेगा। इससे उसका न केवल व्यक्तिगत बल्कि सामाजिक जीवन भी अस्तव्यस्त एवं उद्देश्यविहीन हो जायेगा। कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी व्यक्ति को धैर्य तथा विवेक से काम लेना चाहिए। व्यक्ति कभी तो समस्यायों को विजित कर लेता है और कभी-कभी उनके साथ उसे समझौता भी करना पड़ता है (Ruch, 1967)। व्यक्ति क¨ यह

मानकर चलना चाहिए कि आज नहीं तो कल, समाधान तो मिलता ही है। ऐसा अनुकूल दृष्टिकोण बनाए रखना उपयोगी होता है। वैसे, स्वस्थ समायोजन के लिए निम्नांकित सुझावों पर ध्यान देना चाहिए (Ruch, 1967 Hurlock, 1978, 1984)।

सुझाव:

1. परिस्थिति का मूल्यांकन **(Evaluation of Situation)**- समस्यात्मक परिस्थिति में होने पर क्रमहीन या यादृच्छिक व्यवहार नहीं करना चाहिए बल्कि परिस्थिति से संबंधित विभिन्न पहलुओं का विधिवत विश्लेषण तथा मूल्यांकन करना चाहिए। इससे नवीन सोच उत्पन्न होने की संभावना बनेगी जो समाधान में सहायक हो सकती है। क्रमहीन या उद्देश्य व्यवहार करने से शारीरिक एवं मानसिक शक्ति का अपव्यय होगा तथा समाधान और भी दुरूह हो जायेगा।

2. कौशल में सुधार **(Improving Skills)**- समस्यायों के समाधान में व्यक्ति की व्यक्तिगत योग्यता, तार्किक क्षमता एवं अर्जित सामाजिक कौशल का महत्वपूर्ण योगदान होता है। माता-पिता को चाहिए कि बालकों में इन योग्यताओं के विकास पर प्रारंभ से ही उचित ध्यान दें। इससे उनमें परिस्थितियों का सामना करने का साहस तथा योग्यता अपेक्षित रूप में विकसित हो सकेगी।

3. संवेगात्मक नियंत्रण **(Emotional control)**- समस्या या संकट की दशा में संवेगात्मक नियंत्रण, धैर्य एवं शक्ति बनाए रखना चाहिए। इससे अनावश्यक विघ्नता तथा अस्तव्यस्तता से बचा सकेगा। जैसे, क्रोध के स्थान पर शान्ति एवं भय तथा आशंका के स्थान पर विवेक से कार्य लेना चाहिए। इसी प्रकार ईष्र्या से भी बचना चाहिए, क्योंकि यह व्यक्ति में अशान्ति पैदा कर देती है।

4. रचनात्मक दृष्टिकोण **(Constructive Viewpoint)**- समस्या उत्पन्न होने पर बालको तथा व्यक्तियों को चाहिए कि वे प्रतिकूल या निषेधित व्यवहार से बचने का पूरा प्रयास करें और समाधान हेतु रचनात्मक दृष्टिकोण का उपयोग करें। जैसे, क्रोध की दशा में आक्रामकता का प्रदर्शन करने के बजाय समस्यात्मक परिस्थितियों से हटा जा सकता है।

5. सामाजिक सहभागिता **(Social Participation)**- बच्चों में स्वस्थ व्यक्तित्व के विकास का प्रयास करना चाहिए। इसके लिए बच्चाके के सामाजिक कार्यों तथा उत्तरदायित्वों के प्रति जागरूक बनाना चाहिए। इससे बच्चों की सामाजिक मानसिकता का दायरा विस्तृत भी होगा और उनमें सामाजिकता के अच्छे गुणों का विकास भी होगा। जैसे, सहिष्णुता, सहानुभूति, सहयोग एवं परार्थवाद (Altruism) आदि। इसका उन्हें सामाजिक जीवन में पूरा लाभ मिलेगा।

6. उपागम एवं मानसिकता में परिवर्तन **(Change in Approach & Mentality)**- समाधान में जो तकनीक या उपागम प्रयुक्त किया जा रहा है यदि उससे समाधान नहीं मिल पा रहा है तो उसे छोड़कर कोई अन्य और भी प्रभावकारी विधि का उपयोग करना चाहिए। व्यवहार को रूढ़िवादी बनने से बचाना चाहिए। आवश्यकतानुसार मानसिक विरचनाओं का भी सहारा लेना चाहिए। ऐसा करना समायोजन में सहायक होगा।

7. सामाजिक अवलम्बन **(Social Support)**- यदि समस्या का समाधान अपने स्तर पर संभव नहीं हो पा रहा है तो अन्य लोगों से सलाह लेना चाहिए। इससे समस्या पर विभिन्न दृष्टिकोण से विचार होगा और समाधान की संभावना बढ़ेगी। विशेषकर अनुभवी एवं विशेषज्ञ व्यक्तियों से निर्देशन तथा सुझाव प्राप्त करना चाहिए। इसमें संकोच या झिझक के आड़े नहीं आने देना चाहिए।

8. सापेक्षिक निर्णय **(Relative Decision)**- कभी-कभी बालक या वयस्क लोग भी इस कारण निर्णय नहीं ले पाते हैं क्योंकि उन्हें जो लक्ष्य मिल सकते हैं वे समान आकर्षण या समान

विकर्षण के हो सकते हैं। इससे उनमें द्वन्द्व का प्रादुर्भाव होता है और समाय¨जन की समस्या पैदा हो जाती है। ऐसी दशा में उपलब्ध लक्ष्यों के बारे में तुलनात्मक मूल्यांकन करके किसी एक का चयन कर लेना चाहिए या परित्याग कर देना चाहिए। जो सबसे अच्छा हो या जो सबसे कम हानिकारक हो, इस आधार पर निर्णय लेकर स्वयं को उलझन से बचाया जा सकता है।

9. वैकल्पिक लक्ष्य **(Alternative Goal)–** यदि पूर्व निर्धारित लक्ष्य मिलने की संभावना नहीं है तो तनाव से बचने के लिए यही उचित होगा उसका कोई विकल्प चुनकर काम चला लिया जाये। ऐसा करना उस दशा में बुद्धिमानी माना जायेगा। अन्यथा रूढ़िवादी मानसिकता से परेशानी से बढ़ेगी।

10. वस्तुनिष्ठ चिन्तन **(Objective Thinking)–** बालक या व्यक्ति को अपना चिन्तन तथा अपनी आकांक्षा को वस्तुनिष्ठ या वास्तविकता पर आधारित रखना चाहिए। देश, काल, परिस्थिति का ध्यान रखकर लक्ष्यों का चयन तथा व्यवहार करना चाहिए। अपनी आकांक्षा को अपनी योग्यता के ही अनुरूप रखना चाहिए। इससे अनावश्यक, कुण्ठा से बचा जा सकेगा। काल्पनिक दुनियाँ बसाने की योजना से बचना चाहिए। सफलता को न तो उछालना चाहिए और न ही उसे अन्य असंबंधित क्षेत्रों में प्रयुक्त करना चाहिए। आदर्श स्व तथा वास्तविक स्व में विसंगति से बचना चाहिए।

1. बच्चों को समझें

बच्चों के सबसे ज्यादा करीब उनके माता-पिता होते हैं लेकिन वक्त की कमी के कारण आजकल के अभिभावक बच्चों को वक्त नहीं दे पाते। इस वजह से माता-पिता बच्चे को ठीक से समझ नहीं पाते। अभिभावकों को जरूरत है कि वो बच्चों को समझें कि उनके गुस्से की वजह क्या है? अगर वो हिंसात्मक हो रहे हैं तो क्या ये क्षणिक है या फिर कोई मानसिक बीमारी? 15

दिन तक अपने बच्चे को देखें अगर फिर भी उसमें कोई बदलाव नहीं लग रहा तो किसी मनोचिकित्सक से संपर्क करें।

2. डॉक्टर की सलाह

कई बार अभिभावकों की अनदेखी के कारण बच्चे कब आक्रामक से हिंसात्मक हो जाते हैं पता ही नहीं चलता। इसलिए अगर बच्चे में किसी भी तरह की आक्रामकता दिख रही है चाहें वो जानवरों के प्रति या किसी निर्जीव चीज के प्रति ही क्यों ना हो। उसे किसी अच्छे डॉक्टर को दिखाएं और अगर ये अटेंशन डेफिसिट हाइपर एक्टिविटी डिसॉर्डर की वजह से है तो तुरंत इसका इलाज शुरु करें।

3. बच्चों की काउंसलिंग करें

कोलंबिया की वरिष्ठ मनोचिकित्सक जो मेसन के मुताबिक बच्चों के आक्रामक व्यवहार को देखने पर अभिभावकों को फौरन उनकी काउंसलिंग करनी चाहिए। वे कहती हैं- "बच्चों के नींद से जागने के बाद उनके पास रहना, उनके साथ लंच या डिनर करना, बच्चों के क्रियाकलापों में उनके साथ भाग लेना अभिभावकों के लिए बहुत आवश्यक है।"

4. शिक्षक से बात करें

पैरेंट-टीचर मीटिंग के अलावा अपने बच्चे के शिक्षक से अकेले में बात करें। उसके व्यवहार पर शिक्षक की राय मांगे। माता-पिता के अलावा शिक्षक ही हैं जो बच्चों के सबसे ज्यादा करीब होते हैं।

5. बच्चों के सामने झगड़ें नहीं

परिवार में झगड़ा, खासकर हिंसात्मक लड़ाई बच्चों पर बहुत बुरा असर डालती है। बच्चे माता-पिता और अपने आसपास के लोगों को देखकर ही बड़े होते हैं और उनके गुण अपनाते हैं। ऐसे में अगर उनके सामने हिंसा का प्रदर्शन होगा तो उनमें भी हिंसात्मक व्यवहार विकसित होने की आशंका बढ़ जाती है।

किशोरावस्था जैसा कि विभिन्न विद्वाओं ने भी इसे संझावातों, आक्रामक परिस्थिति की जननी आदि विभिन्न रुपों में बताया है। इस अवस्था में छात्र/छात्राओं में विभिन्न प्रकार की आक्रमक स्थितियां दस्तक देने का प्रयास करती है। परन्तु यदि किशोर-किशोरियों को उचित मार्ग दर्शन एवं नैतिकता का समय-समय पर मान कराते रहा जाय तो वे निश्चित रुप से आक्रामकता से दूर रहेगे। बच्चों को आक्रामक परिस्थितियों से बचाने हेतु निम्नांकित बातों का अनुपालन आवश्यक हो जाता है।

1-माता पिता एवं शिक्षक बच्चे के असली अभिभावक होते है। यही लोग बालको के रोल मा◌ॅडल होते है। प्रत्येक बालक/बालिका अपने माता पिता एवं शिक्षक-शिक्षका के अनुरुप बनना चाहता है। ऐसे में यह आवश्यक हो जाता है कि प्रत्येक माता-पिता तथा शिक्षक को चाहिए कि वे बालक-बालिकाओं के साथ सहानुभूति पूर्ण व्यवहार एवं स्नेहपुर्ण वर्ताव करें ताकि बच्चे उनको सम्मान की दृष्टि से देखे और सदैव उनका अनुसरण करें।

2-कतिपय छात्र/छात्राओं में कभी-कभी मानसिक अवधारण विचलित होने लगती है ऐसे में उन्हे विभिन्न प्रकार की वैचारिक गतिविधियां से रुबरु कराना चाहिए। इसके लिए बच्चों के बीच समज्जस्य पूर्ण वातावरण में स्वस्थ वैचारिक मानसिकता के साथ वाद-विवाद प्रतियोगिताएं आयोजित करके उनमें नैतिक बोध का प्रसार किया जाना चाहिए।

3-प्रत्येक शिक्षक को चाहिए कि वह अपनी दैनिक शिक्षण की प्रक्रिया में कक्षा-शिक्षण के दौरान छात्र-छात्राओं से आत्मविभोर होकर पूरी आत्मयिता से बच्चों से संवाद स्थापित किया जाय। शिक्षण विधियों में रोचकता होनी चाहिए जिससे छात्र-छात्राओं में सीखने की उत्सुकता विकसित हो।

4-छात्रों में रुचि जागृति करने के लिए अध्यापकीय व्यक्तित्व का प्रभाव सबसे अधिक कार्य करता है। छात्र-छात्राएं जिन अध्यापकों को पसन्द करते है वे उनकी बातों, क्रियाओं को बहुत ही ध्यान देते है। अतः अध्यापकों को चाहिए कि वे अपने छात्रों के प्रति सदैव संवेदनशील बने रहे और उनका ज्ञानवर्धन करते रहे।

5-मानवीय समाज को इस प्राकृतिक वातावरण में सबसे सभ्य औश्र सुस्कृत माना जाता हैं, परन्तु विभिन्न परिस्थितियों के उत्पन्न हो जाने से कतिपय अभावों से त्रस्त मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अपने लोभ, मोह एवं स्वार्थ के वशीभूत होकर वैध-अवैध मार्ग पर चलकर अपने ही समाज में अव्यवस्था उत्पन्न कर डालाता है। ऐसे में समाज के प्रबुद्ध वर्ग को चाहिए कि वे युवाओं को समय-समय पर काउसिंलिगं के माध्यम से अथवा विभिन्न कार्यशालाओं के माध्यम से उन्हें पथभ्रस्ट होने से बचाने में मदद करने का प्रयास करें।

6-कभी-कभी ऐसी स्थिति बन जाती है जब विद्यालय शिक्षक या पर्यवेक्षक कुछ चीजों के पक्ष में तथा अन्य के विरोध में होते है तब नैतिक तत्व उभरकर सामने आते है। बावजूद इसके हम यह स्वीकार करते है हमारे विद्यालयों में मूल्यों अथवा मूल्य विषयक समस्याओं पर क्रमवद्ध रुप से स्पष्ट चर्चा शायद नियमित रुप से नही हो पाती है। अतः आवश्यकता अनुसार विद्यालयों में उक्त से सम्बन्धित चर्चा-परिचर्चा आधारित कार्यशालाए समय-समय पर आयोजित होती रहें।

7-प्रत्येक युवा अपने मूल्यों के निर्माण का स्वयं उत्तरदायी होता है। वह विभिन्न प्रकार के निर्णय स्वयं लेता रहता है। प्रत्येक माता-पिता अपने बच्चों को परम्परागत मूल्यों के प्रति आस्थावान वना सकते है परन्तु ऐसा करते समय उन्हे अन्ध प्रयत्नों को प्रोत्साहन देने से बचना होगा।

8-माता-पिता द्वारा बच्चों को सदैव इस प्रोत्साहित करते रहना चाहिए कि वे समकालीन परिस्थितियों में परम्परागत मूल्यों को व्यावहारिकता निरन्तर चिन्तन करते रहे रहे तथा पुरातन मूल्यों को स्वयं के लिए पुनः सृजित करने का प्रयत्न करें।

9-आधुनिक पर्यावरण में सामाजिक ढांचा बदलता हुआ प्रतीत हो रहा है। आजकल कतिपय विद्यालयों में शिक्षण प्रक्रियाओं में दुशग्रत दृढता पूर्वक फैलता जा रहा है। विभिन्न प्रकार की विज्ञापन सम्बन्धी गतिविधियों से प्रभावित होकर छात्र एवं उनके अभिभावक ऐसी संस्थाओं के आकर्षित हो जाते है। ऐसी संस्थाओं से छात्र-छात्राओं को सजग होने हेतु उनमें चेतना विकसित किये जाने की आवश्यकता है।

10-बच्चों को स्वतंत्रता प्रदान की जानी चाहिए परन्तु स्वच्छन्दता कदापि नहीं। माता-पिता द्वारा बच्चों पर मूल्यों को थोपने का प्रयास नही किया जाना चाहिए उन्हें बच्चों को स्वयं मूल्यों के अनुरुप आचरण उत्पन्न करने हेतु प्रेरणा प्रदान करती रहनी चाहिए ताकि बच्चों के अन्दर श्रेष्ठ नैतिक मूल्यों का विकास हो सके।

11-जनसंचार माध्यमों रेडियों, दूरदर्शन, मोबाइल आदि माध्यमों द्वारा विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम समय-समय पर प्रसारित होते रहते है। इन कार्यक्रमों में, पर्यावरणीय समस्याएं, शैक्षिक कार्यक्रम, नाटक, सीरियल, कृषि सम्मेलन, समाचार, समाचार, सामाजिक मुद्दों से सम्बन्धित कार्यक्रम आदि प्रमुख है। माता पिता एवं अभिभावको को चाहिए कि वे उपर्युक्त कार्यक्रमों पर परिवार के सदस्यों

के बीच समय-समय पर स्वस्थ परिचर्चा करते रहे ताकि बच्चों में कार्यक्रमों के प्रति संवेदनशीलता बनी रहे।

12-सभी हितचारको को चाहिए कि वे बच्चों में मूल्य विश्लेषण, स्पष्टीकरण एवं चिन्तन के प्रति सजगता की भावना को विकसित करने हेतु प्रेरित करते रहे ताकि बच्चे उक्त से सन्दर्भित गोष्ठी, कार्यशाला आदि में सक्रिय रुप से प्रतिभाग करते हुए मूल्यों को उचित स्वरुप प्रदान कर सके।

13-माता-पिता प्रातः बालक-बलिकाओं से उत्तम शैक्षिक एवं नैतिक गुणों से परिपूर्ण होने की आकांक्षा पाल लेते हैं जबकि ऐसा किया जाना अथवा इन अपेक्षाओं पर सभी बालक-बालिकाओं का खरा उतरना सम्भव नहीं है। अतः प्रत्येक माता-पिता बच्चों को ऐसे मूल्यों पर आधारित आचरणों को करने के लिए विषश नहीं करना चाहिए जिनमें उनकी आस्था कदापि न परिलक्षित होती है।

14-बालकों में नैतिक गुणों के विकास का प्रमुख दायित्व माता पिता तथा परिवाद के अन्य सभी सदस्यों का होता है। माता-पिता अथवा अभिभावक ही अपने बच्चों को समय-समय पर नैतिक शिक्षा के लिए मार्गदर्शन दे सकते है। परिवारों का उनके बालकों तथा उनके पालन-पोषण पर गहरा प्रभाव पड़ता हैं। यह वह प्रारम्भिक पाठशाल है जहाँ से बालक को नैतिक अथवा चारित्रिक मूल्य और संस्कार प्राप्त होते है जो आगे चलकर उसके विकास को उचित दिशा या मार्गदर्शन प्रदान करते है।